।। ॐ श्री विश्वेश्वराय नमः।। ॐ श्री रामलाल प्रभवे नमः।। ॐ श्री चन्द्रमोहन सद्गुरुवे नमः

सद्गुरुदेव

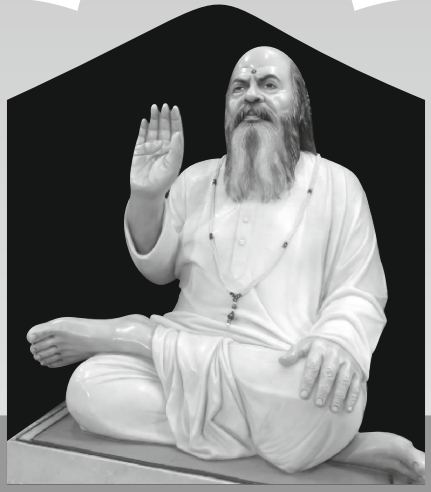

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्तविभूषित सद्गुरुदेव
योगीराज श्री चन्द्रमोहनजी महाराज के
स्वहस्त लिखित विशेषलेख
यौगिक प्रश्नोत्तरी एवं योगेश्वर चरित्रमाला

योगेश्वर चरित्र-माला

अवधूत श्री केशवानन्द जी महाराज

लगभग सन् १९३४ की बात है ऋषिकेश की झाड़ियों में एक महात्मा निवास करते थे। उनका पवित्र नाम श्री केशवानन्द जी अवधूत था। हमारे शास्त्र का सिद्धान्त है :—

कायेन्द्रिय सिद्धिरशुचिक्षयात् तपसः।

अर्थात् निरन्तर तपस्या करने से योगी को कायिक और ऐन्द्रिय सिद्धि उपलब्ध होती है। कायिक सिद्धियों से अभिप्राय हैं शरीर का वज्रकाय आदिक के अन्दर परिवर्तित हो जाना। और ऐन्द्रिय सिद्धियों का अभिप्राय है :—

दूर दर्शन— अर्थात् हजारों करोड़ों कोस दूर तक की बातों को देखना। दूर स्पर्शन-लोक लोकान्तरों को एक जगह ही बैठे स्पर्श करना, दूर श्रवन— दूर देशों की बातों को एक जगह बैठे ही सुनना। दिव्य घ्राण— लोक लोकान्तरों की दिव्य गन्धों को ग्रहण करना। दिव्य रसास्वाद-दिव्य देव लोक आदि के रसों को यहाँ बैठे ही ग्रहण करना आदि आदि सब ऐन्द्रिय सिद्धि कहलाती हैं। अवधूत केशवानन्द जी महाराज अपने समय के एक महान तपस्वी थे। उनका शरीर बड़ा दिव्य था। साधारण दर्शक लोग कोई पहचान नहीं सकते थे कि इस महान् आत्मा के शरीर में क्या तेज भरा हुआ है। अवधूत केशवानन्द जी अधिकांश में गंगा तट पर ही निवास करते थे। गर्मियों के दिनों में वह ऋषिकेश में ही निवास करते थे। ऋषिकेश की झाड़ियों में उनकी कुटिया अभी तक भी बनी हुई है। उनके शिष्य-प्रशिष्य उस जगह का उपयोग कर रहे हैं। अवधूत जी अपनी तीव्रतम तपश्चर्या के साथ परम-स्वाध्यायशील भी थे। हमें योग दर्शन बतलाता है :—

स्वाध्यायादिष्ट देवता संप्रयोगः।

अर्थात् स्वाध्याय के बल से मनुष्य को इष्ट देवता के दर्शन होते हैं। इसके अतिरिक्त स्वाध्याय की जैसी प्रगति हो उसके अनुसार ये ऋषि लोग, देवता लोग, और सिद्ध लोग, स्वाध्यायशील व्यक्ति पर अपना अनुग्रह प्रदान करते हैं। श्री अवधूत जी ने अपने जीवन को शास्त्रीय कसौटी पर बिल्कुल पूरी तरह कस लिया था। उनके जीवन में सिद्धियों का दिव्य विकास हुआ। दिव्य-दर्शन दिव्य-श्रवण, परचित्त-ज्ञान आदि आदि शक्तियें इनके सम्पर्क में रहने वाले व्यक्तियों ने अधिकांश में अनुभव कीं।

मुझे श्री अवधूत केशवानन्द जी के दर्शन का दो-तीन बार सुयोग प्राप्त हुआ और उसका विशेष कारण मेरे आदरणीय भाई श्री ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी थे। श्री ब्रह्मचारी जी कों परमानन्द कंद गुरुदेव प्रभु रामलाल जी महाराज की अनुकम्पा से संप्रज्ञात योग की उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त थी। उनका ध्यान योग विवेक ख्याति की ओर था। उनके स्वभाव में एक बात आ चुकी थी कि ''मैं अपने ध्यान योग के द्वारा क्या कर सकता हूँ। मेरी कितनी शक्ति है। इसका परीक्षण वे समय समय पर किया करते थे। उन्होंने अपने जीवन में कई एक सन्तों से कई प्रकार के दिव्य साधन प्राप्त किये। कई छुपे हुए महापुरुषों को अपनी आन्तरिक अनुभूति से पहचाना और प्रत्यक्ष में उनके पास जाकर उनसे अपना सम्पर्क बढ़ाया। अपने इसी स्वभाव के अनुसार श्री ब्रह्मचारी जी के मन में यह भावना पैदा हुई कि वह यह जानें कि इन गंगातट की पवित्र झाड़ियों के अन्दर काषाय वस्त्र धारण करने वाले संन्यासियों के समूह में कौन किस प्रकार का महापुरुष है जिसको दिव्य दृष्टि प्राप्त हो और दूर दर्शन, दूर श्रवण आदि अनायास ही होते हैं। श्री ब्रह्मचारी जी उन दिनों कृष्णा गली नं. २ योग साधन आश्रम लाहौर के आचार्य थे। और वहाँ पर योग साधन शिक्षण का कार्य किया करते थे। जेठ की गर्मियों में ऋषिकेश भ्रमण के लिये व आनन्द कन्द गुरुदेव योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी के दर्शनार्थ यह ऋषिकेश आये हुए थे। श्री ब्रह्मचारी जी मुझसे बहुत प्रेम रखते थे। और मेरे मन में भी उनके प्रति उत्कृष्ट आदर भावना थी। श्री ब्रह्मचारी जी ने लाहौर से आकर के श्री प्रभु जी के दर्शन, सम्भाषण के उपरान्त सायं समय मुझ से कहा— भैय्या चन्द्रमोहन चलों गंगा तट का भ्रमण कर आयें। श्री प्रभुजी ने उनकी बात का अनुमोदन किया और प्रसन्नता से आज्ञा दी घूम आओं। गोपालानन्द लाहौर से आया है। इसकी घूमने फिरने की इच्छा होगी दोनों भाई साथ चले जाओ और घूम आओ। श्री प्रभुजी की इस प्रकार आज्ञा प्राप्त हों जाने के बाद मैं और भाई श्री ब्रह्मचारी जी गंगा तट पर चन्द्रेश्वर महादेव के सामने झाड़ियों के निकट वाले नाले के पास में निकली हुई रेतिया में जाकर बैठे। चन्द्रमा की चांदनीं थी रात्रि का लगभग साढ़े आठ बजे का समय था। ब्रह्मचारी जी ने मुझसे कहा कि भाई तुम बैठे रहो और मैं थोड़ी देर ध्यान में बैठ कर यह देखूं कि इन झाड़ियों में कोई दिव्यदृष्टि वाले महापुरुष हैं या नहीं। श्री ब्रह्मचारी जी केवल १५ ही मिनट समाहित चित्त हुए ही होंगे कि उन्होंने उठकर बतलाया कि इन झाड़ियों में एक महापुरुष निवास करते हैं, जिन्होंने अपनी उग्र तपश्चर्या एवं स्वाध्याय के बल से अपने आपको परमश्रेय का भागी बना लिया है। वह अपनी उग्र तपश्चर्या के साथ-साथ किसी मंत्र का जप भी करते हैं जिसके फलस्वरूप उनका अन्तः करण कृष्णमय हुआ जा रहा है। ब्रह्मचारी जी ने यह इच्छा की कि वह अवधूत केशवानन्द जी के स्वरूप में अपने आपको विलय करके यह जान लें कि वह किस मंत्र का जाप कर रहे हैं। हम अपने पिछले एक लेख में यह बता

चुके हैं कि संयम सिद्ध योगी जब परचित्य ज्ञान प्राप्त करना चाहता है तो वह यह देख लेता है कि इसका चित्त किस अवलम्ब में है। किन्तु वह चित्त किस विषय का चिन्तन कर रहा है यह जानने के लिये योगी को दुबारा समाधि लगानी पड़ेगी। और वह उसके अनुरक्त चित्त को देखेंगे कि वह किस चिन्तन में में है। इसी नियम के अनुसार श्री ब्रह्मचारी जी ने अवधूत केशवानन्द जी के चित्त को कृष्णमय देखा और यह भी जान लिया कि वह किसी मंत्र का अनवरत जाप कर रहे हैं, जिसके फलस्वरूप श्री कृष्ण में लय होते जा रहे हैं। किन्तु फिर भी उनकों इस बात की आवश्यकता रही कि वह यह जान लें कि श्री अवधूत जी किस मंत्र का जाप करते हैं। इसी बात को जान लेने के लिये श्री ब्रह्मचारी जी ने पुन: समाधि लगाई और श्री अवधूत जी के कृष्णानुरक्त चित्त को अपने संयम का विषय बनाया। किन्तु वह उसमें सफल नहीं हो सके। श्री ब्रह्मचारी जी ध्यान से उठ गये, और हम दोनों लौट कर आश्रम पहुँच गये। श्री प्रभुजी ने गंगा तट की यह सब बातें जान लीं और ब्रह्मचारी जी की इस आदत को अच्छा नहीं समझा किन्तु श्री ब्रह्मचारी जी के मन में यह लगन थी कि वह अवधूत जी के पास दुबारा जायें और जिस मंत्र को वह जप रहे थे उसको उनसे प्राप्त कर लें। हुआ भी ऐसा ही। दूसरे दिन प्रात: काल ही श्री ब्रह्मचारी अवधूत जी के पास गये, मैं स्वयं भी उनके साथ ही गया। श्री अवधूत जी ने भी ब्रह्मचारी जी की रात वाली हरकत को अच्छा नहीं समझा और ब्रह्मचारी जी कों स्पष्ट उपदेश दिया कि जिनकी चरण-शरण तुम्हें मिली है वह सब प्रकार से परिपूर्ण एवं सर्व समर्थ है। उनकी कृपा को पाकर तुम्हें इधर-उधर भटकना नहीं चाहिये। हमें तो यह बड़ा भारी आश्चर्य होता है कि इतने बड़े महापुरुष जो हिमालय की कन्दराओं को कभी छोड़ते नहीं हैं वह यहाँ कैसे आ गये। तुम लोगों को चाहिये कि मौका हाथ से न खोओ। उनकी तन मन से सेवा करो और कृतार्थ हो जाओ। यह तुम्हारा स्वर्ण अवसर है जो किसी भाग्यवान को ही मिलता है।

योगेश्वर चरित्र-माला

अवधूत योगी अगड़धत्ता

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

बाल्यकाल से मेरी प्रवृत्ति श्री वृन्दावन धाम के दर्शनों की अधिकाधिक रहा करती थी। अत: अपने अध्ययन काल में भी यथा-सम्भव अवकाश मिलने पर मैं प्राय: वृन्दावन जाता ही रहता था। अपने अध्ययन काल में अमृतसर में रहते हुऐ भी मैंने एक बार एकान्तवास किया था। उस एकान्तवास के समय मैंने अपनी दिलचस्पी कुछ इस प्रकार की बनाई थी— कुछ घण्टे मंत्र जप किया करता था, और उसके बाद थोड़ी देर ध्यानाभ्यास करता था। अपने अध्ययन-काल में मैंने उपनिषद् में एक श्लोक पढ़ा था।

स्वाध्यायाद्योगमासीत्,
योगात् स्वाध्याय: मामनेत्।
स्वाध्याययोग सम्पत्या,
परमात्मा प्रकाशते।।

इसके अर्थ पर मैंने अपने मन में मनन किया और इसी निष्कर्ष पर पहुँचा था। इसी के फलस्वरूप मंत्र जप को स्वाध्याय और ध्यानाभ्यास को योग समझ कर इस प्रकार का कार्यक्रम बनाकर निरन्तर अभ्यास करता रहा। स्वाध्याय और योग के फलस्वरूप मुझे आनन्दकंद योग-योगेश्वर सद्गुरुदेव प्रभु रामलाल जी महाराज के दर्शन, ऋषिकेश में प्राप्त हुए। श्री प्रभु जी के, दर्शनान्तर मेरे मन में विरक्ति के भाव कुछ अधिक मात्रा में विद्यमान रहने लगे। फलत: श्री वृन्दावन धाम का मेरा यातायात और अधिक मात्रा में बढ़ गया। श्री वृन्दावन-धाम के निवास काल में मैंने कई एक अनुष्ठान किये और उन अनुष्ठानों के फलस्वरूप समय समय पर अनेक महात्माओं के दर्शन मुझे होते रहे। महात्माओं के दर्शन को मैं अपने स्वाध्याय एवं श्री प्रभुजी की कृपा का फल समझता हूँ, जिन भी अनुभवी-महात्माओं के दर्शन मैंने प्राप्त किये हैं, उन सभी ने अपने मुखारविन्दु से हमारे सद्गुरुदेव योग-योगेश्वर श्री प्रभुजी की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि जो दिव्य दृष्टि वाले अनुभवी महात्मा होते हैं वे अपनी ध्यान शक्ति से किसी भी व्यक्ति की वास्तविकता पहचान जाया करते हैं। अत: जो कृपामय वास्तव में स्तुत्य हैं, त्रिभुवन वंदित हैं, अपार शक्तियों के स्वामी हैं। शुद्ध ज्ञान स्वरूप हैं, ऐसे श्री प्रभुजी की स्तुति कौन नहीं करेगा? जिसने भी उनकी वास्तविकता की जरा सी झलक पाई है, उसी ने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। मुझे दर्शन देने वाले अनुभवी महात्माओं ने भी अन्त में यही कह कर अपने भाव व्यक्त किये— उन सर्वशक्तिमान् सर्व समर्थ प्रभु की असीम शक्ति का कौन वर्णन कर सकता है। तुम्हारे बहुत बड़े भाग्य हैं, जो ऐसे महान योगेश्वर्य-सम्पन्न सम्पूर्ण शक्तियों के स्वामी श्री सद्गुरु देव के रूप में प्राप्त हुये हैं। इसी प्रकार के महात्माओं में से एक बिल्कुल विरक्त महात्मा का चरित्र मैं यहाँ दे रहा हूँ।

उन वीतराग महात्मा का नाम अवधूत योगी अगड़धत्ता है। अगड़धत्ता जी देखने में अनपढ़ से दिखाई देते थे, परन्तु अन्तर्जगत में इनका बहुत ऊँचा प्रवेश था। यह मैंने भली प्रकार पहिचान लिया था। इतनी ऊँची स्थिति होते हुए भी यह बिल्कुल साधारण रूप से रहा करते थे। साधुओं जैसा कोई आडम्बर उनके शरीर पर दिखाई नहीं देता था। उनका मुख मंडल अत्यन्त तेजस्वी और दैदीप्यमान था। सिर की जटायें काफी श्वेत थीं। सारे शरीर पर तीन कम्बल लपेटे रहा करते थे। एक कम्बल कटि प्रदेश में, अर्थात् धोती की तरह लपेटते थे। दूसरा स्कन्ध प्रदेश में और तीसरा कम्बल सिर पर ताज की आकृति बना कर ओढ़े रहा करते थे। किससे भी किसी प्रकार की बात-चीत नहीं किया करते थे। हर समय स्वयं में ही विचार मग्न से कहीं भी बैठे रहते थे। मेरा इनका प्रथम सम्पर्क बरसाने के गहवर वन में हुआ था। हर समय इनके साथ रहा, परन्तु कभी भी इनको कुछ खाते नहीं देखा। कदाचित इनके दैदीप्यमान मुख मंडल को देखकर कोई गृहस्थ इनके खाने पीने का अनुरोध करता, तो प्रथम तो कोई उत्तर नहीं नहीं देते थे यदि बोले भी तो खाने-पीने का निमंत्रण अस्वीकार कर देते थे। फिर भी यदि दुराग्रह करने का कोई साहस करता तो बड़े कड़े शब्दों में ताड़ना देते थे। क्यों रे तुझे यह क्या सूझी है? क्या तु मुझे मारेगा?

उसके बाद श्री वृन्दावन धाम में अनेक बार इनके साथ रहने का अवसर हुआ। उनके मुख से निकले उपर्युक्त शब्द मैंने कई बार सुने। एक दिन अवसर पाकर मैंने पूछा- महात्मा जी आप यह क्या कहा करते हैं? किसी व्यक्ति के द्वारा खिलाने-पिलाने के आग्रह किये जाने पर आप कह देते हैं— क्यों रे तू हमें मारेगा। तो क्या खाने से ही मनुष्य मर जाता है? हमारी जिज्ञासा शान्त करने के लिये उन्होंने हमें समझाकर बतलाया था— हाँ भाई संसार में दो ही प्रकार के व्यक्ति मरते हैं। जो खाता है, वह मरता है और जो सोता है वह मरता है। जो संसार में आकर खाना-पीना और सोना त्याग देता है। वह काल से परे हो जाता है अर्थात् वह मृत्यु पर विजय प्राप्त करके अमर हो जाता है। उस समय उनकी यह बातें मेरी समझ में नहीं आतीं थीं परन्तु कालान्तर में ज्यों-ज्यों इस मार्ग में मेरा प्रवेश अधिक हुआ तब उन बातों की सार्थकता को मैंने समझा। वस्तुत: तत्व विजयी ही महापुरुष है। जो खेचरी और भूचरी आदि मुद्राओं के ज्ञाता होते हैं वे लोग तमकी वृत्ति निद्रा और स्थूल रूप से खाये जाने वाले आहार का बिल्कुल

परित्याग करते हैं और कालान्तर में अमरत्व का प्राप्त करते हैं। हिमालय में आज भी अनेकों ऐसे तत्व विजयी महात्मा सहस्रों वर्षों से बैठे हुऐ हैं जो न तो कुछ खाते पीते हैं और नहीं सोते और न ही मलमूत्र का परित्याग करते हैं। इसी प्रकार से महापुरुषों की श्रेणी में हमारे यह अवधूत योगी अगड़धत्ता जी कहे जा सकते हैं।

इनके साथ रह कर मैंने इन अवधूत के कई अलौकिक कार्य देखे हैं। एक बार श्री वृन्दावन में श्री बाँके विहारी जी के मंदिर के एक चबूतरे पर श्री अगड़धत्ता जी और दूसरे पर हम लेटे हुए थे। श्री बिहारीजी का मंदिर एकान्त स्थल पर नहीं है। प्रत्युत उस के दोनों ओर बाजार है। मंदिर की थोड़ी दूर पर किसी दुकान पर कोई रोगी दारुण दुख से चिल्ला रहा था। अवधूत योगी जी मुझसे कहने लगे ''अरे ब्रह्मचारी! इसका रोना बन्द कर दो यह तो हमारी एकाग्रत में बड़ा विघ्न डाल रहा है हमने उनसे कहा, महात्माजी आप ही इसका रोना क्यों नहीं बन्द कर देते? मेरा ऐसा कहने पर लेटे हुए ही वहीं से एक फूंक मारी। उस मुख से फैकी गई वह वायु बिजली के समान चमक कर उस रोगी पर लगी और तत्काल ही वह शान्त होकर सो गया। उस मनुष्य को कोई कष्ट नहीं रहा। प्रात:काल उस दुकानदार से पूछा गया कि उस रोगी को क्या कष्ट था? उसने बतलाया उसको बहुत तीव्र उदर पीड़ा थी, जिस कारण वह चिल्लाता था, परन्तु पता नहीं कैसे रात्रि को लगभग १२ बजे यह स्वत: ही बिल्कुल ठीक हो गया और सो गया।

अवधूत योगी अगड़धत्ता जी विचित्र प्रकार के कार्य किया करते थे, जिनका रहस्य जल्दी समझ में नहीं आया करता था। एक बार उन्होंने श्रीवृन्दावन के दुकानदारों से जल मांगना आरम्भ किया। वह प्रत्येक दुकानदार के पास जाकर के कहते थे क्योंरे! तेरे पास ठन्डा जल है? यह वह हाँ'' कहता तो थोड़ा सा जल वहाँ पीकर चल देते थे और फिर अगली दुकान पर जाकर इसी प्रकार जल मांगा करते। इस प्रकार श्री वृन्दावन की अनेकों दुकानों से लेकर उन्होंने जल पीया हर दुकान पर जल पीने के बाद कहते- नहीं यह जल ठीक नहीं है। इसी प्रकार करते करते वे रेतिया बाजार में एक हलवाई की दुकान पर पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर सदा की भाँति कहने लगे— क्यों रे तेरी दुकान पर ठन्डा जल है? अन्य दुकान वालों की तरह हलवाई ने महात्मा जी की आवभगत न करके बड़े रुखे एवं कड़े शब्दों में नकारात्मक उत्तर देते हुए कहा— चल यहाँ से, तेरे जैसे बहुत देखे हैं, बड़ा आया कहीं से ठण्डा जल पीने वाला। यह ताड़ना पाकर अवधूत उस हलवाई से बोले- सारे वृन्दावन की दुकानों से जल पीने का हमारा कोई मतलब नहीं था। मैं तो तेरी ही दुकान का जल पीने आया था। तू कहता है कि हमारे जैसे बहुत देखे हैं, सो और कोई नहीं देखा होगा। आज बस हम ही देखे हैं। तेरी दुकान खूब चलती हैं, तेरे पास पैसा भी काफी हो गया है इसी कारण इतना अन्धा हो गया है कि तुझे कोई साधू महात्मा दीखता ही नहीं है। आज से तेरी दुकान में मक्खी ही मक्खी हो जायेंगी। फिर तुझे साधू महात्मा सब दीख उठेंगे। आज से तुम्हें सब दिखलाई पड़ा करेगा यह कर तुरन्त ही महात्मा जी वहाँ से चले गये।

उस दिन के बाद मैंने स्वयं उस हलवाई की दुकान पर इन वचनों का प्रत्यक्ष प्रभाव आश्चर्यजनक रूप में देखा। दुकान में मक्खियों की ऐसी भरमार हो गई कि लगता था मानो सारे वन्दावन की सारी मक्खियें इसी स्थान पर एकत्रित कर दी गई हों। महात्मा जी के इस कथन के बाद उस हलवाई की स्थिति बिल्कुल बिगड़ गई। लगभग एक या डेढ़ माह बाद जब हम वहाँ से निकल रहे थे तो वह हलवाई कहने लगा— महाराज जी, उस दिन आपके साथ जो महात्मा थे, वे मेरी दुकान में मक्खी ही मक्खी हो जाने का शाप दे गये थे। उसी दिन से यहाँ मक्खियाँ ही भिनक रहीं हैं। प्रथम तो मेरी दुकान से कोई कुछ खरीदता ही नहीं है और यदि कदाचित खरीद भी लेता है तो सौदे में मक्खियाँ देखकर वापस डाल जाता है। कृपा करके उनसे मुझे क्षमा दिलवाइये। मुझसे बड़ा अपराध हो गया जो क्रोध में आकर उनको अपशब्द कह दिये। श्रावण मास में हमेशा हजारों रुपये की आय इस दुकान से हो जाया करती थी, इस बार बिल्कुल खाली बैठे है। अन्य दुकान धड़ाधड़ चल रही हैं। परन्तु महात्मा जी के शाप से हमारी यह दुर्दशा हो गई है। हमारे भाग्य फूट गये हैं। किसी प्रकार से कृपा करके उनसे क्षमा प्रदान करा दीजिये। जो कुछ भी उनकी आज्ञा होगी, मैं वही करने को तैयार हूँ। हमें उस पर बड़ी दया आई और हमने उनकी प्रार्थना पर योगी अगड़धत्ता जी से कहा अब उस बेचारे को क्षमा कर दीजिये परन्तु उन्होंने स्पष्ट शब्दों में इन्कार करते हुए कहा उसको क्षमा नहीं किया जा सकता। उसने अपने जीवन में बहुत से महात्माओं का अपमान किया है। उसको इस अपराध का दण्ड देने ही तो हम उसकी दुकान पर पहुँचे थे। दुकान दुकान जल मांगने का हमारा प्रयोजन ही और क्या था?

कई मास उनकी यही दुर्दशा रही। अन्त में एक बार वह अत्यन्त आर्त भाव से अवधूत जी के चरणों में गिर पड़ा और गिड़गिड़ा कर क्षमा प्रार्थना करने लगा। उसके बहुत विनय करने पर उन्हें कुछ दया आ गई और कह दिया- जा, अब क्षमा कर देता हूँ। दुबारा किसी साधू का अपमान नहीं करना। इसी समय जाकर सौ रुपये गोशाला में दे आ। सुनते ही हलवाई में मानो जीवन आ गया। तत्काल दुकान पर पहुँचकर १०० रु. गौशाला में दे आया। उसी दिन से उसकी दुकान में परिवर्तन आ गया। कहीं मक्खियों की भरमार न रही एवं शैन: शैन: वह दुकान पूर्ववत् अपने विकास की स्थिति में पहुँच गई।

पूर्व प्रकाशित से आगे :-

योगेश्वर चरित्र-माला

अवधूत योगी अगड़धत्ता

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

अवधूत योगी अगड़धत्ता जी कभी-कभी कुछ अभिमान की बातें भी करते थे। उनके मन में धारणा थी कि सृष्टि में जो कुछ भी हम करना चाहें कर सकते हैं। सृष्टि का सृजन, पालन एवं विनाश का काम हमारे द्वारा ही चल रहा है। अत: वह किसी भी महात्मा, साधु आदि की विशेष परवाह नहीं किया करते थे। मेरे सद्गुरुदेव योग योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज का कई बार उनके सामने वर्णन आता था। परन्तु वे बड़े उपेक्षित ढँग से उसे सुनकर चुप कर जाया करते थे। एक दिन उन्होंने बड़े ही अहंकार से कहा- भाई ब्रह्मचारी हम चाहें तो तुम्हारे गुरुजी को भी अभी यहाँ खींच लें। सुनकर पहले तो हम मौन रहें। यह सोचकर कि बेचारे अवधूत जी हमारे प्रभु जी के स्वरूप को नहीं पहचानते हैं। हम समझते थे कि यह केवल उनका मिथ्या अहंकार ही है। परन्तु उनके बार बार उपर्युक्त शब्द दोहराने पर हमारे मन में भी कुछ तरंग सी आई। श्री प्रभुजी की सर्वसमर्थता का स्मरण कर मन उल्लास से भर गया और मैंने भी उनसे कह दिया- आप में यदि शक्ति है तो मेरे गुरुदेव को खींचकर दिखला ही दीजिए। उन्होंने कहा- ''बोलो सूक्ष्म से या स्थूल से।' निरक्षर से दीखने वाले अवधूत के मुख से ऐसे शुद्ध हिन्दी के शब्दों को सुनकर हमें बड़ा आश्चर्य सा हुआ। अपने आश्चर्य को दबाकर उनकी उस अभिमान भरी उक्ति के उत्तर में हमने कह दिया- सूक्ष्म से क्या खींचना? स्थूल रूप में हीं खींचकर दिखाइये जिससे सबको आकाश मार्ग से आते दीख जाँय कि यह कोई किसी योगिराज की शक्ति से खिंचे चले आ रहे हैं। किन्तु स्थूल रूप से खींचने को वे राजी ही न हुए और सूक्ष्म आकर्षण पर ही विशेष जोर देने लगे। 'दुर्जनतोषो' न्यायानुसार मैंने उनकी बात को हो स्वीकार करके कह दिया- अच्छा सूक्ष्म से ही सही। मेरा ऐसा कहने पर वह अवधूत जी सूक्ष्म आकर्षण के लिए तैयार हो गये।

श्री वृन्दावन के केसी घाट के सामने श्री यमुना जी की पवित्र बालुका में मैं और वह महात्मा दोनों ही ध्यानस्थ हो गए। वह प्रथम अवसर था जब कि उस गवाँर जैसे दीखने वाले अवधूत को अपने सूक्ष्म शरीर के चक्र बनाते मैंने देखा। योग-दर्शन में एक श्लोक आता है-

''**निर्माणचित्तान्यस्मितामानाद्**'' अर्थात् अस्मितानुग्रह समाधि लगाने वाला योगी अपने अनेक चित्तों का निर्माण कर सकता है वह सभी चित्त जिनको वह अपनी योग शक्ति से बनाता है, उसके प्रधान चित्त के अधीन रहा करते हैं। वे सबके सब निर्माणित चित्त जहां-जहां जिस जिस के पास जाते हैं, अपने प्रधानचित्त की प्रेरणा से सारे कार्य किया करते हैं। योगी अगड़धत्ता जी अपने निर्माणित चित्त के द्वारा ऋषिकेश चले। उनके साथ-साथ मेरा भी एक निर्माणित चित्त था जो उनकी वृत्ति को देखता जाता था। ऋषिकेश आश्रम पहुँचने पर साक्षात् परब्रह्म आनन्दकन्द श्री प्रभु जी के अखण्ड मण्डलाकर सर्व व्यापक तेज के दर्शन पर अवधूत जी को श्री प्रभुजी के सम्मुख जाना बहुत कठिन हो गया। फिर वे यथातथा कुछ साहस के साथ आगे बढ़ ही गये और फारसी भाषा में कुछ प्रश्न पूछे। श्री प्रभुजी ने उनके सभी प्रश्नों के उत्तर भी फारसी भाषा में ही दिए। अन्त में जगन्नियन्ता प्रभु जी ने उनको ताड़ना दी- लगाओ इसके ५ जूते। यह हमें खींचने की इच्छा करता है। श्री प्रभुजी के मुखारविन्द से निकले ऐसे शब्दों को सुनकर वह अवधूत योगी वहां क्षण भर भी न ठहर सके। तत्काल ही श्री वृन्दावन आ गए। हमारा निर्माणित चित्त भी उनके साथ-साथ वृन्दावन आ गया।

श्री चन्द्रमा की शीतल चांदनी चारों ओर खिली हुई थी। श्री यमुना जी की पवित्र बालुका में ध्यानस्थ बैठे महात्मा जी अट्टहास करने लगे और यह कहते हुए ध्यान से उठे, अरे भाई मरवा डाले होते। आज तो मरवा डाले होते। मैं भी ध्यान से उठ चुका था और श्री प्रभुजी की परात्पर शक्ति एवं इस अलौकिक लीला से हृदय आह्लादित हो रहा था। उसी लहर में मैंने उनसे कहा महात्मा जी, आप तो कहते थे कि हम तुम्हारे गुरु जी को खींच लेंगे। किन्तु यह क्या हुआ जो तुम स्वयं ही खिंच गए। हमारे मुख से ऐसे शब्द सुनते ही वह बहुत बिगड़कर कहने लगे। हमने तुमसे यह कब कहा था कि हम महाप्रभु जी को खींच लेंगे। जो सारे विश्व को खींचते है उन्हें हम कैसे खींच सकते हैं? हमने तो समझा था कि होगा कोई सधुआ-अधुआ उसे खींच ही लेंगे। तुम्हें पहले ही बता देना चाहिए था कि वे सर्वशक्तिमान महाप्रभुजी हैं। क्यों, तुमने यह बात हमें पहले की क्यों नहीं बताई? इस प्रकार कह कर उल्टा हमें ही धमकाने लगे। उपर्युक्त घटना के पश्चात् उन महात्मा जी की श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में अनन्य भक्ति हो गई, कई बार नंगे पैरों वह ऋषिकेश श्री प्रभु जी के दर्शनार्थ गए और अपने दु:स्साहस की बार-बार क्षमा-याचना की।

जब यह अवधूत जी श्री प्रभु जी के चरणों में पहुँचते थे उस समय दीन-मुद्रा में हाथ जोड़कर बैठ जाया करते थे। श्री प्रभुजी इनको देख थोड़ा-सा मुस्करा जाया करते थे, और तत्काल ही किसी आश्रमवासी भाई से कह कर प्रसाद दिला दिया करते थे। प्रसाद पाते ही अवधूत जी आश्रम से लौट आया करते थे।

इस घटना के बाद इन महात्मा जी का व्यवहार मेरे प्रति बदल गया था और मुझे बहुत आदर की दृष्टि से देखने लगे थे। श्री वृन्दावन के जंगलों में ८४ कोस ब्रज मण्डल के बनों में मैंने और उन्होंने एक साथ भ्रमण किया। नित्य भोजन का समय होने पर यह अपने मन में किसी भी व्यक्ति को कुछ खाद्य पदार्थ लाने की प्रेरणा कर देते थे और मुख से स्पष्ट शब्दों में कहा करते थे कि आज हमने फलां व्यक्ति को हुक्म कर दिया है, थोड़ी ही देर में वह व्यक्ति अमुक वस्तु लेकर उपस्थित हो जायेगा। और वास्तव में उनके कहने के थोड़ी देर बाद ही उनकी कही हुई वस्तु को लेकर वह व्यक्ति उपस्थित हो जाता था। उसके आने पर महात्मा जी बिल्कुल विरक्त एवं अनजान भाव धारण किए रहते थे। न उससे कुछ कहते ही थे। इस तरह वह व्यक्ति यह नहीं जान पाता था कि स्वयं महात्मा जी की प्रेरणा से ही वह यह वस्तु लेकर आया है। मैंने महात्मा जी से ऐसा करने का कारण पूछा– ''आप इस तरह प्रेरणा करके जो भोजन मंगाया करते हैं, उसके बजाय स्वयं उसके घर पहुँच कर प्रसाद क्यों नहीं पा लिया करते, बात तो वही है। भोजन तो उसका ही करना है।' तब इसका यह रहस्य उन्होंने बताया था कि सांसारिक व्यक्तियों से कभी भी साधू को सम्पर्क स्थापित नहीं करना चाहिए। यह लोग तरह तरह की कामनायें मन में रखकर ही साधुओं के दर्शन एवं उनकी किसी प्रकार की सेवायें किया करते हैं। यह गृहस्थी लोग समझा करते हैं कि यदि महात्मा जी ने उनकी कोई भी सेवा स्वीकार करली है तो अवश्य हमारी कामना पूरी कर देंगे। यह बात साधु महात्मा के लिए उचित नहीं हैं।

एक दिन दोपहर को हम और यह महात्मा जी राधाकुण्ड की ओर जा रहे थे। चलते–चलते दोपहर हो गया। लगभग १ बजने को आ गया। भोजन का समय प्राय: निकल चुका था। तब वह अवधूत जी मुझसे पूछने लगे क्यों ब्रह्मचारी जी भूख तो लगी ही है। उन्होंने तत्काल कहा अच्छा अभी प्रबन्ध करते हैं। इस गांव के पटवारी को हम हुक्म करते हैं वह मालपूये और पूड़ी तैयार करके रखेगा किन्तु बात इससे भी नहीं करनी है। इनके ऐसा कहने के बाद जब हम थोड़ा और आगे बढ़े तो गांव के ठीक किनारे सड़क पर वह पटवारी खड़ा मिला। हम दोनों को देखते ही हाथ जोड़कर कहने लगा महाराज अभी थोड़ी देर पहिले मेरे मन में सहसा यह भावना आई कि आज कोई महात्मा मिल जायं तो उनको अपने घर भोजन करा दूँ। बड़े भाग्य से आप दोनों मिल गए हैं। कृपा करके मेरे घर चलकर भोजन कीजिए। उसकी प्रार्थना पर जब हम उसके घर गए तो उसकी स्त्री छोटी कहाड़ी में मालपूये उतार रही थी और पूड़ी–सब्जी तैयार कर चुकी थी। मैंने जाकर भोजन किया और थोड़ी देर में अगड़धत्ता जी भी आ गए। उन्होंने भी थोड़ा प्रसाद लिया। भोजनोपरान्त गांव के बाहर एक वट वृक्ष के नीचे विश्राम करके सायंकाल राधाकुण्ड को चल दिए। हम इधर–उधर घूमते हुए रात को लगभग ११ बजे वहां पहुँचे। शहर के सब लोग सो चुके थे। कोई–कोई दुकान अब भी खुली हुई थी। योगी अगड़धत्ता जी पूछने लगे ब्रह्मचारी जो भूख तो लगी ही होगी। हमने कहा हां भाई भूख तो लगी ही हुई है। तो महात्मा जी कहने लगे देखो ब्रह्मचारी यहां पर एक ब्राह्मण रहता है और वह हलवाई की दुकान करता है। आज तक उसने किसी साधू महात्मा को कुछ नहीं खिलाया–पिलाया। हम अभी उसके सूक्ष्म को हुक्म करते हैं। थोड़ी ही देर में वह दो कुल्हड़ दूध लेकर आयेगा। हम तो उससे बात करेंगे नहीं तुम दूध ले लेना। थोड़ी देर में अवधूत के कथनानुसार ही घटना घटी। वह ब्राह्मण लगभग २ सेर के दो कुल्हड़ लेकर राधाकुण्ड पर आया। उसने बहुत विनय पूर्वक हाथ जोड़कर प्रार्थना की महाराज मैंने आज तक किसी भी साधू महात्मा को कुछ भी नहीं खिलाया–पिलाया है। आज अभी–अभी अकस्मात् दुकान पर बैठे–बैठे मेरे मन में यह भावना जागी कि यदि कोई महात्मा मुझे मिल जायं तो कम से कम आज उन्हें दूध तो पिला ही दूँ। बड़े भाग्य से आप दोनों मिल गए हैं। कृपा करके इस दूध को ही लीजिए। हमने उसके हाथों से दोनों कुल्हड़ दूध ले लिया। उस ब्राह्मण के चले जाने के उपरान्त हम दोनों ने वह दूध पी लिया। दूध पीने के पश्चात् अवधूत योगीजी कहने लगे–देखो, हम उपदेश देते हैं कि यह गृहस्थी प्राणी सांसारिक कामनाओं को लेकर आते हैं। अत: इनसे बात नहीं करनी चाहिए। हमने स्वयं प्रेरणा करके इससे दूध मंगवाया था। अत: इसमें इस ब्राह्मण की कोई भावना या त्याग नहीं हैं।

इसी प्रकार हम दोनों भ्रमण करते हुए एक दिन मानसी गंगा की ओर बढ़े। बातचीत का प्रकरण चलते–चलते परस्पर थोड़ा विमन–भाव हो गया। फलस्वरूप महात्मा जी खिन्न होकर दूसरे रास्ते से और हम दूसरे रास्ते से मानसी गंगा गए। मानसी गंगा पहुँचने पर हम और महात्मा जी एक चौबुर्जी पर बैठ गए। अवधूत ने पूछा– कहो ब्रह्मचारी भोजन किया। हमने कहा अभी तो नहीं किया। उनको उस दिन हमारे प्रति मन में बड़ा क्रोध था। उसी क्रोध में अपनी मानस–शक्ति को प्रत्यक्ष दिखलाने के लिए अपने हाथ ही अंगुली के संकेत के एक बन्दर को अपनी ओर बुलाया। पास आने पर हमारी ओर संकेत करके बन्दर तो ताड़नात्मक प्रेरणा की। उनकी प्रेरणा पाकर बन्दर बड़े वैग से हमारी ओर बढ़ा। मैंने तत्क्षण यह अनुभव किया कि योग योगेश्वर महाप्रभु का तेज हमारे हृदय में विद्यमान है। हमने मन में दृढ़ संकल्प के साथ बन्दर को वहाँ ही रुक जाने का संकेत किया। परिणामस्वरूप बन्दर को वहीं रुक जाना पड़ा। ऐसा देखकर अवूधत को बड़ी चिढ़ हुई और मिस–मिसा कर हमसे कहा तुम्हें पता भी है, यह किसने भेजा था? मैंने कहा नहीं। यह सुनकर महात्मा जी मनगढ़न्त बात कहने लगे, श्री प्रभु जी ने इसको ऋषिकेश से भेजा था। इसका कारण यह था कि तुमने मेरा मन दुखाया है। श्री प्रभुजी को अपने बड़े बच्चे के मन का दु:खी होना उचित नहीं लगा। अत: तुम्हें ताड़ना देने के लिए इस बन्दर को भेजा था। किन्तु मैंने अपनी मानस शक्ति से उसे रोक दिया है, अन्यथा तुम परेशान हो जाते। उसकी यह सारी बात बनावटी ही थी, सुनकर हमें मन में बड़ी हंसी आई। बन्दर को ताड़ना की प्रेरणा तो उसने स्वयं ही की थी। वह तो श्री प्रभुजी के कारण ही बन्दर को रुकना पड़ा था। अब वह हमसे अपने को अधिक शक्तिवाला सिद्ध करने के हेतु ही इन बातों का प्रपंच रच रहा था। मन में सब बात समझकर भी हमने मौन रहना ही उचित समझा।

इस घटना के बाद तो अवधूत जी के मन में श्री प्रभु जी के कृपामय चरणारविन्दों के प्रति महती श्रद्धा का उदय हुआ। बारबार उनके चरणों की वन्दना व अर्चना करने लगे। ऊपरी तौर से चाहे वह कुछ भी शब्द कह देते थे,

परन्तु वास्तविकता मन में समझते ही थे। उसके बाद कभी-कभी प्रसंग आने पर वह महात्मा अपने मुख से कहा करते थे- भाई, आनन्दकन्द कृपानिधि श्री प्रभु जी तो शुद्ध ब्रह्म है। उनकी शक्तियों का का पार कौन पा सकता है? वे तो परात्पर हैं। उनकों वही जान सकेगा, जिसको वह स्वयं अपना ज्ञान देना चाहेंगे। इस प्रकार स्तुति कर-कर के वह महात्मा प्राय: गद्‌गद् कण्ठ हो कर भावविभोर हो उठते थे। कई बार ऋषिकेश जाकर इस महात्मा ने श्री प्रभु जी के दिव्य दर्शन प्राप्त कर मानसिक शान्ति प्राप्त की और कृतार्थ हुए।

सन्त जनों के चरित्र को साधारण जन समझ नहीं पाते हैं, एवं उनकी विचित्र लीलाओं पर शंका करने लग जाते हैं। जैसे कि एक बार गोपियों को शंका हो गई थी। योग-योगेश्वर भगवान कृष्ण जी ने उनसे कहा था- यदि मैं बाल ब्रह्मचारी हूँ तो यमुना जी तुम्हें पार जाने का मार्ग दे देगी। उसी प्रकार महर्षि दुर्बासा को भोजन कराने के पश्चात् जब गोपियां वापिस चलने लगीं, तो दुर्वासा ने कहा था यदि मैं जन्म का निराहारी हूँ, तो यमुना जी तुम्हें मार्ग दे देगी। प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर गोपियों को दोनों ही वचन असत्य लगे थे, परन्तु यमुना जी के मार्ग दे देने पर विवश होकर विश्वास करना पड़ा था। उसी प्रकार अवधूत योगी अगड़धत्ता जी के चरित्र में भी विरोधाभास प्रतीत होता है। पहिले वास्तव में कभी भी मैंने उन्हें कुछ भी खाते-पीते नहीं देखा था। परन्तु बाद में भोजन करते, दूध पीते और वृक्षों के पत्ते खाते भी देखा था। यह उन की क्या लीला थी, कहा नहीं जा सकता। कदाचित वह मेरे सामने खाने-पीने का अभिनय करते हों। पर वास्तव में कुछ न खाते हों यह भी संभव हो सकता है। परन्तु यह निश्चय है कि वह पूर्ण विरक्त एवं योंगानुभवी सन्त थे एवं तत्वों पर उनका पूर्ण अधिकार था।

शिवलीन अवधूत श्री कृपालानन्द जी

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

ऋषिकेश से लगभग नौ मील ऊपर पुण्य तोया भागीरथी के पावन किनारे पर ब्रह्मपुरी नाम का पवित्र वन है। अपनी उत्तराखंड की यात्रा प्रारम्भ करने से पूर्व हमारे सद्गुरुदेव योग-योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज ने कुछ समय इस पवित्र वन में निवास किया था। उन्हीं दिनों अवधूत योगी श्री कृपालानन्द जी भी इस वन में रहा करते थे। अखण्ड मंडलाकार तेजयुक्त परम सिद्ध श्री प्रभुजी की वास्तविकता को वह पहचानते थे, अत: उनके प्रति कृपालानन्दजी के हृदय में स्वाभाविक ही अत्यन्त सम्मान एवं प्रेम का भाव उदय हो गया था। प्राय: वह श्री प्रभु जी के पास आकर ज्ञान-चर्चा किया करते थे।

आनन्दकन्द जगदात्मा भगवान् श्रीकृष्ण जी ने भगवद्गीता में युक्त योगी का लक्षण इस प्रकार कहा है-

ज्ञान विज्ञान तृप्तात्मा
कूटस्थो विजितेन्द्रिय:।
युक्त इत्युच्चते योगी
समलोष्टास्म कांचन:।।

श्री भ. गी. अ. ६-८

अर्थात् जिसका आत्मा ज्ञान-विज्ञान से परिपूर्ण है और जो बिल्कुल विकार रहित स्थिति में पहुँच गया है और सब प्रकार से इन्द्रिय जयी है- ऐसा युक्त योगी कहलाता है। ''ज्ञान विज्ञान तृप्तात्मा'' पद का तात्पर्य है। कि प्रकृति के सारे विश्लेषणों को समझ कर उन पर नियंत्रण प्राप्त करना अर्थात् संयम के बल से सकल सिद्धियों को प्राप्त करना और पूर्ण आत्म-साक्षात्कार करना। हमारे पूर्व आचार्यों ने योग विद्या की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए यह शब्द कहे हैं-

यस्मिन् ज्ञाते सर्व मिदं ज्ञातंभवित।

अर्थात् जिसके जान लेने पर सब कुछ जाना जाता है। इस महती विद्या के सकल ऐश्वर्य को प्राप्त करने के लिये योगचार्यो ने दो मार्गो का वर्णन किया है। उनमें से एक मार्ग औपनिषादिक सिद्धान्त का है जिसका वर्णन भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में इस प्रकार किया है-

इन्द्रियाणि पराण्याहु
इन्द्रियेभ्यो परं मन:।
मनसस्तु परा बुद्धि-
र्यो बुद्धे: परतस्तु स:।।

- श्री भ. गी. अ. ३१/४२

अर्थात् योगी पहले अपनी इन्द्रियों का साक्षात्कार करें, फिर मन का करें, उसके बाद बुद्धि का साक्षात्कार और तदनन्तर आत्म साक्षात्कार करें। किन्तु इस मार्ग में थोड़ी सी कठिनता है। क्योंकि इन्द्रियों का सूक्ष्म धर्म समझना कठिन है। और आत्मा-साक्षात्कार तो उससे भी बहुत आगे की वस्तु है। दूसरा मार्ग सर्व साधारण के कल्याणार्थ हमारे आचार्यों ने वह बताया जिस पर चलने से हर व्यक्ति अपना कल्याण कर ही सकता है। इस मार्ग का संकेत योगाचार्य भगवान् पतंजलि महाराज ने **''बीतराग विषयं वा चित्तम्''** कह कर किया है। अर्थात् वीतराग पुरुषों को हम अपना ध्येय बना कर उनके अहंकार में अपना अहंकार विलीन कर दें तो थोड़े समय में ही समाधि लाभ कर सकते हैं, उस स्थित में उनकी उपार्जित सिद्धियाँ हमारी अपनी होंगी और कालान्तर में उनके स्वरूप में लय हो कर हम कैवल्य-भाव को भी अवश्य प्राप्त हो जायेंगे।

अवधूत श्री कृपालानन्द जी इस दूसरे मार्ग के ही अनुयायी थे। उनके ध्येय थे भगवान् सदा शिव, अत: वह शिवलीन रहा करते थे। उपर्युक्त सिद्धान्त के अनुसार अवधूत श्री कृपालानन्द जी अपने मन, चित्त, बुद्धि और अहंकार को भगवान सदा शिव के मन, चित्त बुद्धि और अहंकार में विलीन किये रहा करते थे। भगवान शिव में लीनता के कारण अवधूत कृपालानन्द जी को भगवान सदा शिव की शक्तियाँ हर समय प्राप्त थीं। युक्त योगी होने के कारण उस वन में रहने वाले अन्य सभी महात्मा उनका अत्यन्त सम्मान करते थे। वह परम विरक्त-भाव से अवधूत वृत्ति में विचरा करते थे।

उन्हीं दिनों मसूरी के वनों में घूमते हुए एक अंग्रेज दम्पत्ति आए। वहाँ एक साधना लीन महात्मा के दर्शन होने से उस अंग्रेज स्त्री के हृदय में भी वैसी साधना कर ईश्वर प्राप्ति की इच्छा जागृत हो गई। उस स्त्री ने महात्मा जी के चरण पकड़कर उस मार्ग का उपदेश करने की प्रार्थना की। महात्मा जी योगबल से समझ गये कि संस्कार महात्मा कृपालानन्द जी से है। अत: उन्होंने उस अंग्रेज महिला को ब्रह्मपुरी के वन में जाने की आज्ञा देते हुए कहा— योगिराज कृपालानन्द जी के द्वारा ही तुम्हें यह अन्तर्निधि प्राप्त होगी। उनके द्वारा ही ज्ञान का प्रकाश तुम्हें प्राप्त होगा। वह अंग्रेजी स्त्री बड़ी दृढ़ लगन वाली थी। अत: पति को वापिस करके खोजते-खोजते ब्रह्मपुरी के वन में जा पहुँची और यत्र-तत्र कृपालानन्द जी का अन्वेषण करने लगी। इसी प्रकार रात्रि हो गई, तब भयभीत होकर उसने भगवान से कातर-स्वर में प्रार्थना की अकस्मात् कृपालानन्द जी नग्न-रूप में विचरण करते हुए उधर ही आ निकले। देखते ही उस देवी ने अवधूत जी के चरण-कमलों को पकड़ लिया। पहिले तो उन्होंने उसे हतोत्साहित करने का प्रयास किया। अन्त में उसकी दृढ़ लगन देखकर उसे योगाभ्यास की विधि बताई और वहीं पर कुटी बना कर रहने की आज्ञा दे दी। वह देवी

अपने गुरुदेव की आज्ञा का अक्षरश: पालन करती और कन्दमूल खाकर अपनी साधना में तत्पर रहतीं। परिणामत: उसमें कई चमत्कारिक शक्तियों का प्राकट्य हुआ।

जिन दिनों आनन्दकन्द प्रभु श्री रामलाल जी महाराज वहाँ पहुँचे थे, तब यह देवी भी वहाँ निवास किया करती थी। इसके अतिरिक्त हीरागिरि नाम के एक अन्य महात्मा से भी उनका परिचय हुआ। परिचय बढ़ने पर श्री प्रभु जी और वह महात्मा साथ-साथ गंगा-स्नान करके कन्दमूल खोद लाते और साथ ही बना लिया करते थे। कभी-कभी महात्मा हीरागिरि अवधूत कृपालानन्द जी के प्रति कुछ उपेक्षा का भाव रक्खा करता था। अवधूत उसके मनोभाव समझ गये और उन्होंने शिक्षा देने का विचार किया।

अवधूत श्री कृपालानन्द जी प्रात:काल ब्रह्म मुहूर्त में ही पवित्र गंगा की धारा में स्नान करके गंगा तट पर ही समाधिस्थ होकर बैठ जाया करते थे। दोपहर बाद लगभग दो बजे के उपरान्त वह समाधि से उठते थे। उठने के पश्चात् उस वन में जो कोई भी साधु कन्दमूल बनाकर तैयार किया हुआ दिव्य-दृष्टि से दिखाई देता उसके पास मनोजविता से तत्काल जा पहुँचते और उससे आधा भोजन लेकर खा लिया करते थे। वह स्वयं कन्दमूल न बना कर नित्य इसी प्रकार किया करते थे। ब्रह्मपुरी के वन में रहने वाला कोई भी महात्मा उनके इस नैत्यिक कार्यक्रम के कारण कृपालानन्द जी से रुष्ट नहीं होता था क्योंकि सभी को उनकी दिव्य स्थिति का ज्ञान था। सब जानते थे कि यह सब प्रकार से परिपूर्ण भगवान सदा शिव के रूप ही है। अत: जिसके यहाँ जाकर भी वह भोजन करते वही अपना अहोभाग्य समझता और उनके पुनरागमन की प्रतीक्षा किया करता। परन्तु महात्मा हीरागिरि उनके इस व्यवहार से बहुत ही चिढ़ता था, इसी कारण उनके प्रति उपेक्षा भाव रखते हुए कहता-ठीक है कृपालानन्द जी युक्त योगी हैं और हम सब युंजन योगी हैं। लेकिन कालान्तर में हम भी युक्त को प्राप्त होंगे ही। कृपालानन्द भी हमारे बराबर का भाई ही तो है।

योगिराज कृपालानन्द जी ने उसके मनो भावों को जान लिया था अत: अब भोजन के लिये अन्य किसी महात्मा के यहाँ न जाकर वह नित्य ही महात्मा हीरागिरि के स्थान पर पहुँचने लगे। दो-तीन दिन तो वह चुप रहा और मन मारकर कृपालानन्द जी को भोजन के लिये कन्दमूल देता रहा। परन्तु चौथे दिन उसे कृपालानन्द को भोजन के ठीक तैयार हो जाने पर आया हुआ देखकर बड़ी खीझ हुई। जैसे ही कृपाला नन्द जी ने अपना भाग माँगा, वैसे ही वह क्रोध में भर कर बोला- क्यों दे दें तुझे कन्दमूल? क्या तू खोद कर रख गया था? जंगल में पड़ा है कहीं से भी खोदले और बना कर खा ले। किन्तु अवधूत कृपालानन्द जी ने उसके इन क्रोध युक्त वचनों को कोई महत्व नहीं दिया और चुपचाप उसके बनाये हुए कन्दमूलों में से अपना भाग स्वयं ही लेकर खा गये और हँसते हुए चल दिये। हीरागिरि बहुत चिढ़ता रहा और कहता रहा देखो, महात्मा होकर भी क्या आढ़ती डाली है? आया और खा गया जैसे इसके मां-बाप खोद कर और बनाकर इसके लिए ही रख जाते हों। हीरागिरि ने अगले दिन इस मुसीबत से बचने के लिए भोजन के समय से बहुत पहले ही कन्दमूल बना डाले और श्री प्रभुजी से बोला- उस दुष्ट कृपालानन्द जी के आने से पूर्व ही खा लेते हैं। फिर अवधूत आकर खाली पात्र देख कर स्वयं ही लौट जायेगा। अभी उसने भोजन परोसा ही था कि सामने से मुस्कराते हुए कृपालानन्द जी आते दिखाई पड़े। आते ही बोले- भाई हीरागिरि, बड़ा अच्छा किया जो तुमने जल्दी ही कन्दमूल तैयार कर लिये आज तो जल्दी ही भूख लग आई है। विवश होकर महात्मा हीरागिरि को नित्य की भाँति तीन भाग करने पड़े, और कृपालानन्द जी तृप्त होकर चल दिये।

महात्मा हीरागिरि बड़ी उलझन में था। कैसे इस अवधूत से पिंड छूटे? उसे एक उपाय सूझा और अगले दिन उसने भोजन के समय तक कन्दमूल खोदे ही नहीं। उसका विचार था भोजन के समय अवधूत आएगा तो कह दूँगा भाई यदि तुझे कन्दमूल खाने हों तो खोद ला और बना कर खाले। मुझे तो खाना नहीं था, इसीलिये बनाया भी नहीं है। परन्तु आश्चर्य की बात कि उस दिन भोजन के समय योगी कृपालानन्द आए ही नहीं। जब भोजन का समय निकले दो घंटे हो चुके, तब हीरागिरि वन में जाकर कन्दमूल खोद लाया और बनाने लगा। मन में वह प्रसन्न था और नित्य ही इसी उपाय से कृपालानन्द जी से बचने की बात सोच चुका था। कन्दमूल बन कर तैयार हुआ ही था कि कृपालानन्द जी आ पहुँचे और हँसकर बोले- भाई हीरागिरि तू हमारा बड़ा ख्याल रखता है। तुझे कैसे पता चल गया कि आज हमें भूख नहीं लगी है इसलिये हम देरी से खायेंगे। वैसे तो आज बिना खाये ही रहना पड़ता, लेकिन जब तूने इस समय बना ही रक्खा है, तो ला-थोड़ा सा खा लेते हैं। मन-ही-मन हीरागिरि को बेहद क्रोध आया और बोला- तुम कुछ समाधि अमाधि नहीं लगाते केवल भोजन की समाधि लगाते हो इस समय कहाँ कन्दमूल मिलेगा- बस यही देखा करते हो। इसके बाद हीरागिरि नित्य स्थान-परिवर्तन कर करके कन्दमूल तैयार करने लगा। किन्तु श्री कृपालानन्द जी की दिव्य दृष्टि से कोई भी स्थान बच न सका और वह अपनी मनोजविता से प्रत्येक स्थान पर पहुँच कर हीरागिरि के यहाँ ही नित्य भोजन करते थे।

महात्मा हीरागिरि के हृदय में प्रतिशोध की भावना जाग्रत हो गई और उसने एक दिन चुपचाप धतूरे के सेर भर पत्तों का साग बना डाला और मन में कहने लगा- आज महात्मा को इस प्रकार आने का मजा मिल जायगा। उधर श्री प्रभुजी ने भी अपने कन्दमूल भूनकर तैयार किए हुए थे। ठीक समय पर कृपालानन्द जी आये। श्री प्रभुजी ने अपने कन्दमूलों के तीन भाग करके एक भाग कृपालानन्द जी के सम्मुख रक्खा। हीरागिरि ने धतूरे का सारा साग कृपालानन्द जी के सम्मुख रख दिया तब अवधूत बोले- क्यों रे हीरागिरि मरने को हम ही रहे हैं क्या? हम-तुम दोनों ही क्यों न मरें? इस साग को तू भी खा और हम भी खाते हैं। प्रभुजी इस रहस्य से अनभिज्ञ थे, अत: आश्चर्य में भर कर कहने लगे- महाराज, क्या हुआ? ऐसे वचन क्यों बोल रहे हैं? तब कृपालानन्द बोले- आज यह हमें मारने के लिये धतूरे के पत्तों का साग बना कर लाया है। श्री प्रभुजी ने कहा- आप उसे मत खाइए, बस केवल मेरे वाले कन्दमूल ग्रहण कीजिए। परन्तु अवधूत कहने लगे- बेचारे ने बड़े प्रेम से बनाया है। हम इसे अवश्य खायेंगे। ऐसा कह उस साग के तीन भाग करके एक प्रभुजी के सामने भी रख दिया और

कहा- तुम इसे निश्शंक खाओ, हम भी खाते हैं। परन्तु फल यह दुष्ट हीरागिरि ही भोगेगा। तीनों ने वह साग खाया किन्तु श्री प्रभु जी और कृपालानन्द पर धतूरे के विष का कोई प्रभाव नहीं हुआ। परन्तु थोड़ा सा साग खाते ही हीरागिरि की दशा बिगड़ने लगी और थोड़ी सी देर में विष के प्रभाव से वह मूर्छित हो गया। श्री प्रभु जी से कृपालानन्द जी ने कहा- तीन दिन तक यह अपने किये का आनन्द भोगेगा। तीन दिन बाद होश आते ही हीरागिरि बोला- हम अब इस दुष्ट कृपालानन्द की अपने योग बल से खबर लेंगे और चुपचाप नित्य की भाँति कन्दमूल बना कर तैयार किये। मध्यान्ह होने पर अवधूत श्री कृपालानन्दजी आये और हँसकर बोले- कहो हीरागिरि अभी कुछ और मन में है। श्री प्रभुजी हँस पड़े तो अवधूत कहने लगे- अब यह योग बल से हमें बदला देगा। हम उस समय भी इसकी खबर लेंगे। तत्पश्चात् कन्दमूल का भोजन करके तीनों व्यक्ति बैठ कर चर्चा करने लगे।

उस समय हीरागिरि अपना अपमान समझ कर बहुत ही क्रोध में बैठा था। उसी दशा में उसने विचार किया आज अब यह अवधूत ध्यानस्थ होगा उसी समय जाकर इसका मुख कालिख से काला करूँगा। कृपालानन्द जी पूर्ण योगी थे, तत्काल उसके मन का विचार जान गये और वहीं समाधि लगा कर बैठ गये। दोनों हाथों को कालिमा से काला करके जैसे ही वह उनकी ओर बढ़ा तब उनके आसन के नीचे से ततैये निकल कर हीरागिरि के मुख को चिपट गईं। उनसे बचने के लिये अनजाने ही उसने अपने दोनों काले हाथों को अपना मुख पर ही लगा लिया। फलत: कृपालानन्द जी के बजाय उसका स्वयं बड़ा ही मुख काला हो गया। श्री कृपालानन्द जी की इन चमत्कारिक शक्तियों को देख कर हीरागिरि कुछ भयभीत सा हो गया, परन्तु प्रतिशोध की भावना उसके मन से न निकल सकी।

एक दिन श्री प्रभुजी के निवास-स्थान पर हीरागिरि, कृपालानन्द और कृपालनन्द की अंग्रेज शिष्य सब एकत्रित थे। हीरागिरि कहने लगा अवधूत जी आप का तन तो अति कृश है। हमें तो आप से एक कार्य कराना था। कृपालानन्दजी बोले- निस्संकोच कहो क्या काम है? हीरागिरि बोला- हम चाहते हैं कि इस ब्रह्मचारी (प्रभुजी) की शिला यहाँ से उठा कर हमारे स्थान पर ले जाकर रख दी जाती तो बड़ा अच्छा होता। वहाँ से हीरा गिरि का स्थान दो मील दूर था और शिला का वजन सैकड़ों मन था। तत्काल कृपालानन्द जी ने अपनी अंग्रेज शिष्या को आज्ञा दी- जाओ, यह शिला उठा कर वहाँ रख आओ। आज्ञा पाकर वह देवी कृपालानन्द जी की परिक्रमा करके एवं चरण कमलों में प्रणाम करके उस शिला पर सिद्धासन से बैठ गई। थोड़ी देर में ही वह शिष्या शिला सहित आकाश मार्ग से जाकर यथा-स्थान शिला को रखकर आकाश मार्ग से ही वापिस आ गई। आकर अपने गुरुदेव को प्रणाम करके बैठ गई। इस चमत्कार को देख कर हीरागिरि बहुत लज्जित होकर कृपालानन्द जी का मान करने लगा।

अवधूत कृपालानन्द जी पूर्ण योगिराज थे। और भगवान सदाशिव में लीन रहने के कारण उन्हीं के सदृश शक्ति सम्पन्न रहते थे। युक्त योगियों की श्रेणी में आदर्श स्थान रखते थे। आनन्दकन्द भी प्रभुजी से वह मित्रता का नाता मानते थे।

योगेश्वर चरित्र-माला
(सिद्धियों का दुरुपयोग करने वालों को मार्ग-दर्शन)

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

श्री प्रभुजी नमर्दा नदी के किनारे कुछ मील जब आगे बढ़े तो एक उपयुक्त स्थान पर अपना डेरा लगाने की आज्ञा दी। वहाँ पास ही नदी के तट पर दो गाँवों के मध्य में एक महात्मा रहते थे। जिन्होंने उस स्थान पर तालाब, कुआ, मंदिर आदि बनवा रखा था और उनकी वहाँ एक धूनी भी चौबीस घण्टे जलती रहती थी। यदि कोई व्यक्ति धूनी से आग ले लेता तो महात्मा से दण्ड प्राप्त करता था। आस-पास के सभी लोग इनके भय से काँपते रहते थे। इधर श्री प्रभुजी की मण्डली के सभी व्यक्ति को तम्बू आदि लगाने और स्थान बनाने में लग गये परन्तु हरिहरानन्दजी आसन बिछा, प्रभुजी को विराजमान कर उसी मंदिर के भीतर आग लेने चले गये। इनको कुछ मालूम नहीं था। इन्होंने जाते ही उस धूनी से आग ले ली। तब उनके चेल ने कहा- अरे! यह तुमने क्या किया? हमारे गुरु जी शाप देकर तुम्हारे अंग-भंग कर देंगे।

इतने में महात्मा स्नान कर जल का लोटा लिये आ रहे थे। हरिहरानन्द के हाथ में आग देख क्रोधित हो उनकी ओर बढ़े। तब हरिहरानन्द ने उस महात्मा को कुपित हुए देख दौड़कर उससे जल का लोटा छीनकर भूमि पर पटक दिया, साथ ही शाप देने की शक्ति भी हर ली और वहाँ से भाग चले। महात्मा भी चिल्लाते हुए उनके पीछे माँगने लगे। हरिहरानन्द जी प्रभुजी के भय के कारण उस ओर न जाकर दूसरी ओर भाग निकले। उधर दोनों गाँवों के लोग भी इनके पीछे लग गये। तब हरिहरानन्द जी ने सोचा कि यह हमार पीछा नहीं छोड़ता और हमारी ओर ही भागा आ रहा है। इधर श्री प्रभु जी हरिहरानन्द की प्रतीक्षा कर रहे थे। उधर श्री हरिहरानन्द जी दौड़कर श्री प्रभुजी के पास चले आये। श्री प्रभुजी ने पूछा इतनी देर तुमने कहाँ लगा दी? हरिहरानन्दजी ने चुप्पी ही साध ली। इतने में वह बूढ़ा महात्मा रोता-रोता श्री प्रभुजी के पास पहुँच गया। श्री प्रभुजी ने उससे पूछा क्या हुआ है? और तुम क्यों रोते हो? तब उस साधु ने कहा यह हमें लूट लाया है। इतने में पीछे भागे आ रहे लोग भी वहाँ आ पहुँचे।

तब प्रभुजी ने उन लोगों से पूछा क्या बात है? तो उन लोगों ने कहा हमें भी कुछ मालूम नहीं। उनमें से एक ने आगे बढ़कर श्री प्रभुजी से कहा यह महात्मा आपको शाप देकर मार देंगे नहीं तो जो यह कहते हैं इनका कहना मान लो। इस पर श्री प्रभुजी ने उससे पूछा यह शाप कैसे-कैसे देता है। वह बोला आपके बदले कौन मरे?

श्री प्रभु जी ने कहा इस समय यह साधु कुछ नहीं कर सकता। यदि इसमें शाप देने की शक्ति होती तो यह इस प्रकार न रोता। यह बात सुनकर लोगों का भय दूर हो गया। तब वे लोग कहने लगे कितने ही आदमी इसने शाप देकर मार दिये। एक आदमी आगे आकर रोने लगा महाराज मेरा एक ही लड़का था जिसे इसने शाप देकर मार दिया। हमारा कुल जाता रहा। ऐसे ऐसे कितने ही समाचार मिले।

उपर्युक्त सब बातें सुनकर श्री प्रभुजी ने उस साधु को बहुत फटकारा और उसको वहाँ से चले जाने को कहा। परन्तु वह वही खड़ा रहा। लोग उसकी जटा पकड़ कर खींचने लगे। कोई लात मारे, कोई मुष्टिका। श्री प्रभुजी के मना करते-करते भी उन लोगों ने उस साधु को बहुत पीटा। अन्त में श्री प्रभुजी ने अपने शिष्यों से कहकर उस साधु को छुड़वा दिया और गाँव वालों को समझा बुझाकर भेज दिया।

जब इधर से लोगों को हटाया तो घर लोग जाकर उसका माल लूटने लगे। यह समाचार पाते ही श्री प्रभुजी ने उसका सामान बचाने के लिये अपनी मण्डली के आदमियों को भेज दिया।

उन लोगों ने जाकर देखा कि महात्मा के चेलों को गाँव वाले पीट रहे हैं और धन लूट रहे हैं, तो उन लोगों ने जाकर उन चेलों को छुड़वाया। उनका सामान वापस दिलवा दिया और गांव वालों को समझाकर श्री प्रभुजी के चरणों में वापस आ गये।

इस घटना को देखकर गाँव वालों में श्री प्रभुजी के प्रति इतनी श्रद्धा बढ़ गई कि उन्होंने अपने यहाँ से दूध आटा घी आदि सब वस्तुयें भेजनी शुरू कर दीं। श्री प्रभुजी ने वहाँ एक क्षेत्र खोल दिया। अनेक नर-नारी चारों ओर से श्रीप्रभुजी के दर्शन को आने लगे। एक दिन श्री प्रभुजी ने उस महात्मा को अपने पास बुलाकर कहा- तुम अब अपने मंदिर में चले जाओ। उस महात्मा ने कहा अब मैं बाहर निकलूँगा तो ये लोग मुझे मार डालेंगे तब श्री प्रभुजी ने पूछा यदि तुम्हें कुछ शक्तियों दे दी जायें तो क्या तुम चले जाओगे इतने में वहाँ खड़े सभी लोग प्रभु जी से प्रार्थना करने लगे- प्रभो! ऐसा आप न कीजिए। श्री प्रभुजी ने उस महात्मा से पूछा- ये सिद्धियां तुमने कैसे प्राप्त कीं? तब महात्मा ने कहा- आबू के पहाड़ पर जाकर मैंने यह सारे मन्त्र सिद्ध किये हैं। २७ महीने में मैंने भैरव की सिद्धि १२ वर्ष में महाकाली आदि की सिद्धियाँ पाई है मेरी वर्षों की कमाई आपका शिष्य मिनटों में छीन लाया है। अब कृपा करके वह शक्ति मुझे वापस दिलवा दीजिए, जिससे मैं जीवित रह सकूँ। श्री प्रभुजी ने कहा- इन सिद्धियों के दुरुपयोग से घोर नरक की यातनाओं को भोगना पड़ता है। अब तुम्हारा हित इसी में हैं कि तुम योग मार्ग में लग जाओ। तब उस महात्माओं ने कहा- अब ७० वर्ष की आयु हो गई है, इसलिए मुझे और कुछ नहीं सुहाता, तब वहाँ के सभी लोग श्री प्रभुजी से प्रार्थना करने लगे, आप कृपा करके सिद्धियाँ वापस न दीजिए और उस महात्मा को ऐसे ही रहने दीजिए। अन्त में श्री प्रभुजी ने दोनों ओर के व्यक्तियों को समझा बुझा कर आपस में समझौता करा दिया। कुछ दिन ठहरने पर जब देखा कि लोग अब उस महात्मा से कुछ नहीं कहते हैं तो एक दिन वहाँ से चल दिये।

योगेश्वर चरित्र-माला

अद्भुत दर्शन और भय

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

श्री प्रभु जी के चरणाविन्द में हर समय सैकड़ों आदमियों की भीड़ लगी रहा करती थी। इधर-उधर से आकर लोग सत्संग लाभ करते थे। श्री प्रभुजी के अद्भुत दर्शन पाकर और अपने ऊपर हुई अनेक प्रकार की कृपाओं को देख करके लोगों के मन में यह भावना होती थी कि यह कोई परिपूर्ण महा पुरुष हैं। इसलिए सब यह सोचते रहते थे कि हम इनकी विशेष प्रकार की चमत्कारिक कृपाओं को देखें। प्रभुजी से सब लोग बार-बार प्रार्थना करते रहते थे कि प्रभो कृपा कर कोई विशेष चमत्कार दिखलायें। श्री प्रभुजी ने उनके वचनों को स्वीकार नहीं किया कहा- भाई हम क्या दिखलायें, मन लगा कर ईश्वर का भजन किया करो। तुम्हारे शरीर में अपने आप ही चमत्कार हो जायेंगे। किन्तु फिर भी लोगों ने अपनी हठ को नहीं छोड़ा और बार-बार इस प्रकार की प्रार्थना करते रहे। एक दिन जब सैकड़ों आदमियों की भीड़ बैठी थी, लोगों ने हठपूर्वक प्रार्थना की कि प्रभो आज तो कोई विशेष चमत्कारिक लीला अवश्य दिखलाइये तभी हम अपने घरों को जायेंगे। लोगों के बार-बार आग्रह करने पर श्री प्रभु जी ने कहा कि अच्छा भाई तुम सब आँखें बन्द कर लो फिर कुछ देर बाद उन्हें आज्ञा दी कि अब सब आंखें खोल लो। श्री प्रभुजी की आज्ञा सुनकर जिस समय लोगों ने आंखें खोलीं तो बड़ा आश्चर्य हुआ। उनको कुछ भी दिखलाई नहीं देता था न किसी की आवाज सुनाई देती थी, न किसी वस्तु का स्पर्श होता था। न उन्हें शीतोष्ण का ज्ञान था। केवल महा अन्धकार-ही-अन्धकार अनुभव में आता था। समय का भी कोई ज्ञान नहीं था और न यह ज्ञान था कि हम कहां हैं? थोड़ी देर तक सब लोग इस दशा में रहे। उसके बाद उनको अनुभव हुआ कि उनके नीचे से जमीन निकाल ली गई है। जैसे किसी बैठे हुए आदमी के नीचे से आसन खींच लिया हो। ऐसी अनुभूति के बाद उन लोगों ने अनुभव किया कि वे प्रतिक्षण नीचे को गिरते जा रहें। उन्हें एक धुंधले से प्रकाश में यही अनुभव हो रहा था कि पता नहीं वे कितने गहरे गढ़े में नीचे को चले जा रहे हैं। बाहर की अनुभूति से बिल्कुल शून्य थे। उनका मन यह अनुभव कर रहा था कि पता नहीं कितने वर्ष हमें नीचे को जाते हुए हो गये हैं। किन्तु कोई आधार नहीं मिल रहा है जहाँ जाकर हम ठहरेंगे। उनके मन में यह स्मृति थी कि हमने यह बहुत बड़ा अपराध किया जो कि बाबा के सामने इतनी बड़ी हठ की। अब दुबारा हमें हमारे घर-बार, जमीन-जायदाद व स्त्री बच्चों को कौन दिखायेगा। ऐसी उद्विग्न स्थिति के अन्दर उन्होंने पुन: श्री प्रभु जी के चरण कमलों का स्मरण किया और ऊपर की ओर देखने का प्रयत्न किया तो क्या देखते हैं कि ऊपर से बड़े-बड़े भयंकर सर्प दौड़े हुए उन्हीं की ओर बड़े वेग से भागे आ रहे हैं। मानो ये सब इन्हीं सबको खा जाना चाहते हैं। अब ये सब लोग और भी भयभीत हुए और श्री प्रभुजी का स्मरण करने लगे। प्रार्थना की कि हे प्रभो हमसे बड़ी भारी भूल हुई। अब ऐसी भूल हम फिर दुबारा नहीं करेंगे। आप कृपा करके हमारी रक्षा कीजिये। भयकातर मन से यह प्रार्थना करने के बाद उनको एक वाणी सुनाई दी। वह वाणी श्री प्रभु जी की थी। श्री प्रभु जी ने कहा अच्छा डरो मत, आँखें बन्द कर लो। पुन: आज्ञा हुई अब आँखें खोल दो। उन लोगों ने देखा कि उनका शरीर पसीने से तरबतर था। भय के मारे काँप रहे थे। गले से आवाज नहीं निकलती थी। उनके शरीर प्राणहीन जैसे हो रहे थे। बड़ी कठिनता के साथ मन को चेतना में लाकर वे लोग धीरे से उठे और श्री प्रभुजी को प्रणाम करके चुपचाप बाग से बाहर चले गये। फिर दुबारा उन्होंने कोई चमत्कार देखने की इच्छा प्रकट नहीं की। वे गाँव में जाकर परस्पर चर्चा करने लगे कि यह साधारण महात्मा नहीं किन्तु कोई योगेश्वर हैं, इनकी लीला वर्णानातीत है।

योगेश्वर चरित्र-माला

चार पुत्रों का वरदान

(श्री सद्गुरुदेवजी की वाणी)

आज से लगभग १८ या २० वर्ष पहले जिस समय मैं सवांई गाँव में श्री सिद्ध गुफा पर पहुँचा और यहाँ आकर योग-प्रचार करना आरम्भ किया तब श्री प्रभु जी के निवास कालीन कृपा-पात्र लोगों ने धीरे-धीरे मेरे पास आना आरम्भ किया। ये सभी लोग श्री पास आना आरम्भ किया। ये सभी लोग श्री प्रभुजी की कृपाओं से अपने-आपको सौभाग्यशाली समझते थे। एक वयोवृद्ध ठा. ठाकुरदास गद्गद्-कण्ठ होकर के रोज आश्रम में आकर बैठा करते थे। वे बहुत जल्दी बोलते थे, जबान भी स्पष्ट नहीं थी। अपने मानस-भावों को जल्दी-जल्दी कहा करते थे। उनकी बातों पर मैं ध्यान नहीं देता था। मैं समझता था, वृद्ध शरीर है पता नहीं क्या कहते हैं? कहने दो कहते रहेंगे; किन्तु वे नित्य ही कुछ-न-कुछ कहते रहते थे। इसलिए मन में एक दिन एक तरंग पैदा हुई कि हमें इन वृद्ध की बात को गौर से सुनना चाहिए। इसके क्या मानस-भाव है और क्या ये कहना चाहते हैं। मैंने उन वृद्ध के पास जाकर के पूछा, ठाकुर तुम क्या कह रहे हो? उसने अपनी ओर से स्पष्ट शब्दों में मुझसे कहा कि महाराज मैं कुछ नहीं कहता, यही कहता हूँ, कि आपके चारों गुलाम मौजूद हैं; उनको सेवा में लगा कर रखो। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ यह किन गुलामों का जिक्र कर रहे हैं। मैंने उनसे कहा वे कौन से गुलाम हैं। उन्होंने बड़े हर्ष के साथ कहा- चार गुलाम बाबा दे गये थे- चार गुलाम बड़े बाबा दे गये थे। मैंने ठाकुरदास से पूछा कि भाई अपना मतलब स्पष्ट करके बतलाओ। उन्होंने कहा कि मेरे दो विवाह हो चुके थे और दोनों स्त्री मर गई थीं। मै बड़ा दु:खी था और रोता फिरता था। एक दिन बाबा ने मुझे रोता हुआ देख लिया और अपने पास बुला कर कहने लगे ठाकुरदास रोते क्यों हो? लो यह विभूति खाओ अभी तुम्हारी एक और शादी होगी। उस स्त्री से तुम्हें चार पुत्र पैदा होंगे। उनकी दी हुई उस विभूति के खाने के बाद बहुत जल्दी ही मेरी शादी हो गई और चार लड़के पैदा हुए। वे आपके चारों गुलाम अब भी मौजूद हैं। किसी भी प्रकार की सेवा की आवश्यकता हो तो अपने चारों गुलामों को अपने जानकर बुला लेना। ये मेरे नहीं हैं बाबा के हैं, इतना कहकर वयोवृद्ध ठाकुरदास श्री प्रभुजी के कृपामय चरण-कमलों को स्मरण कर गद्गद् कण्ठ होकर चुप हो गये।

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सन् १९२५ या १९२६ की बात है- श्री आनन्दकन्द परम कल्याणधन श्री प्रभुजी नैपाल हिमालय के भ्रमण से लौट आने के बाद अमृतसर में निवास कर रहे थे। महा पुरुषों की लीला को समझा नहीं जा सकता कि वे लोग कब, कौन और क्या लीला करना चाह रहे हैं। उनके प्रत्येक अंग की चेष्टा लोक-हित के लिए हुआ करती है। उनकी कौन सी क्रिया किस रहस्य को लेकर हो रही है इस बात को समझने वाले व्यक्ति का इस कलिकाल में मिलना अत्यन्त दुर्लभ सा ही है। श्री आनन्दकन्द महान करुणार्णाव प्रभुजी हिमालय के सिद्ध आश्रम से लौट कर हरिद्वार कुम्भ के अवसर पर जनहित के लिए अपने आपको प्रकट कर चुके थे। शनै:-शनै: उन्होंने योग का प्रचार करना आरम्भ कर दिया था। योगिराज लोग योग प्रचार किस प्रकार से करते हैं यह भी बहुत गोपनीय रहस्य है। प्रत्येक मानव के मन में तो इस प्रकार की क्रियायें आ भी नहीं सकतीं और न ही वह सुन सकता है कि यह क्या क्रिया-कलाप है। श्री प्रभुजी अमृतसर में पण्डित विप्रवेष धारण करके आ चुके थे। भाई के कटले और भाई की गली में पण्डित रूप से विराजमान रहते थे। श्री प्रभुजी को जन्म-धारण कराने वाले उनके पिता श्री पं. गण्डाराम जी ज्योतिषी ज्योतिष विद्या के उच्च कोटि के विद्वान थे। अत: ज्योतिष का कार्य उनके घर में कुल परम्परा से प्राप्त व्यवसाय था। श्री प्रभुजी के विषय में भी लोग इतना ही जानते थे कि यह पण्डित हैं और ज्योतिष विद्या के विद्वान हैं। उनके आन्तरिक रहस्य और परिपूर्णता को कोई समझ नहीं पाता था। स्वाभाविक ओज और तेज किसी से छिप नहीं सकता। श्री प्रभुजी के अमृतसर के निवास-काल में थोड़े ही समय बाद उत्कृष्ट घरानों का यातायात शुरू हो गया। बाजार के लोग सोचते थे कि यह सब-के-सब लोग अपने कर्म-विपाक को समझने के लिए फलादेश सुनने जाया करते हैं किन्तु वहाँ उस वायुमण्डल में बात कुछ और ही थी उस रहस्य को जानने और समझने वाला व्यक्ति वहाँ नहीं था। शनै:-शनै: प्रचार बढ़ता चला गया। एक दिन अकस्मात् सत्संग में बैठे हुए लोगों ने देखा कि श्री प्रभुजी ने दो-तीन बार अपने मुख को हरकत इस प्रकार की है जिससे मालूम पड़ता था कि वह किसी को बुला रहे हैं किन्तु किसको बुला रहे हैं। यह रहस्य कोई भी नहीं समझ सका। दो तीन दिन के बाद अकस्मात् एक घटना घटी। अमृतसर में एक युवा ब्रह्मचारी आये और वे लाल दरवाजे के बाहर सन्तराम की सराय में समाधि लगाकर बैठ गये। अमृतसर में उनके आगमन की धूम मच गई। दर्शनार्थ आने वाले स्त्री-पुरुषों की भीड़ का कोई पार नहीं पाता था सन्त तीन दिन तीन रात लगातार समाधि में बैठे रहे किसी को भी यह ज्ञान नहीं था कि यह समाधि से कब उठेंगे स्वार्थी लोगों को बड़ी जल्दी थी कि योगिराज समाधि से जल्दी उठें और अपने दर्शन और आशीर्वाद से हमें कृतकृत्य बनायें। धीरे-धीरे इनकी यह प्रख्याति शहर के कोने-कोने में फैल गई। कर्ण परम्परा से यह बात श्री प्रभुजी के चरण कमलों तक भी पहुँची। लोग मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते थे और श्री प्रभुजी से प्रार्थना करते थे कि महाराज आप भी दर्शन करने चलिये। एक बड़े उच्चेकोटि के सन्त आये हैं जो सन्तराम की धर्मशाला में समाधि लगाये बैठे हैं श्री प्रभुजी पहिले तो लोगों की बात सुनते रहे और मुस्कराते रहे किन्तु किसी का क्या पता था कि वह सन्त इन्हीं के बच्चे हैं और इन्हीं के बुलाये आये हैं। लोगों के बहुत आग्रह करने पर श्री प्रभुजी तैयार हो गये और कहने लगे भाई अच्छा? तुम सब की ऐसी ही इच्छा है तो चलो हम भी चलते हैं देखते हैं कौन महात्मा कहाँ से आये हैं। यह कहकर श्री प्रभुजी उन लोगों के साथ चल दिये। सन्तराय की सराय में पहुँच करके उस ब्रह्मचारी की पीठ की ओर जाकर खड़े हो गये, सराय के अन्दर सन्त के दर्शनोत्सुकों की बहुत भारी भीड़ जमा थी। जिसके फलस्वरूप यातायात का मार्ग भी सुलभ नहीं था। सन्त नग्न वेष में थे, विभूति लगाये थे और कोई आवरण उनके शरीर पर नहीं था जिस समय आनन्दकन्द श्री योगयोगेश्वर प्रभुजी उस सन्त ब्रह्मचारी के पीछे जाकर खड़े हो गये तो वहाँ पर जमा हुई लोगों की भीड़ ने बड़े भारी आश्चर्य देखा कि यकायक ब्रह्मचारी की समाधि खुल गई और वह बड़े सम्भ्रमित से होकर खड़े हैं। अपने पृष्ठ भाग में खड़े हुये अखण्ड-मण्डलाकार व्याप्त जगन्नियन्ता के स्वरूप को पहिचानकर कटे हुए वृक्ष के समान श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में गिर पड़े। ब्रह्मचारी अपने को सम्हाल नहीं सके। बड़ी विह्वलता के साथ ही-नाथ! हे कृपा नाथ! कहकर रो पड़े। श्री प्रभुजी ने भी अपने अबोध बालक को आया देखकर गद्‌गद् कण्ठ हो गले से लगा लिया और बड़ी गम्भीर वाणी से बोले बेटा! तुम्हारा यहाँ आना आज सफल हुआ। तुम आप्त काम हुये, तुमने खेचरी की साधना को पूर्ण कर लिया आज से तुमने स्थूल और सूक्ष्म दोनों प्रकार के खेचरत्व को प्राप्त कर लिया तुम आज से खेचरत्व को प्राप्त कर लिया तुम आज से खेचर सिद्ध हो गये। ब्रह्मचारी को वरदान देने के बाद जो ही श्री

प्रभुजी चुपचाप खड़े रहे तब ब्रह्मचारी ने आश्चर्य में पड़े हुए लोगों को अपने मुख से आपबीती स्वयं बतानी आरम्भ की ब्रह्मचारी ने बतलाया कि मैं बद्रिकाश्रम से ऊपर सत पथ के रास्ते में कुटिया बना करके जंगल में निवास करता था खेचरी सिद्धि की भावना मेरे मन में प्रबल थी किन्तु खेचरी मुद्रा के ज्ञाता कोई महापुरुष बड़ी भारी तलाश करने पर भी नहीं मिले और मेरी कामना पूर्ण नहीं हुई। एक दिन ध्यानावस्था में मैंने क्या देखा कि आँखों के सामने एक अखण्ड मण्डलाकार व्याप्त एक प्रकाश है उस प्रकाश में से एक आवाज आई और वह यह कि बेटा! तुम्हारी साधना पूर्ण हुई तुम सिद्ध खेचरी पाओगे चले आओ मेरे पास। मैंने देखा वह प्रकाश एक बड़े नगर में व्याप्त हो रहा है मेरी आँखों के सामने उस प्रकाश में से ही एक लम्बी लाइट बन गई जिसने मुझे मार्ग दर्शन किया उस लाइट के दिखाये मार्ग-दर्शन के द्वारा ही मैं यहाँ तक पहुँच गया। यहाँ आकर के मैंने श्री प्रभुजी के दर्शन प्राप्त किये और आज श्री प्रभुजी के आशीर्वाद को पाकर मैं कृतार्थ हो गया हूँ। इसके बाद प्रभुजी अपने निवास पर लौट आये और ब्रह्मचारी बदरिकाश्रम चले गये।

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

वंश-परिचय

कलिकाल के भयंकर समय में जबकि अवनिमण्डल पर अनेक आवरणों से आवृत्त होकर पाप वृत्तियां प्रसारित हो रही थीं, धर्म का ह्रास हो चुका था, स्वार्थ लोलुप लोग अपने-अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए विविध प्रकार के प्रपंचों को बनाये हुए थे; मनुष्य मात्र दीनता और हीनता के गड्ढ़ों में अपने आपको बिल्कुल दवा बैठा था, उसके अभ्युत्थान का कोई भी श्रेष्ठतम मार्ग दिखलाई नहीं देता था, लकीर के फकीरों वाली युक्ति बिल्कुल बिल्कुल चरितार्थ सी हो रही थी। श्रद्धा हृदयों से कूच कर चुकी थी, हिन्दू जनता अश्रद्धा से अभिभूत होकर अपने पूर्वजों के सिद्धान्तों को यथावत मानने में बहुत विवश हो चुकी थी। आर्य जाति के उत्कृष्ट इतिहास को एवं अपने पूर्वज जाति के उत्कृष्ट इतिहास को एवं अपने पूर्वज लोगों के शक्ति सम्पन्न आश्चर्यप्रद चरित्रों को प्रथम तो कोई कहता हीं नहीं था, यदि कोई अपनी बुद्धि कौशल से कहने का प्रयत्न भी करता तो उन चरित्रों को पोपजाल, पाखण्ड एवं गप्पें कहकर उपेक्षित कर दिया जाता था, ऐसे चरित्रों के कथन करने वाला व्यक्ति मिथ्याचारी एवं ढ़कोसलेबाज कहलाता था। प्रथम तो श्रद्धा नहीं होती कदाचित किसी को यत् किंचित श्रद्धा का उदय हो भी जाय तो वह व्यक्ति छोटी-छोटी राजस-तामस उपासनाओं का आश्रय लेकर अपने आप को शक्तिमान् एवं कतुमकर्तुसर्वथा शक्त: ही कहलाने की चेष्टा करता है। ऐसे भयंकर काल में योग योगेश्वर परम करूणार्णव गुरुदेव श्री रामलाल जी महाराज का अवतरण जोशी वंश के अन्तर्गत प्रख्यात सारस्वत ब्राह्मण कुल मैं हुआ। आपका पवित्र गोत्र मौद्गल्य है त्रिप्रवर मध्यन्दिनी शाखा एवं कात्यायनी सूत्र है। जब से इस पवित्र कुल का उद्गम हुआ तब से अब तक अनेकों महापुरुषों का अवतरण इस पवित्र ब्राह्मण वंश में होता रहा। किन्तु सभी के पावन चरित्र इस समय यथावत् उपलब्ध नहीं, किन्तु फिर भी इस वंशावली के पवित्र उपाख्यान श्री प्रभुजी के वंशजों के द्वारा ही यत्किंचित प्राप्त हो चुके हैं। श्री प्रभुजी के पूर्वज वंशजों में पं. हरीराम जी का निवास स्थान जिला जालन्धर के त्रिहरा नामक ग्राम में था। त्रिहरा ग्राम में सतलज नदी में बाढ़ आने के कारण पं. हरीराम जी बड़े चिन्तित रहते थे बाढ़ के कारण ग्राम को कई प्रकार की हानियें पहुँचीं। उनको 'जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादीप गरीयसि' के सिद्धान्तानुसार जन्मभूमि होने के नाते से पण्डित जी सहन करते रहे। किन्तु नदी के वेग के कारण जब जन धन की हानि असह्य हो गई तब पं. हरीराम जी को वह त्रिहरा नाम का गाँव छोड़ना पड़ा। त्रिहरा गाँव को छोड़कर पं. हरीराम जी जिला लाहौर के नौशहरा गांव में आकार बसे। पं. हरीराम जो के इस पवित्र कुल की पांचवीं पीढ़ी में विप्र-कुल भूषण विद्वद्वर पं. चढ़तराम जी का जन्म हुआ। श्री पं. चढ़तराम जी परम वैराग्यवान एवं धर्म-परायण व्यक्ति थे। प्राय: स्वाध्याय-परायण रहा करते थे। आपको ग्रहस्थ आश्रम में निवास करते हुए भी ग्रहस्थ आश्रम में निवास करते हुए भी ग्रहस्थ में कोई आसक्ति नहीं थी और 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' के नियमानुसार त्याग से ग्रहस्थ आश्रम का उपभोग करते थे। उनकी यह तीव्रतम अभिलाषा थी कि एक पुत्र प्राप्त कर लेने के बाद वे विविक्त सेवी बन जाय और अपना जीवन परमश्रेय की प्राप्ति में लगा दें। शनै:-शनै: समय निकट आया और पण्डित जी के ग्रह में पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ। पण्डित चढतराम जी को जब यह सूचना मिली तो उनके हर्षोल्लास का ठिकाना न रहा। पण्डित जी ने अपने मन में विचार किया कि अणु परमाणु में ओत-प्रोत रहने वाले विश्व व्यापक अण्ड-ब्रह्माण्ड नायक उस विश्वात्मा ने हमारी विनय को स्वीकार कर लिया। पं. जी का यही मानस दृढ़ संकल्प था, कि वंश को उन्नति देने वाले एक पुत्र का जन्म होने के बाद हम प्रवृत्ति मार्ग को छोड़ कर निवृत्ति का आश्रय ले लेंगे। और कहीं विशुद्ध बन प्रदेश में जाकर के योग ध्यान परायण हो जायेंगे। नीति शास्त्र का वचन है कि-

मनस्येकं वचस्येकं
कर्मण्येकं महात्मनाम्।

अर्थात् मन, वाणी और कर्म में एक ही क्रिया महात्माओं के मन में प्रगट होती है। और इसके अतिरिक्त मन में कुछ और, वाणी में कुछ और, क्रियात्मक रूप में कुछ और ही करना, यह काम दुरात्मा लोगों का हुआ करता है। श्री पं. चढ़तराम जी पुत्रोत्पत्ति की सूचना पाते ही कुटुम्बी जनों से बिना ही किसी प्रकार का सम्पर्क किये एवं बिना ही सूचना दिये किसी अज्ञात प्रदेश को चले गये। यह था पं. चढ़तराम जी का तीव्रतम वैराग्य, जिसका पूरा-पूरा परिचय अपने इस ग्रहस्थ जीवन की पिछली झांकी से दे दिया। श्री पं. चढ़तराम जी अपने पुत्र का दर्शन किए बिना ही अज्ञात प्रदेश को चले गये थे। अत: उनके इस पुत्र रत्न का पालन-पोषण उनके चले जाने के बाद उनकी धर्मपत्नी ही करती रही। पं. जी के इस पुत्र रत्न का नाम सांईदत्त रक्खा गया। इस बच्चे का पालन पोषण पं. चढ़तराम जी की धर्मपत्नी जिला लाहौर के अन्तर्गत नौशहरा गाँव में ही करती रहीं, किन्तु

कुछ समय के बाद वह देवी इस बच्चे को अपनी जन्म भूमि बुग्याना के नाना का देहावसान उसके जन्म से पूर्व ही हो चुका था। किन्तु उनके मामा आदि ने उनका पालन-पोषण एवं विद्याध्ययन आदि कराया। शनै:-शनै: बालक सांईदत्त पुष्टि पाकर बढ़ने लगे, बाल्यकाल में इनके मन में वैराग्य के भाव ओत प्रोत रहने लगे। पं. साई दत्त के मामा जी इनके अध्ययन का बहुत ख्याल रखते थे। किन्तु फिर भी कभी-कभी अपने वैराग्य के भावों में ओत-प्रोत होकर अपने अध्यात्म विकास के लिए, एकान्तिक साधना में संलग्न हो जाया करते थे। एक बार इनके मन में एक तीव्रतम् साधना करने का तीव्रतम् संकल्प बना और इन्होंने बुग्याना नामक गाँव से कुछ दूर रावी नदी के किनारे एक पर्ण कुटी बनवाली, और मौका पाकर के चुपचाप बिना किसी के कहे सुने ही रावी तट पर अपनी निर्वाण की हुई इस कुटी में साधना प्रारम्भ कर दी। जब ये चुपचाप घर से निकल गये और घर वालों को इनका कहीं भी पता न चला तो घर वालों को तो शोक हुआ ही हुआ, इसके अतिरिक्त गाँव वालों को भी बड़ा भारी कष्ट पहुँचा। सबके मनों में यह भाव गुजरने लगे कि जिस प्रकार इनके पिता श्री पं. चढ़तराम जी अकस्मात् घर वार त्याग कर कहीं एकान्त प्रदेश को चले गये थे, इसी प्रकार से यह भी अपने मातुल ग्रह को छोड़कर कहीं वन प्रदेश को चले गये हैं। किन्तु अपनी माँ का इकलौता पुत्र होने के नाते इनके मामा व अन्य कुटम्बी जनों को इनके तलाश करने की बड़ी लगन बनी रही। उधर उनकी माता को बड़ा भारी दु:ख हुआ, उन्होंने अपने भाई से कुछ कटु शब्द कहे कि तुम मेरे बच्चे की देखभाल नहीं करते अगर करते तो खोया क्यों जाता, वहिन के ऐसे कटु शब्द सुनकर सांईदत्त के मामा को अति कष्ट हुआ। और वह भूख प्यास को सहन करते हुए बालक की तलाश में लग गये। परिणाम स्वरूप घूमते-घामते वे रावी तट पर बनाई हुई उसी पर्ण कुटी पर जा पहुँचे जहां पर यह भूख-प्यास पर नियन्त्रण करके अपनी तीव्रतम् साधना में तल्लीन थे। अपने बहिन के पुत्र को तप परायण देखकर इनके मन को प्रसन्नता और दु:ख दोनों हुए। प्रसन्नता का कारण तो यह था कि उनकी बहिन का पुत्र इतनी छोटी आयु में तप परायण है जो अध्यात्म विकास का एवं सिद्धिशक्ति प्राप्त करने का अनुपम साधन है। और मन में दु:ख इस बात का था कि यह उनकी बहिन का इकलौता पुत्र है, यदि इसको इस प्रकार का वैराग्य हो गया तो वह बेचारी किस आधार पर जिन्दा रहेगी। अपनी युवावस्था में बड़ी कठिन साधना से उसने इस बच्चे को प्राप्त किया था। उसके पतिदेव की यह बालक ही पुण्य स्मृति है। इसलिए इनको साधना परायण देखकर भी इनके मामा से न रहा गया और बालक को वे घर ले आए। घर में आए अपने बिछुड़े पुत्र को देखकर माता को बड़ा अहलाद हुआ और बच्चे को कंठ से लगा लिया और कहा बेटा तुम्हें इस तरह नहीं जाना चाहिए था। मामा जी के घर लौटा लाने के बाद पं. साईदत्त जी अपना नैत्यिक अभ्यास घर में ही करने लगे। धीरे-धीरे इनका प्रभाव बढ़ने लगा कई प्रकार के चमत्कारिक चरित्र स्वभाव से ही घटित होने लगे, एक दिन अकस्मात् एक घटना घटी, सिख समुदाय के किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के पुत्र का अकस्मात् खेलते-खेलते देहावसान हो गया। यह घटना इतने आश्चर्य की थी लड़के को कुछ दु:ख नहीं था अकस्मात् खेलते-खेलते यकायक प्राण निकल गये लड़का बड़ा होनहार मालूम पढ़ता था लड़ता था लड़के के माता-पिता और कुटुम्बी जन महान दु:खी थे ही उनके साथ-साथ उस गाँव के वासी सभी लोगों को इस बच्चे की मृत्यु से बड़ा भारी शोक था। अन्तत: अन्त-क्रिया तो करनी ही थी। इसलिए सब लोग उस बच्चे के शव को लेकर शमशान भूमि की ओर चल पड़े। जिस समय यह सब बातें सांईदत्त के कानों में पड़ी। तो उन्होंने पूँछा कि इस बच्चे की मृत्यु कैसे हो गई है। पं. जी के पूँछने पर लोगों ने सही-सही हकीकत बतलाई। पूरा-पूरा वृत्तान्त सुनकर साईद्रत्त ने लड़के के शव को वही रूकवा लिया, और कहा भाई चिन्ता मत करो लड़का जिन्दा है। यह कहकर पं. जी ने लड़के के शव को देखा और कुछ उपचार करना शुरू कर दिया पंडित जी ने पवित्र जल और अक्षत लेकर मृत लड़के के शव से दक्षिण दिश्त की ओर फेंक दिये और लोगों से कहां भाई दक्षिण दिशा की ओर लगभग दो या चार फुट का रास्ता छोड़ दो। जिससे उपचार का कार्य ठीक हो सके, तदुपरान्त लड़के के शव पर उपचारित करके पण्डित जी ने जो लार्ग खाली करा लिया था उधर उपचारित जल ओंर चावल फेंक दिये। जिसके फल स्वरूप चार पांच मिनट के बाद में उस मार्ग से एक बहुत बड़ी और बहुत डरावनी सूरत की एक स्त्री दौड़ती, रोती पीटती चिल्लाती आई। और हाथ जोड़कर पण्डित जी से कहा मुझे क्यों याद किया है और क्या आज्ञा है। पण्डित जी ने रोष भरे शब्दों में कहा क्यों री दुष्टे! तूने इस सरल चित्त वाले बालक के प्राणों को क्यों छीन जिया इसके प्राण क्यों निकाल लिए, यह अपने माता पिता का अकेला ही बेटा था। पता नहीं तूने कितने घोर पाप किये हैं, जिनके फलस्वरूप तुम्हें यह योनि प्राप्त हुई है। और अब जो घोर पाप कर्म करेगी तो उसका और भी घोर परिणाम भोगना पड़ेगा इसलिए जल्दी इसके प्राणों को वापिस कर किन्तु विकराल स्वरूपा देवी ने कुछ भी जवाब न दिया। पण्डित जी ने पुन: क्रोध में कहा क्यों री दुष्ट तू बोलती नहीं। उसने उत्तर दिया कि प्राण वापिस करने में तो विवश हूँ मुझे और कोई आज्ञा दीजिए उसका मैं तत्काल पालन करूँगी। पंडित जी ने कहा नहीं मुझे प्राण वापिस करने ही पड़ेंगे। यह कहकर पंडित साईदत्त ने नाई से उस्तरा मंगाकर अपनी जंघा के बाल काटने प्रारम्भ कर लिये। परिणाम स्वरूप उस राक्षसी के सिर के बाल गिरने लगे और वह बहुत पीड़ित हुई एवं दु:खित मन से पंडित जी से बार-बार क्षमा याचना करने लगी। परम विनय पूर्वक उस राक्षसी ने कहा कि हे महाराज इसके प्राण तभी वापिस किए जा सकते हैं जब कि आहुति दे दे, उसके ऐसा कहने पर अपने प्राण देने को कोई भी तैयार न हुआ। किन्तु वह राक्षसी प्राण लेकर प्राणों के बदले में ही प्राण वापिस कर सकती थी, अत: इस बालक के कुटंवियों ने एक भेंस की बलि देकर उस त्रिकरालरूपा राक्षसी को शान्त किया और उस बच्चे के प्राण वापिस कराये। इस आश्चर्यप्रद घटना को देखकर उस गाँव तथा आस-पास सभी जगह पंडित जी की ख्याति सूर्य की धूप की मानिंद फैल गई। सभी लोग बहुत बड़ा सम्मान करने लगे। पंडित सांईदत्त जी महाराज अपने समय के न केवल मंत्रोपचारक थे प्रत्युत प्रख्याति प्राप्त एक अद्वितीय विद्वान भी थे। कुछ समय बाद आपके कुटुबियों ने आग्रह पूर्वक आपका विवाह कराया एवं अब आप ग्रहस्थ

जीवन में परिवर्तित हो गये। एक बार एक ऐसी घटना घटी जो इनके प्रान्त में नहीं हुई थी। जिसके कारण आटारी गाँव के प्रख्याति प्राप्त सरदार ने विद्वान ब्राह्मणों को बुलाकर वृष्टि-यज्ञ कराया। उसमें आपको भी आमन्त्रित किया गया और आप अपने आत्माभिमान को दृढ़ रखते हुए वहाँ नहीं गये किन्तु जब वृष्टि-यज्ञ का कोई परिणाम निकलता हुआ नहीं दिखाई पड़ा तो आप अपने ही मन से यह जानने कि यज्ञ में क्या हो रहा हैं वहाँ चले गये। वहाँ पहुँचते ही सब विद्वान पण्डितों ने आपका सम्मान किया वे ब्राह्मण लोग अपने साधारण तरीके से ही घृत कपूर आदि से ही अग्नि का आधान करते थे किन्तु इनके पहुँचते ही आपने वेद ऋचाओं का सस्वर पाठ किया। परिणाम स्वरूप थोड़ी देर में हो महान वृष्टि हुई और सब लोग वाह-वाह करने लगे। कुछ समय के बाद आपके घर में दो पुत्रों का जन्म हुआ जिनका नाम आपने सुखदयाल और कन्हैयालाल रक्खा। पंडित सुखदयाल एवं कन्हैयालाल का पालन-पोषण दिन प्रति दिन भली प्रकार होने लगा। पंडित साईदत्त जी अपनी ५२ वर्ष की आयु में दिवंगत हो गये और आपके कुटुंबी जन पुन: अपने पूर्वजों की जन्म भूमि नौशहरा में आकर रहने लगे। नौशहरा गाँव में आकर पंडित सुख दयाल एवं कन्हैयालाल का विद्याध्यन तीव्रता के साथ आरम्भ हुआ। थोड़े से ही समय में बड़े विद्वान हो गये। आपके कुटुंबिओं ने दोनों भाइयों का पाणिग्रहण संस्कार कराया। थोड़े समय बाद पण्डित कन्हैयालाल के घर में सम्वत १९०४ कार्तिक कृष्ण नवमी चन्द्रवार को पूज्य पण्डित गंडाराम जी का जन्म हुआ। श्री कन्हैयालाल जी के घर में श्री गंडाराम जी इकलौते पुत्र थे। अत: पंडित जी ने इनके पालन-पोषण एवं शिक्षा का उत्तमोत्तम प्रबन्ध किया। पंडित गंडाराम जी अपने समवयस्क बालकों के साथ खेलने कूदने में खूब भाग लेते थे। आप को जल में तैरने का काफी अभ्यास हो गया था। आपका विद्याध्ययन नौशहरा के निकट एक भडाना नामक गाँव में हुआ। थोड़े समय में यह अद्वितीय विद्वान बन गये। श्री पंडित गंडाराम जी के मन में भी लौकिक कार्य करते हुए कुल परंपरा से प्राप्त वैराग्य की भावनायें सुदृढ़ होने लगी। वह एकान्त में बैठकर यह विचार किया करते थे कि यह जीवन क्यों है, और कैसे निश्रेयस सिद्धि के लिए क्या उपाय करना चाहिए। मनुष्य जीवन की सफलता के लिए क्या करना चाहिए आदि बातों पर विचार करते रहते थे। बहुत से उपाय मन में घूमते थे, किन्तु उपयुक्त साधन व स्थान न मिलने से वह कुछ कर नहीं पाते थे। इसी विचार में थे कि कहीं उपयुक्त साधन और स्थान मिले तो अपनी सफलता प्राप्त करें। कुछ दिन बाद अकस्मात् एक अवसर प्राप्त हुआ। पंडित कन्हैयालाल को विवाह पद्धति की आवश्यकता थी, उन्होंने अपने योग्य पुत्र गंडाराम जी से कहा कि बेटा तुम अमृतसर जाकर एक विवाह पद्धति खरीद लाओ। पिता की आज्ञा पा करके श्री पंडित गंडाराम जी अमृतसर में आए। इनके मन में तीव्रतम यह लगन तो थी ही कि कोई अध्यात्म मार्ग के ऊँचे विद्वान मिलें तो हम उनसे अध्ययन करें। उन दिनों अमृतसर में ज्योतिष विद्या के अद्भुत विद्वान ज्योतिषाचार्य पण्डित विष्णुदास जी निवास करते थे। वह ज्योतिष विद्या में पारंगत और उस समय के प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। श्री पण्डित गण्डाराग जी ने इनसे जाकर अपने अध्ययन के लिए प्रार्थना की, उन्होंने इन्हें पढ़ाना सहर्ष स्वीकार कर लिया। श्री पण्डित गंडाराम जी ने अध्ययन प्रारम्भ कर दिया। पण्डित गंडाराम जी का विद्याकौशल इतना तीव्र था कि शिक्षा देने वाले श्री पण्डित विष्णुदास जी इनकी दिनचर्या और सेवा भाव को देख करके अत्यधिक प्रसन्न रहते थे। इनको बार-बार पुत्र-पुत्र कहकर बुलाया करते थे। श्री पं. गंडाराम जी के मन में भी पूर्ण प्रसन्नता रहती थी, और पण्डित विष्णुदास जी बार-बार आशीर्वाद देते रहते थे 'तुम संसार में यश प्राप्त करो और सब प्रकार से धन धान्य से पूर्ण रहो।' पण्डित विष्णुदास जी की अनुकम्पा से थोड़े ही दिनों में अद्वितीय विद्वान हो गये। विद्या प्राप्ति के बाद पण्डित गंडाराम जी ने सम्वत् १९३३ में कटरा भाई सन्तसिंह अमृतसर में एक दुकान लेकर ज्योतिष का कार्य प्रारम्भ किया। पण्डित जी का ज्योतिष कार्य धूम-धाम से चलने लगा। थोड़े ही समय में इन्होंने ख्याति प्राप्त कर ली। अमृतसर में रहकर के आदरणीय पण्डित गंडाराम जी समुचित ग्रहस्थ धर्म के नियमों का पालन करने लगे। श्री पंडित जी का जीवन परम उज्ज्वल और तपोमय था। वे वेद विहित कर्मों का सदा अनुष्ठान करते रहते थे। उनके जीवन में इतनी शान्ति और ज्ञान का विकास बढ़ रहा था मालूम होता था कि उनके घर में किसी दिव्य आत्मा का प्रादुर्भाव होने वाला है। श्री पण्डित गंडाराम जी के यह दिन परम सुख और शान्ति के दिन थे।

— क्रमश:

यौगिक प्रश्नोत्तरी

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

मेरे मन में बहुत दिन से यह विचार बना रहा कि मैं सभी जिज्ञासु समुदाय के हितार्थ अखिल लोकपावन परम करुणा-सागर योगयोगेश्वर सद्गुरुदेव प्रभु श्री रामलाल जी महाराज की जीवन कथाओं को 'सिद्धयोग' में प्रकाशनार्थ विचार-विमर्श कर लिखाऊँ जिससे उनके पावन चरित्रों को पढ़ करके योग-जिज्ञासु समुदाय का एवं अन्य भी सभी जन साधारण का परम लाभ हो। श्री आनन्दकन्द प्रभुजी (मेरे श्री सद्गुरुदेव जी) पंजाब प्रान्तार्गत सिक्ख गुरुओं की पावन नगरी अमृतसर में ब्राह्मण कुल में अवतरित हुए। श्री प्रभुजी का अवतार जोशी वंशान्तर्गत पवित्रतम सारस्वत ब्राह्मण कुल में हुआ। जब से इस पवित्र ब्राह्मण कुल का वंश-विस्तार आरम्भ हुआ तभी से इस पवित्र कुल में उत्तमोत्तम तपस्वी, धर्म धुरीन, परोपकारी विद्वान जन्म लेते रहे। श्री प्रभुजी के कुल का गोत्र मौद्गल्य एवं मुख्य प्रवर आङ्गिरस एवं भामिश्र मौद्गल्य नाम से विप्रवर है। जिसकी शाखा माध्यन्दिनी एवं कात्यायिनी सूत्र है। जिन जिन महानुभाव विद्वानों ने इस पवित्र कुल में जन्म लिया और अपनी विद्या के अलौकिक प्रभाव को दिखलाया, उनके पावन चरित्र इस समय पूरे-पूरे उपलब्ध नहीं हैं फिर भी इतना कह देना तो आवश्यक ही है कि इस कुल में प्राय: उच्चकोटि के धर्मधुरीन विद्वान एवं सिद्धि शक्तिवान महापुरुषों का समय-समय पर अवतरण होता रहा है जिन्होंने अपने सिद्धि-शक्तियों के चमत्कारों से अपने निकटवर्ती सभी महान समुदाय को चमत्कृत रखा एवं विपुल यशभागी रहे। श्री प्रभुजी के पवित्र कुल में जन्म लेने वाले उनके कुटुम्बीजनों से उनकी वंशावली की परम्परा का जो भी इतिहास उपलब्ध हो सका है, वह इस प्रकार से है—

श्री प्रभुजी की वंशावली में श्री पण्डित हरिराम जी का जन्म पंजाब प्रान्तार्गत जिला जालन्धर के त्रिहरा नामक ग्राम में हुआ, किन्तु सतजल नदी में बार-बार बाढ़ आने के कारण उनको यह गाँव छोड़ना पड़ा और जिला लाहौर में नौशहरा नामक ग्राम को अपना निवास स्थान बनाया। पं. हरिराम जी की पांचवीं पीढ़ी में ब्राह्मण वंशावतंश पं. चढ़तराम जी विख्यात विद्वान हुए, ये पूर्ण विवेकशील वैराग्यवान एवं सिद्धि शक्तिवान महापुरुष थे। इनके मन में तीव्रतम वैराग्य की धारायें हर समय बहती रहती थीं। ये चाहते रहते थे, कहीं घनघोर जंगलों में जा करके तप किया जाय एवं इस नश्वर संसार में नाता तोड़कर अपने परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकें। किन्तु पूर्व जन्मार्जित संस्कारवश पं. चढ़तराम जी को गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश करना पड़ा फिर भी इन्होंने अपने विवेक एवं वैराग्य को कायम रखा और अपने घर में एक पुत्ररत्न के जन्म लेने के कुछ ही समय बाद पं. चढ़तराम जी अपने परम लक्ष्य प्राप्ति के लक्ष्य को सफलीभूत बनाने के लिए कहीं अज्ञात वन्य-प्रदेशों को चले गये, जिनका ढूँढ़ने पर भी बाद में कहीं पता न चला। श्री पं. चढ़तराम जी के घर में जिस बालक ने जन्म लिया उसका नाम साईंदत्त था। बालक साईंदत्त के पूज्य पिता पं. चढ़तराम जी अपने बच्चे के मुख को देखे बिना ही अपने गृहस्थ आश्रम को त्यागकर कहीं अज्ञात दिशा को चले गये थे। अत: उनके बालक साईंदत्त का पालन-पोषण लाहौर के पास नौशहरा ग्राम में ही उनके कुटुम्बी लोगों ने किया। कुछ समय तक नौशहरा गाँव में विनाश के बाद बालक साईंदत्त की माता इनको अपने ही पीहर जिला लाहौर में बुग्याना नामक ग्राम को ले गईं। अब इनका पालन पोषण इनके मामा जी की तरफ से होता रहा। इनके मामाजी ने एक उच्चकोटि के विद्वान के द्वारा इनका अध्ययन कार्य कराया और कुछ ही समय में विद्याध्ययन करते हुए अपनी कुशाग्र बुद्धि से प्रतिज्ञा पा गये, किन्तु प्रारब्धवश इनका मन सदा-सर्वदा वैराग्ययुक्त रहता था। सत्संग करने की अभिलाषा मन में जगी रहती थी। संसार क्या है? हम कौन है? एवं यहाँ कैसे आये हैं? आदि-आदि प्रश्न इनके मन में बार-बार उठते रहते थे। ये चाहते थे कि हमें कोई भी ऐसा साधन उपलब्ध हो जिसके करने से जीवन की यथार्थता का ज्ञान हो एवं अपने उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त कर सकें। इन्हीं विचारों के उधेड़बुन में पड़े हुए थे कि अकस्मात् उन्हें एक रोज कोई महात्मा मिले और उन्होंने उनकी लक्ष्य पूर्ति के लिए एक अनुष्ठान बताया। अनुष्ठान चालीस रोज का था। 'होरहार बलवान के होत चीकने पात' इस लोकोक्ति के अनुसार साईंदत्त एक होनहार बालक तो थे ही थे, उनका वैराग्य एवं सदाचार एवं परिपक्वनिष्ठा उनके मार्ग में सहायक-बन्धु थे। 'जैसीं होय होतव्यता, तैसी उपजै बुद्धि।' अद्भुत बालक साईंदत्त के मन में नीव्रतम भाव जग उठे और वे चुपचाप बिना किसी को बताये रावी नदी के तट पर जाकर महात्मा जी के अनुष्ठान में जाकर लग गये। उन्होंने अपने हाथ से ही एक छोटी सी झोंपड़ी बना ली थी जिसमें बैठ करके वे अपने अपने अभ्यास में अनवर्त लगे रहा करते थे।

इनके घर से निकल जाने के बाद इनकी मां और मामा आदि को बहुत दु:ख हुआ। माता आर्तभाव से रुदन करती थी कि मेरा बच्चा कहां गया? अपनी बहन के करुण विलाप को सुनकर श्री साईंदत्त के मामा और भी अधिक दु:खित हुए, जिसके फलस्वरूप उन्होंने अपने गये भानज की तलाश में दिन-रात एक कर दिया, किन्तु उनका यह प्रयास सफल नहीं हो पाया। अन्त में जब ये लोग हताश हो चुके थे तब किसी ने आकर के

उनको सूचना दी कि साईंदत्त रावी के किनारे छोटी सी झोंपड़ी बनाकर अपनी किसी तीव्रतम साधना में लगे हैं। न खाते हैं और न पीते हैं किन्तु अपने अनुष्ठान के अभ्यास में अनवर्त लगे रहते हैं। इस सूचना को पाते ही श्री साईंदत्त के मामा तत्काल रावी तट पर गये और अनुष्ठान का केवल मात्र एक ही दिन अवशेष था। श्री साईंदत्त का शरीर इस तीव्रतम तपश्चर्या के कारण अत्यन्त दुर्बल हो चुका था। किन्तु हृदय में ज्ञान और और विशुद्ध तेज की धारायें बह निकली थीं। यद्यपि अनुष्ठान की विधि से श्री साईंदत्त के ३६ दिन पूरे हो पाये थे, किन्तु फिर भी उनके मन में पूरा-पूरा ज्ञान का प्रकाश एवं सत्व समृद्धि हो चुकी थी। यद्यपि एक ही दिन के लिए अपने अनुष्ठान को छोड़ना बहुत ही दुष्कर तो हुआ, किन्तु यह अपने मामा जी के आग्रह को टाल न सके एवं उनके साथ ही घर चले आये। घर में आने पर सभी को अत्यन्त हर्ष हुआ। उनकी माता अपने खोये हुये बालक को पाकर निहाल हो गयीं। सन्तप्त हृदय को अलभ लाभ को पाकर शान्ति मिली। इस अनुष्ठान के बाद श्री साईंदत्त और भी कुछ साधनों में लगे रहे, जिनके फलस्वरूप इनके हृदय में आत्म शक्ति का और भी अधिक विकास हुआ और ये कुछ ही समय में महान यश को पा गये। जगह-जगह इनकी शक्तियों की चर्चा होने लगी, जिसके फलस्वरूप आर्त लोगों का समुदाय अपनी-अपनी कामनाओं को लेकर के आने लगा। पं. साईंदत्त अपनी उदार प्रकृति के अनुसार सभी का भला करते थे। इसी प्रकार कुछ समय निकल जाने के बाद इन्होंने गृहस्थ आश्रम में प्रवेश किया, जिसके फलस्वरूप इन्हें क्रमश: दो पुत्र-रत्नों की प्राप्ति हुई। जिनका नाम आपने सुखदयाल एवं कन्हैयालाल रखा। पं. सुखदयाल एवं कन्हैयालाल भी अपने समय के अनौखे विद्वान थे। इनमें से पं. कन्हैयालाल के घर में श्री पं. गंडाराम जी का जन्म हुआ। पण्डित गंडाराम जी अपने पिता के इकलौते पुत्र थे। अत: इनके लालन-पालन में किसी प्रकार की कमी नहीं रही। पं. कन्हैयालाल ने अपने इकलौते पुत्र गंडाराम को उच्चतम शिक्षा दिलाई, जिसके फलस्वरूप कुछ ही समय बाद श्री गंडाराम जी उच्चकोटि के विद्वानों में यश पा गये। श्री गंडाराम जी ज्योतिष विद्या के अद्‌भुत विद्वान थे। कुछ समय जब तक कि पं. कन्हैयालाल जी जीवित रहे, तब तक नौशहरा ग्राम में ही रहकर के श्री पं. गंडाराम जी शिक्षा प्राप्त करते रहे और कुछ ही समय में उच्चतम शिक्षा प्राप्त करके उच्चकोटि के विद्वानों में नाम पा गये। श्री पं. गंडाराम जी के मन में भी अपने पूर्वजों के अनुसार उच्चतम वैराग्य धारायें बहती रहती थीं। यह समय-समय पर विचार करते थे कि नश्वर संसार से उच्चतम प्रगति किस प्रकार से प्राप्त की जाय, जिससे लोक व परलोक दोनों का भला हो सके। एक इनके पिता श्री पण्डित कन्हैयालाल जी ने किसी कार्यवश अमृतसर इन्हें भेजा, वहां पर इन्होंने ज्योतिषाचार्य पं. विष्णुदत्त का नाम सुना। पं. विष्णुदत्त जी का नाम सुनकर ये उनके दर्शनों के लिए उनके स्थान पर गये एवं विद्या प्राप्ति के लिए शरणागति की प्रार्थना की। पं. विष्णुदत्त जी ने इनको होनहार बालक समझ करके अपनी पाठशाला में रख लिया। पं. गंडाराम जी में गुरुसेवा की भावनायें उत्कृष्ठा के साथ भरी ही थीं जिसके फलस्वरूप पं. विष्णुदत्तजी का हृदय इनके प्रति बहुत ही प्रसन्न था और यह बार-बार अपने मुखसे कहते रहते थे- बेटा! तुम विद्या के केन्द्र बन जाओ। पं. विष्णुदत्त जी के आशीर्वाद के फलस्वरूप एवं अपनी कुशाग्रबुद्धि के प्रभाव से समय में अमृतसर में आप पंचायत राज्य के प्रणेता रहे। पंचायत के जो-जो कार्य होते थे उनको अपनी कुशाग्र बुद्धि से तत्काल हल किया करते थे, जिससे इनका यश और वैभव बढ़ता चला गया। इन्हीं दिनों सन् १९३८ के लगभग नौशहरा ग्राम में ही श्री पं. कन्हैयालाल जी का स्वर्गवास हो गया।

अब सब गृहस्थ का कार्व-भार श्री पं. गंडाराम जी के सिर पर ही आ पड़ा, किन्तु अपनी योग्यता से उस सभी कार्य-भार की भली प्रकार वहन किया। कुछ ही समय बाद आपके पवित्र घर में समय-समय पर तीन पुत्र-रत्नों ने जन्म लिया। इनके पवित्र नाम पं. रामशरनदास, पं. तीर्थराम एवं हमारे पूज्यतम गुरुदेव योगयोगेश्वर श्री प्रभु रामलाल जी थे। जिनके पवित्र चरित्र एवं लीलाओं का वर्णन हम आगे के लेखों में करेंगे।

पूर्व प्रकाशित से आगे-२

योगेश्वर चरित्र-माला

(अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज)

हम अपने इससे पहले के लेख में योगेश्वर सद्गुरु देव प्रभु श्री रामलाल जी महाराज की वंश-परम्परा का थोड़ा सा वर्णन कर चुके हैं जिसको पढ़ करके विज्ञ पाठक यह भली भाँति समझ गये होंगे कि जिस पवित्र कुल में मेरे गुरुदेव योगयोगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज का पावन अवतरण हुआ वह कितना प्रशंसनीय वंश-विस्तार है, जिसमें सम्मान प्राप्त उच्च आत्माओं का अवतरण समय-समय पर होता ही रहा है। इसी पवित्र ब्राह्मण कुल में सम्वत् १९४५ चैत्र शुक्ला नवमी के दिन परम पूज्य योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज का अवतरण हुआ। श्री प्रभु जी के अवतार ग्रहण के समय पहले से ही शुभ लक्षणों का महान उदय हुआ। श्री पं. गंडाराम जी ने दिव्य स्वप्न देखा कि उनका घर महान प्रकाश से भर गया है। कोई महापुरुष बैठे हुए हैं जिनकी स्तुति देव गन्धर्व मुनि सिद्ध एवं चारण लोग गद्गद् कण्ठ से कर रहे हैं। आकाश से दिव्य सुमन-वर्षा हो रही है। दिव्य नृत्य एवं गायन की सुमधुर ध्वनियें आकाश तक को निनादित कर रही हैं। वही महापुरुष यकायक बालक के रूप में बदल गये और गोद में चढ़ने की अभिलाषा से मन्द-मन्द मुस्कान यकायक बालक के रूप में बदल गये और गोद में चढ़ने की अभिलाषा से मन्द-मन्द मुस्कान कर रहे हैं। इस दिव्य स्वप्न के बाद ज्योंही पं. गंडाराम जी की आँखें खुलीं तो उन्होंने देखा कि उनके घर में पुत्र-रत्न ने जन्म लिया है और इस अखण्ड तेज को धारण करने वाले अद्भुत बालक को गोद में पा करके उनकी सह धर्मिणी माता श्रीमती भागवन्तीदेवी जी सब प्रकार से सुखपूर्वक हैं। उनको किंचित् भी प्रसव जनित कष्ट नहीं है। नहीं किसी प्रकार की अशुद्धि को कोई आभास है। श्री माता भागवन्तीदेवी जी ने भी यही अनुभव किया कि उनका घर तेज से परिपूर्ण है और उनके बच्चे के जन्म लेने पर घर में सुख और शांति की वर्षा इतस्तत: चारों ओर से हो रही है। श्री आनन्दकन्द योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज के अवतार दिवस के वर्षों पहले से ही इस घर में सुख-सम्पत्ति का बास हो गया था। श्री पं. गंडारामजी का यश दिगदिगान्तराल में फैल चुका था उनकी ज्योतिष-विद्या की प्रशंसा दीन दयालुता परोपकार परायणता आदि गुणों का मनुष्य मात्र बखान करते थे। पास पड़ौसी सभी अपनी-अपनी कामनाओं को लेकर पंडित गंडारामजी से मिलना चाहते थे। वे सभी चाहते थे कि किसी भी प्रकार पंडित गंडाराम जी से थोड़ी सी बात करलें। सभी के मन में यह आभाषित होता था कि उनको पंडित गंडाराम जी से कुछ भी बात करने का मौका मिल जाये। पुत्र-जन्म बहुत ही खुशी का दिन था। सूर्य उदय होने के बाद बधाइयों पर बधाइयाँ आने लगी। नगर की प्रौढ़ा स्त्रियाँ पंडित गंडाराम जी के घर आ आकर मंगलगान करने लगी। बन्दीजन विरुदावली का बखान करने लगे। याचक लोग समूह के समूह गलियों में खड़े हो करके पंडित जी की जय हो, नव लाल की जय हो की ध्वनि का उच्चारण कर रहे थे। श्री पंडित जी ने भी सभी का पूरा-पूरा सम्मान किया। श्री आनन्द कन्द योग योगेश्वर प्रभु जी रामलाल जी के अवतार के बाद श्री गंडाराम जी का घर तो सब प्रकार की सुख-सम्पत्ति से भर ही गया किन्तु उनके अतिरिक्त अन्य पास-पड़ौसी भी आमोद प्रमोद में भरे रहने लगे। जैसा कि कथन है।

यश्मिन देशे वशेद्योगी, ध्यान योग विचक्षणा:।

सोपि देशो भवेत पूत: किं पुनस्तस्य बान्धवा।।

— क्रमश:

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

जिस समय परम योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज की आयु लगभग पाँच साल की थी। उसी समय विद्याध्ययन का उचित काल जानकर उनके पिता पण्डित गंडाराम जी ने उनको शिक्षार्थ एक पाठशाला में भेजना आरम्भ किया। अध्यापक लोगों ने हिन्दी नागरी भाषा का पढ़ाना आरम्भ किया। उन्होंने वर्णाक्षरी बोध कराने के लिए अपने शिक्षण के ढङ्ग से शिक्षा देनी प्रारम्भ की। किन्तु सभी अध्यापकों को यह आश्चर्य सा होता था कि जिन अक्षरों को वे सिखलाना चाहते थे, वह सब इनको पहले से ही याद मिलते थे। सभी अध्यापक अपने मन में विचार करते थे, यह कैसा बालक है कि सुनने मात्र से ही इसको पहले से ही सब कुछ याद है। कह नहीं सकते कि यह बालक मनुष्य लोक में अवतरित हुआ कोई देवता है, ऋषि-मुनि या योगी है। मालूम पड़ता है कि सभी विद्यायें इसकी पढ़ी-पढ़ाई हैं। थोड़े ही समय में अपनी बाल-लीला के अनुसार वहाँ का अध्ययन जल्दी ही समाप्त कर दिया। अध्यापक लोग एक बात का और आश्चर्य देखते थे कि वे लोग कभी-कभी कार्य की विचार चिन्ता में मग्न हो जाया करते तो श्री प्रभुजी अपने आप ही उनकी चिन्ता का प्रकरण शुरू करके कह दिया करते थे कि पण्डित जी! आप क्यों चिन्ता कर रहे हैं, यह काम तो आपका बिल्कुल-बिल्कुल बन जायेगा। बड़े भारी आश्चर्य की बात यह थी कि जिस-जिस काग के विषय में प्रभुजी कहते वह तत्काल बन ही जाया करता था। इस प्रकार की कई एक घटनायें घटीं। पाठशाला में इस प्रकार का भाव प्रकाशित सा हो गया कि कोई भी ऐसी समस्या आती तो सभी लोग इनसे पूछने लगते और जो कुछ श्री प्रभु जी बतला देते वह नितान्त सत्य होता था। इसके फल स्वरूप सभी लोग श्री प्रभुजी से प्यार करने लगे।

इधर पं. श्री गंडाराम जी ज्योतिषी ने अपने बालक का बुद्धि-कौशल देखकर अपने घर पर ही ज्योतिष विद्या का अध्यापन प्रारम्भ कर दिया। पण्डित गंडाराम स्वयं भी बहुत चकित थे कि उनका यह बालक भी अद्‌भुत बातें कह देता है, जो उनकी बुद्धि में भी नहीं आती थीं। अपने बालक की बुद्धि-कौशल पर पण्डित जी को बहुत ही आश्चर्य था और अपने मन में यह विचार किया करते थे कि हमारे घर में यह बालक साधारण बालक नहीं प्रत्युत बालक के भेष में कोई महापुरुष योगिराज है। इसके अतिरिक्त पाठशाला और घर में भी अध्ययन काल के अतिरिक्त समय में श्री प्रभु जी गम्भीर मुद्रा में चुपचाप बैठे रहा करते थे। यह मालूम पड़ता था कि यह किसी गहन विषय पर विचार कर रहे हैं। जिस समय श्री प्रभुजी अपनी विचार मुद्रा में बैठते थे, उस समय इनके मुख-मण्डल पर एक अलौकिक तेज सा छा जाया करता था, जिसको देखकर हर व्यक्ति अनुमान करता था कि यह अवश्य ही कोई महापुरुष हैं। श्री प्रभुजी किसी संत महात्मा योगी का आना-जाना सुनते तो तत्काल उनके दर्शनार्थ चले जाया करते थे। कई बार श्री प्रभु जी के पिता पं. गंडाराम ज्योतिषी जी ने पाठशाला में जाकर पूछा कि हमारा बच्चा कहाँ गया है? सभी अध्यापक एक स्वर होकर कहते कि वह अद्‌भुत बालक है, पाठशाला में तो प्राय: नहीं रहता है। किन्तु इसमें भी कोई शङ्का नहीं, वह पाठशाला के सभी विद्यार्थियों में उत्कृष्ट है एवं सी को पढ़ा भी सकता है।

श्री प्रभु जी को इस बाल्यावस्था में ही कई-कई प्रकार की कला-प्रकाशित हुईं। यन्त्र-मन्त्र तन्त्र एवं कई अद्‌भुत शक्तियों का ज्ञान इनको स्वत: ही था। जिसका परिणाम तत्काल लोगों के सामने आ जाया करता था। आस-पास गली-कूचों में यह प्रख्याति फैल गई थी कि पं. गंडाराम जी के घर में एक ऐसे बालक ने जन्म लिया है कि जो कथन मात्र से ही सभी के दु:ख दूर कर देता है। अत: सभी लोग इस अल्प वयसीय अवस्था में भी बार-बार दर्शनार्थ आया करते थे। श्री प्रभु जी के मन में इस बाल्यावस्था में ही एक प्रबल अद्‌भुत शक्ति का विकास हो गया था। जिस किसी व्यक्ति को सर्प या बिच्छु काट जाया करता और कोई भी आकर यह सूचना देता कि अमुक व्यक्ति को सर्प या बिच्छू ने काट लिया है तो उसके मुख पर एक थप्पड़ लगा देते थे, जिसके फलस्वरूप उस व्यक्ति का विष तुरन्त उतर जाता था, चाहे वह कितनी ही दूरी पर क्यों न हो।

एक बार अकस्मात् एक घटना घटी। शहर से कुछ बाहर दुर्ग्याना मन्दिर के सामने कोई योगिराज महात्मा आ करके ठहरे। इनकी ख्याति सारे अमृतसर शहर में बिजली के समान फैल गई थी। घर-घर, गली-गली, कूँचे-कूँचे से स्त्री-पुरुष उनके दर्शन को धड़ा-धड़ आने लगे। श्री प्रभु जी के भी कानों में उनके आने का समाचार पहुँचा एवं अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार श्री प्रभुजी उनके दर्शनार्थ दुर्ग्याना मन्दिर गये एवं उन महात्माजी के सम्मुख बैठ गये। ज्योंही श्रीप्रभु जी उन महात्मा के सम्मुख बैठे त्योंही महात्मा ने आश्चर्य-चकित होकर इनकी तरफ देखा और देखकर थोड़े-थोड़े मुस्कराने लगे। श्री प्रभुजी महात्मा जी से थोड़ी दूर पर बैठे थे। महात्मा जी ने बड़े प्यार और आदर के साथ कहा कि भाई तुम इतनी दूरी पर क्यों बैठे हो? यहाँ आगे आओ, यह आसन पड़ा है, इस पर मेरे पास बैठो। महात्मा जी के पास उस समय धनी मानी प्रतिष्ठित पुरुष

बैठे थे। उन सभी को यह आश्चर्य हुआ कि महात्मा जी तो किसी से बात नहीं करते थे, किन्तु यह क्या बात है? ये कैसा अद्‌भुत बालक है कि जिसको महात्मा जी ने अत्यन्त आदर के साथ अपने पास बिठा लिया है। थोड़ी देर बैठे रहने के बाद महात्मा जी श्री प्रभु जी से कई प्रकार की बातें करते जाते और मुस्कराते जाते अन्य किसी से बोल ही नहीं रहे थे। सभी को आश्चर्य था कि महात्मा जी का यह क्या चरित्र है? कुछ समझ में ही नहीं आ रहा। महात्मा जी घण्टों से ऐसी-ऐसी एक ही बच्चे से बात कर रहे हैं। जैसे कोई बहुत ही पुराना परिचित साथी मिल गया हो। महात्मा जी आत्म लाभ-सा अनुभव कर रहे थे। बातचीत के दौरान में श्री प्रभु जी ने उन महात्मा जी से कहा कि महाराज जी मैंने योग की बहुत बड़ी महिमा सुनी है। योग क्या चमत्कारिक विद्या है एवं योग किसे कहते हैं, मैं यह जानना चाहता हूँ। कृपा कर मुझे कुछ समझाइये। महात्मा जी ने इस अद्‌भुत प्रश्न को सुनकर इस अद्‌भुत बालक को उत्तर दिया कि तुम योग के जिज्ञासु नहीं प्रत्युत योग के भास्कर एवं उसके दाता हो। समय इस बात को बतायेगा कि तुम कौन हो? क्या हो? आदि-आदि बातें बहुत देर तक होती रहीं। आदि-आदि बातें बहुत देर तक होती रहीं। अन्त में जब श्री प्रभु जी उठकर वहां से चले आये तो महात्मा जी ने अन्य लोगों की ओर देखा एवं उनकी जिज्ञासानुसार उनके यथोचित प्रश्नों का उत्तर देना प्रारम्भ किया।

बालकपन में श्री प्रभु जी कुछ आश्चर्यप्रद खेल अपने साथियों को व अन्य सभी लोगों को दिखलाया करते थे। जिनमें से उनकी बाल-लीला के खेलों में से एक खास खेल यह भी था कि पानी के भरे किसी कटोरे या थाली में एक घृत-दीपक जलाकर रख दिया करते थे और फिर इस दीपक से कहते, अच्छा चल थाली के आस-पास। आज्ञा पाते ही वह दीपक थाली के आस-पास जोरों से घूमने लगता जैसे कोई बिजली या यन्त्र से घुमा रहा हो। इसके अतिरिक्त उस दीपक से कहते थे कि उठ ऊपर को तो, बैठे थे। उन सभी को यह आश्चर्य हुआ कि महात्मा जी तो किसी से बात नहीं करते थे, किन्तु यह क्या बात है? ये कैसा अद्‌भुत बालक है कि जिसको महात्मा जी ने अत्यन्त आदर के साथ अपने पास बिठा लिया है। कुशाग्र बुद्धि से उच्चतम शिक्षा प्राप्त करते रहे। एक और आश्चर्य की सबसे बड़ी बात यह थी कि श्री प्रभु जी के प्रेम को अपने प्रति अधिकाधिक मानते थे। जिन-जिन बच्चों का जितना-जितना अधिक श्रीप्रभु जी के चरणार्विन्दों में स्नेह था। वे सभी लोग सभी प्रकार से सुखी, पूर्ण स्वस्थ एवं अपनी कला-कौशल में परम निपुण रहते थे। श्री प्रभु जी की बाल-सखा मण्डली जिस-जिस प्रकार अपने खेलों का आयोजन करती एवं श्री प्रभु जी उनमें कोई परिवर्तन करना चाहते तो तत्काल परिवर्तन कर देते एवं सभी बालक श्री प्रभु जी के बताये खेलों को तत्काल स्वीकार कर लेते। हर्षित हो करके उन सभी खेलों में मन लगाकर खेलने लगते। सभी बालक श्री प्रभु जी की उपस्थिति के बिना अपने खेलों को न के बराबर समझते थे। श्री प्रभु जी ज्योंही खेलों में शामिल हो जाते, तभी उन सभी बालकों के प्राण प्राणों में आ जाते। श्री प्रभु जी अपने बाल-सखाओं को साथ लेकर कभी किसी उद्यान में खेलने जाते, कभी वन तड़ाग देखते, कभी दौड़ लगाते। इसी प्रकार विभिन्न बाल-क्रीड़ाओं में लगे रहा करते थे। कभी-कभी बाल सुलभ क्रीड़ाओं में इतनी देर हो जाती थी कि माता-पिता अत्यन्त व्याकुलता के साथ इधर-उधर तलाश करने लग जाते थे। जब तक श्री प्रभु जी अपने बाल-क्रीड़ाओं से निबट कर घर नहीं आ जाते, तब तक माता-पिता एवं घर के सभी कुटुम्बी विगत प्राण से होकर प्रतीक्षा में रहा करते थे। सभी यही चाहते थे कि यह हमारी आंखों का तारा हमारा यह लाल हमारी आँखों के सामने यहीं खेलता रहा करें। सबके मन में यही मानस धारणा बनी रहा करती थी।

अपने बाल्यकाल में श्री प्रभु जी कई ऐसे मनोरंजक कार्य करते, जिनको देखकर सभी लोग परम आह्लादित एवं सुखी रहते। ऐसा था सिद्धों के महा सिद्ध परम योगेश्वर श्री प्रभु जी का बाल्यकाल।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

अवधूतानी पर कृपा

मुरादाबाद के पास जसपुर नाम के गांव में उस अधिकारी जिज्ञासु कुम्हार के बालक पर कृपा कर श्री प्रभु जी ने शक्तिपात किया जिसके फलस्वरूप उसको अनायास ही खेचरी मुद्रा सिद्ध हो गई। वह कुम्हार का बालक बड़े ही आश्चर्य में था कि उसके साथ यह अकस्मात् क्या दृश्य हो रहा है। जिससे वह चेतना शून्य होकर जड़वत् समाधि में बैठा रहता था, आनन्द इतना आता था कि जिसका वर्णन किया ही नहीं जा सकता था। वह बच्चा जब समाधि से उठता था तो ज्ञान और तेज का नशा उसके सारे शरीर में छाया रहता था। श्री आनन्द कन्द प्रभुजी ने एक बात और उसको समझा दी थी कि जब भी वह ध्यान में बैठे तो वह यह सोच कर बैठे कि में इतनी देर समाधि मग्न रहूँ व इतने समय के बाद उठ जाऊँ। ऐसा ही होता था। जितने समय का संकल्प करके वह बालक बैठता उतने ही समय के बाद उसकी आँखें अपने आप खुल जाया करती थीं। जिस समय वह समाधि से उठता था तो वह देखता था कि उसकी जिह्वा अपने आप ही तालुविवर में गई हुई है। ज्योंही वह समाधि से उठता था त्योंही जिह्वा भी तालु विवर से अपने आप निकल जाया करती थी। कुछ ही समय के बाद वह बच्चा अपने आप चलते-फिरते उठते-बैठते सोते और जागते अपने आप को समाधिस्थ ही देखने लगा। समाधि खुल जाने के बाद जब वह अपने नैत्यिक कार्य कलाप में लगता तो उसको ज्ञान ध्यान का एक नशा छाया रहने लगा। उसके उस जीवन में गुरु नानक देव की यह उक्ति चरितार्थ दिखलाई देने लगी। कि- ''नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रात।'' उस बच्चे को हर समय यह लगन रहती थी कि वह थोड़ा बहुत खानपान का कार्य करके जल्दी से जल्दी अपने ध्यानाभ्यास में बैठ जाय। इसी अभ्यास काल में ही कई-कई प्रकार की विशेष क्रियायें अपने आप ही होने लगीं और वह उनका ज्ञाता बन गया। कुछ समय जसपुर में निवास कर लेने के बाद श्री प्रभु जी के मन में भ्रमण कर लेने का विचार दृढ़ हो गया। श्री प्रभु जी ने अपने मन में विचार किया कि अब हम कुछ समय के लिये भगवान श्री राम की जन्मभूमि अयोध्या नगरी में चल कर रहें। यह विचार दृढ़ हो जाने के बाद श्री प्रभु जी भ्रमणार्थ अयोध्या नगरी की ओर चल पड़े, चलते-चलते अयोध्या आ पहुँचे। और वहां कहीं वन प्रदेश में रहने लगे। कुछ दिन के निवास के बाद सरयू तट पर भ्रमण करते हुए एक रोज उन्होंने एक महिला अवधूतानी को देखा। जिसने अपने शरीर में राख लपेटी हुई थी, नग्न एवं अवधूत वेश में थी और बड़े दुःखी मन से रो रही थी। उसकी ऐसी हालत देखकर श्री प्रभु जी ने कहा कि देवी तुम रो क्यों रही हो। बहुत देर तक तो उसने कोई उत्तर ही नहीं दिया किन्तु श्री प्रभु जी के बार-बार पूछने पर उसने कहा कि महारजा! मैं साधुओं को रो रही हूँ। श्री प्रभु जी ने कहा साधुओं ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है साधुओं को क्यों रो रही हो। अवधूतानी ने उत्तर दिया कि महाराज! मेरे मन ने यह अनुभव किया है कि संसार भर का असत्य, प्रपंच, कपट इन साधुओं ने ही अपने अन्दर रख लिया है। यह लोग केवल प्रापंचिक बातें करते हैं, यथार्थता का लवलेश भी इन लोगों में नहीं मिलता, मैं अपने बचपन की आयु से एक गृहस्थी पण्डित की आज्ञानुसार अनवरत योगाभ्यास किया करती थी, और मेरे अनुभव भी दिन दिन बढ़ रहे थे। मैं अपने अभ्यास में आनन्द का अनुभव करती थी। किन्तु तीर्थाटन में विचरते हुए मुझे एक विरक्त वैरागी महात्मा मिले। उन्होंने अपनी आंखों पर शालिग्राम की मूर्ति लगाई हुई थीं। मैंने उनकी आँखों पर लगे हुए शालिग्राम की मूर्तियों को देखकर कहा महाराज आपने यह क्या कर रखा है तो उस महात्मा ने उत्तर दिया कि हमारी आँखों में ये शालिग्राम भगवान् के दर्शन होते रहते हैं। इसलिए मैंने ये आंखों पर लगाये हुए हैं। महात्मा जी की ऐसी बात सुनकर के मैंने उनसे प्रार्थना की कि महाराज आप कृपा करके मुझे भी चतुर्भुज भगवान् के दर्शन करा दीजिए, महात्मा ने उत्तर दिया हां-हां ऐसी कोई बात नहीं तुम सेवा करो सेवा से मेवा मिलती है तुम्हें भी दर्शन हो जायेंगे। महातम जी के ऐसा कहने पर मैं उनकी सेवा में लग गई एवं वर्षों तक लगातार सेवा करती रही, काफी दिक्कत उठाई उनकी भर्त्सना और ताड़ना सही। किन्तु परिणाम कुछ भी नहीं निकला। कई साल की सेवा के बाद महात्मा जी ने कहा कि अब तुम एक भण्डारा रचाओ। साधुओं की दक्षिणा का प्रबन्ध करो एवं यज्ञ कराओ तब तुम्हें दर्शन प्राप्त होंगे। मैंने वह भी सब कुछ किया। बाद में महात्मा जी ने एक रेशमी रूमाल मँगाया और कहा इसको बिछा दो इस पर प्रकट होकर भगवान दर्शन देंगे। तुम और जिन-जिन को बुलाना चाहो दर्शनार्थियों को बुला लो। भगवान की भेंट दक्षिणा जो-जो चढ़ाना चाहें मन खोलकर चढ़ाना चाहिए। क्योंकि जीवन में यह अलभ लाभ है। जीवन में भाग्यवानों को ही मिलता है। मैंने यह सभी कुछ किया। भगवान के आमन की सूचनायें लोगों को दीं। किन्तु बात वही निकली ''खोदा पहाड़ निकली चुहिया।'' महात्मा जी ने एक बड़ा सा

डिब्बा निकाला उसमें से एक छोटा सा डिब्बा और निकाला उस डिब्बे में से एक डिबिया निकाली और लोगों से कह दिया कि तुम कीर्तन करो भगवान प्रकट होंगे। जब जोर का कीर्तन होने लगा तो उस डिबिया में से एक डिबिया और निकाली उस डिबिया में से लपिटी हुई एक रूमाल की गांठ निकाली। उस रूमाल की गांठ के अन्दर हरे रूमाल में लपिटी हुई एक छोटी सी शालिग्राम की मूर्ति निकाली। उस मूर्ति को आंखों में और सिर पर लगाकर उस बिछे हुए रूमाल पर विराजमान कर उस महात्मा ने दण्ड प्रणाम किया एवं नाच कूद कर जोर-जोर से जय बोलने लगे। और हम लोगों से कहा कि तुम लोग भी दण्ड प्रणाम करो। औश्र भेटें चढ़ाओ यही साक्षात् भगवान हैं। मेरे आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा। मैंने महात्मा जी से धीरे से कहा कि महाराज इन शालिग्राम भगवान के दर्शन तो नित्य हम घर पर भी करते थे। मेरा ऐसा कहने पर महात्मा जी मुझ पर बिगड़ पड़े और कहने लगे अरी! तू क्या बकती है हमने तो चारों धाम की यात्रा करके नेपाल धाम की पूरी यात्रा करके प्राप्त किया है। जिनको तुम ऐसा वैसा कहती हो चली जाओ यहाँ से कलिकाल में तुम और कैसे दर्शन चाहती हो यही तो साक्षात् नारायण हैं। महात्मा जी की ऐसी आज्ञा प्राप्त करके मैं चुपचाप वहां से चली आई। फिर एक वेदान्ती से भेंट हुई। उन्होंने मुझे कुछ और ही प्रकार का उपदेश दिया। उन्होंने मुझसे कहा कौन दर्शन किसके दर्शन यह सब माया है। जिसको तुम ढूढ़ना चाहती हो वह सब कुछ तुम ही तो हो। बस अहं ब्राह्मस्मि का रटन करती रहो इसी में तुम्हारा कल्याण है। यह कहकर वह अवधूतानी और भी जोर-जोर से रोने लगी और कहने लगी महाराज मैं भटक गई हूँ, अब क्या करूँ कहां जाऊँ। कोई भी उपाय समझ में नहीं आ रहा है। मुझे एक मात्र मेरे बचपन वाले योगाभ्यासी गुरु याद आ रहे हैं। जिनकी कृपा से मुझे कुछ शांति लाभ हुई थी। श्री प्रभुजी ने उसकी दीन दशा की बातें सुन कर उसको सान्त्वना दी और पुन: योगाभ्यास करने की आज्ञा प्रदान की। वह अवधूतानी श्री प्रभुजी की आज्ञा पाकर अपना पूर्ववत् अभ्यास करने लगी और पहले की ही तहर उसका मन एकाग्र होने लगा। श्री प्रभुजी ने उसकी दृढ़ता को देखकर उस पर शक्ति-पात किया जिसके फलस्वरूप वह सब प्रकार से निहाल हो गई। जिसका नाम था अवधूतानी शलमा। पर्वत और पञ्च महाभूतों के कार्यरूप स्नेह, ऊष्णता आदि धर्मों को ग्रहण करके और विविधि विस्तार बनता चला जाता है। ज्ञान अर्थ का आश्रय नहीं, अपितु अर्थ ज्ञान का आश्रय है। इस प्रकार से गुण-विस्तार अधिकाधिक बढ़ता चला जाता है, किन्तु इस प्रकार गुण-विस्तार हो जाने के बाद भी वस्तु तत्व में एकत्व से दिखाया जाता है।

जिस प्रकार किसी मनुष्य के एक शरीर के अन्दर महत्तत्व, बुद्धिसत्व, अस्मिता और उसके अविशेष तन्मात्रायें आदि और उसके स्थूल परिणाम आकाश, वायु आदि सभी रहते हैं। क्योंकि इन सबका एक शरीर में समन्वय है, इसलिए वस्तु-तत्व से एक ही माना जाता है। ज्यों-ज्यों इन गुणों का विभाजन बढ़ता जाता है, वह पथ भेद से भिन्न-भिन्न होते चले जाते हैं। योगी लोग ही अपनी सूक्ष्मातिसूक्ष्म बुद्धि के द्वारा इस गुण-विस्तार को समझ पाते हैं। इससे आगे के लखे में वस्तु साम्य होने पर भी चित्तों के भेद से मार्ग किस प्रकार से विभाजत हो जाते हैं, समझाने का प्रयत्न करेंगे।

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

वन-तीर्थ यात्रा करने के बाद आनन्दकन्द श्री प्रभुजी जसपुर नामक स्थान पर पहुँचे। श्री प्रभुजी के वन तीर्थ से चले आने के बाद लक्ष्मणदास वैरागी ने अपनी योग दीक्षा को चरितार्थ किया। वहाँ रहकर वह धूमधाम से योग-प्रचार करने लगा। प्रभुजी के वहां से चले आने के बाद लक्ष्मणदास वैरागी ने यह दिखला दिया कि वह एक योगी गुरु का शिष्य है एवं योग का वेत्ता है। वह अपने वैरागीपन को भूलकर योग-सिद्धान्तों पर आरूढ़ हो गया। जसपुर में श्री प्रभुजी अपने प्यारे बच्चे की योग-प्रचार सम्बन्धी बातें जब सुनते तो उनका मन आह्लाद से भर जाता था। जसपुर में भी आनन्दकन्द श्रीप्रभु जी के पहुँच जाने के बाद सत्संग का प्रभाव अनवरत चलने लगा। श्री प्रभुजी वहां एक मन्दिर में ठहरे थे। वहाँ पर सत्संगियों की यातायात बराबर बनी रहती थी और धार्मिक चर्चाओं का प्रवाह बराबर चलता रहा था। एक दिन के प्रसंग में उस मन्दिर में एक कुम्हार के बच्चे की बहुत अधिक चर्चा हो रही थी, उसमें सभी लोग यह कह रहे थे- कुम्हार का लड़का वस्तुत: महात्मा है। उसके अन्दर महात्माओं वाले गुण और धर्म बराबर दिखलाई दे रहे हैं। यह कह नहीं सकते कि वह कितना पढ़ा-लिखा है, किन्तु यह भी सत्य है कि वह प्रात:काल ४ बजे मन्दिर में आ जाता है और आते ही भगवान के गुणानुवाद गाते ही मन्दिर के झाड़ने बुहारने आदि की सेवा करना है और उसके बाद दोपहर के लगभग १० या ११ बजे तक निरन्तर भजन और ध्याम किया करता है। कह नहीं सकते कि वह क्या करता है, किन्तु अनवरत यही देखते हैं कि वह थोड़ी देर किसी मन्त्र का जाप करता है और उसके बाद अपने आप ही उसकी आंखें बन्द हो जाती हैं, मेरुदण्ड सीधा हो जाता है, ठोड़ी कण्ठ में लग जाती है, पेट सिकुड़ कर भीतर की ओर चला जाता है और वह सिद्ध-योगियों की तरह से समाधिस्थ ही करके बैठ जाता है। ये सभी लक्षण उसकी योग-साधना की उत्कृष्टता को बतलाते हैं। जिस समय उस कुम्हार के लड़के की चर्चा वहां इस प्रकार से हो रही थी, तो अकस्मात् वह लड़का भी कहीं से घूमता हुआ मन्दिर में आ पहुँचा। श्री प्रभुजी उस लड़के की योग सम्बन्धी बातें सुनकर मन ही मन बहुत खुश हो रहे थे। यह लड़का कुम्हार जाति में पैदा होने पर भी अवश्य कृपा का अधिकारी है। जबकि सभी लोग इसकी योग-धारणा एवं सिद्धान्तों की प्रशंसा कर रहे हैं। श्री प्रभुजी अपने मन में यह विचार कर ही रहे थे कि उसी समय उस लड़के को वहां आया देख मन में और भी अधिक प्रसन्नता बढ़ी। बच्चे को पास बुलाकर एवं कण्ठ से लगाकर बड़े प्यार के साथ श्री प्रभुजी ने कहा- बेटा! तुम हो तो योग्य! किन्तु तुम्हें अभी खेचरत्व प्राप्त नहीं हुआ। खेचरत्व की प्राप्ति केवल खेचरी मुद्रा से ही मनुष्य प्राप्त कर सकता है। जब तक खेचरी मुद्रा सिद्ध नहीं हो पाती, तब तक वह अधूरा ही रहता है। कुम्हार के उस बच्चे ने श्री प्रभुजी के मुख से खेचरी-मुद्रा की बढ़ाई सुनकर खेचरी और खेचरत्व प्राप्त करने की भावना दृढ़ कर ली और प्रभुजी से प्रर्थना की कि प्रभो! मैंने खेचरी का नाम तो सुना है किन्तु खेचरी मुद्रा क्या है? इसके विषय में मैं कुछ नहीं जानता। आप कृपा करके मुझे खेचरी विद्या का उपदेश दीजिए? श्री प्रभु जी ने कुम्हार के लड़के की जिज्ञासा जानकर खेचरी मुद्रा को सझाया और दोहन चालन आदि की विधि को पूर्ण रूपेण बतला दिया और कहा कि बेटा यदि तुम इस अमर विद्या को पा जाओगे तो सब प्रकार से कृत कृत्य हो जाओगे। यही योगियों का गोपनीय धन है। इस ही खेचरी विद्या को प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले साधू वनों में भटकते फिरते हैं किसी भाग्यशाली मनुष्य को जब कोई सिद्ध पुरुष मिल जाते हूँ और मन में प्रसन्न होकर वह खेचरी का उपदेश कर देते हैं तो वह व्यक्ति अवश्य ही खेचरत्व प्राप्त कर लेता है। एवं अपने आपको अजर अमर बना लेता है। कुम्हार के लड़के ने जब श्री प्रभुजी के मुख से खेचरी मुद्रा की इतनी बड़ाई सुनी तो उसने प्रार्थना की कि हे प्रभो! कृपा कर मुझे खेचरी के सब गुण बतला दीजिये ताकि मैं इसे सीखकर वृतार्थ हो जाऊँ। श्री प्रभु जी ने उत्तर दिया- बेटा सुनो!

रसनामूर्ध्वगां कृत्वा क्षणार्धमपि तिष्ठति विषैर्विमुच्यते योगी व्याधिमृत्यु जरादिभि: न रोगो मरणं तन्द्रा न निद्रा न क्षुधा तृषा न च मुर्च्छा भवेत्तस्य यो मुद्रा वेत्ति खेचरीम्। पीड्यते न स रोगेण लिप्यते न च कर्मणा बाध्यते न स कालेन यो मुद्रा वेत्ति खेचरीम्। चित्तं चरति खेचरस्साजिह्वा चरति खेगता। तेनेषा खेचरी नाम मुद्रा सिद्धै र्निरूपिता।

अर्थात् जो योगी रसना को उर्ध्वविवर में प्रवेश कराकर एक क्षण भी बैठ जाता है वह सभी प्रकार के विषयों से छूट जाता है अर्थात् उसके ऊपर किसी भी प्रकार के विषयों का प्रभाव नहीं पड़ता और न ही कोई कष्ट आता है एवं बुढ़ापे और मौत आदि के दु:खों से छूट कर देवत्व प्राप्त कर लेता है ऐसे साधक को न कोई रोज सताता है न मृत्यु का भय रहता न

तन्द्रा, निद्रादि आदि आलस्य आते न भूख एवं प्यास सताती न किसी प्रकार की मूर्छा आतीं। यह इस खेचरी मुद्रा का महान फल है। कोई रोग दु:ख नहीं देता न कर्म बन्धन को प्राप्त होता है और सब प्रकार से काल भय से बच जाता है जो इस खेचरी मुद्रा को जानता है। इसको खेचरी कहा ही इसलिए गया हैं कि इसके अभ्यास से योगी का मन आकाश में विचरता है क्योंकि जिह्वा भी उर्ध्व आकाश में प्रवेश कर जाती है इसलिए इसका निरूपण सिद्धों ने किया है।

श्री प्रभुजी जब इस खेचरी मुद्रा का गुण वर्णन कर रहे थे वह समय रात के लगभग ८ या ९ बजे का था। गाँव होने के कारण मन्दिर में कुछ अँधेरा था। अँधेरे में ही श्री प्रभुजी के मुख से इस प्रकार वह बालक खेचरी मुद्रा का वर्णन सुन रहा था। यह सुनते-सुनते ही उस बच्चे को बड़ा भारी आश्चर्य हुआ? वह चौंक कर उठ बैठा और पास के कमरे में से एक दीपक उठा लाया उस दीपक को लाकर श्री प्रभुजी के मुखारविन्द को देखने लगा। श्री प्रभुजी ने कहा बेटा! किस आश्चर्य में पड़े हो? क्या देख रहे हो? तुम बड़े हैरान से दिखाई दे रहे हो। तुम्हारे मन में क्या कौतुहलता है? उस लड़के ने श्री प्रभुजी के प्रश्नों का कोई उत्तर तो नहीं दिया। किन्तु चरणों में पड़कर गिड़-गिड़ाकर रोने लगा। और हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि हे दीन बन्धु! अपने इस अधम बालक का उद्धार कीजिए। आपने बहुत दिनों के बाद आकर मुझे दर्शन दिये। हे परम पिता मैं दीपक उठाकर यही पहचान कर रहा था कि आप मेरे करुणाधार भव सागर पार करने वाले परिपूर्णतम् गुरुदेवजी ही है कि जिनकी मैं बहुत दिन से इन्तजार में ही था। प्रभो! अब मैंने भली प्रकार पहचान लिया है आप यहाँ मेरे ही उद्धार के लिए यहाँ आये हैं दो दिन से बराबर ध्यान में मैं आपके दर्शन प्राप्त करता हूँ मेरे गुरुदेव जिन्होंने मुझे ध्यान योग का उपदेश दिया था वो जब अपना शरीर छोड़ने लगे थे तो मैंने उनके चरणों में प्रार्थना की थी कि प्रभो! क्या आप मुझ अपने दीन बच्चे को अधूरा छोड़कर जा रहे हैं? कृपा कर बताइये अब मेरा कल्याण कैसे होगा? उन्होंने अपना शरीर छोड़ने से पहले मुझे बताया था कि बेटा घबराओ मत जितना काम हमारे द्वारा तुम्हारा हो सकता था वह तो हमने कर ही दिया है किन्तु अब हमारा शरीरावधी का समय तो आ गया है। यह शरीर तो हमें छोड़ना ही पड़ेगा तुम्हारा शेष काम हमारा शरीर छोड़ देने के कुछ ही समय बाद एक और महापुरुष जो सब प्रकार से पूरिपूर्ण है एवं जीवों के कल्याण के निमित्त अब भी भूमण्डल पर आये हैं वह पंजाब से ब्राह्मण कुल में उनका जन्म हुआ है उनकी शरण प्राप्त होते ही तुम्हें पूर्ण समाधी हो जायगी एवं खेचरत्व प्राप्त हो जायेगा। मैंने उनसे पूछा प्रभो! यह तो ठीक है किन्तु मैं उन्हें कैसे पहचान सकूँगा तो उन्होंने कहा बेटा! तुम्हें इसकी चिन्ता करने की जरूरत नहीं वे स्वयं ही तुम्हें अपनी पहचान करा देंगे। फिर भी तुम जानना ही चाहते हो तो उनके मस्तिष्क में बांई ओर एक मांस ग्रन्थी सी होगी वह तुम देख लेना। सो प्रभु दीपक लाकर मैंने वही गांठ देखी है दीन-बन्धु आपके सिर में यह गांठ है ही श्री प्रभुजी ने उसके दीन भाव सुनकर उठाकर कंठ से लगा लिया और आज्ञा दी बेटा अब तो रात्रि का समय है तुम अपने घर जाकर विश्राम करो। कल प्राप्त:काल स्नानादि करके पत्र पुष्प हाथ में लेकर आना हम तुम्हें विधि पूर्वक योगोपदेश देकर तुम्हारी समाधी पूर्ण करा देंगे।

दूसरे दिन ऐसा ही हुआ। श्री प्रभुजी ने उस बालक पर शक्ति पात करके खेचरी सिद्ध करादी एवं समाधी लगाने की विधि बता दी जिससे वह पूर्णता लगाने की विधि बता दी जिससे वह पूर्णता को प्राप्त कर कृतार्थ हो गया।

श्री प्रभुजी के संकल्प मात्र से ही उसकी कुण्डलनी जगकर सहस्रार में पहुँच गयी। एवं वह बालक समाधी लीन हो गया श्री प्रभुजी की कृपा से से उसके चमत्कार दिन दूने रात चौगुने हो गये।

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

इससे पूर्व हम अवधूतानि शलमा के विषय में बता चुके हैं। श्री महाराज जी ने उसे योग का उपदेश दिया। जिसके फलस्वरूप थोड़े ही दिनों में वह उत्तम ध्यानावस्था को प्राप्त हो गयी। इसके पश्चात् श्री महाराजजी अवधपुरी से आगे की ओर चल दिये।

जयराम का जिह्वा चापल्य

श्री प्रभुजी अवधपुरी से भ्रमण करते हुए श्री कृष्ण जन्म भूमि मथुरा में आये। जयराम नाम का एक विद्यार्थी कुछ समय से श्री प्रभुजी के साथ था। जब से श्री प्रभुजी के साथ मंडली रहने लगी और दर्शनार्थी अधिक संख्या में आने जाने लगे थे तभी से जयराम में यह दोष आ गया था कि वह दर्शनार्थी जिज्ञासुओं से अलग पेड़े मँगवाकर खाया करता था। श्री प्रभुजी के साथ रहने के कारण जयराम को भी लोग श्रद्धा से देखा करते थे। पर जयराम श्री प्रभुजी से छिपाकर पेड़े मँगवाकर खाने में ही उन लोगों की श्रद्धा का दुरुपयोग किया करता था। यह सब जानकर श्री प्रभुजी ने इस प्रकार छिपाकर पेड़ा खाने के लिए कई बार उसे मना किया, कई बार समझाया। पर उसने अपनी इस गन्दी आदत को नहीं छोड़ा। श्री प्रभुजी ने तब एक दिन उसकी आदत छुड़ाने के लिए काफी तादाद में पेड़े मँगवाकर जयराम को अलग से ले जाकर खाने की आज्ञा दी। जयराम ने खुशी-खुशी पेट भर कर पेड़े खाये। और अन्त में बहुत से पेड़े बच भी गये। जब उसका पेट पूर्णतया भर गया। तब श्री प्रभुजी ने उसे डाटकर जबरन पेड़े खिलाने शुरू किये। थोड़ी देर बाद वह बिल्कुल भी न खा सका। वरन् जबरदस्ती से खाये जाने के कारण सभी पेड़े उल्टी होकर निकल गये। जयराम को उसी दिन से पेड़ों से घृणा हो गयी। तथा उसका सारा जिह्वा चापल्य (जीभ का चटोरा पन) पूर्णतया जाता रहा।

सवाँई ग्राम

श्री प्रभुजी मथुरा से भ्रमण करते हुए सवाँई ग्राम में पधारे। वहाँ लाला अशर्फीलाल की बगीची में एक गुफा तथा तालाब का निर्माण कराया। श्री प्रभुजी ने गुफा की रज में शक्ति पात किया कि श्रद्धा और प्रेम से जो इस रज का सेवन करेगा उसका मन निर्मल होकर समाधि को प्राप्त होगा। ठीक इसी प्रकार का शक्तिपात तालाब में भी किया। जो लोग श्रद्धा पूर्वक इस तालाब में स्नान करेंगे। उनके शारीरिक रोग दूर हो जायेंगे। श्री प्रभुजी की भक्तों द्वारा देखी गयी तथा जो सुनने में आयी वह घटनाएँ निम्न प्रकार हैं :-

श्री आनन्दकन्द प्रभुजी एक दिन अपने प्रिय बालक मुलखराज जी के साथ सवाँई में बैठे हुए थे। श्री प्रभुजी के साथ काफी तादाद में भक्त लोग भी थे। श्री प्रभुजी अपने दिव्य दर्शनों से तथा उपदेश से सबको आनन्द मग्न बनाये हुए थे।

कुछ समय पश्चात् जवाहर नाम का एक पहलवान बगीची में आया। उसको देखते ही श्री प्रभु मुस्कराने लगे। श्री मुलखराज जी ने मुस्कराने का कारण पूछा तो श्री प्रभुजी ने उत्तर देते कहा, ''पुत्र! ये अज्ञानी तथा अभिमानी जीव अपने अहंकार आदि दोषों के कारण अमृत को विष बना लिया करते हैं।'' श्री मुलखराज जी ने पुन: प्रार्थना करके पूछा; 'नाथजी कैसे?'' तो उत्तर में श्री प्रभुजी ने कहा, ''यह सब घटना इस पहलवान ने श्री प्रभु जी के चरण कमलों में गिरकर कहने लगा। ''महाराज सत्रह वर्ष घोर दु:ख में बीत गये। अब तो कृपा करके मुझे क्षमा कीजिए। तब श्री करुणा सागर प्रभुजी ने कहा ''भैया तुमने हमारा क्या बिगाड़ा है।, जो क्षमा के लिए कह रहे हो? इस पर पहलवान ने प्रार्थना की। ''महाराज अज्ञान और अभिमान के कारण आपके शिष्य के सम्मुख बात-चीत के दौरान में पाँव आगे बढ़ाकर मुख से मेरे शब्द निकल गये थे कि वह इस पांव को हिलाकर दिखलाये तब आपके शिष्य ने कह दिया था कि इसकी जरूरत नहीं है। तब से यह पाँव और घुटना उसी प्रकार ठेढ़ा और कष्ट में है। इसको ठीक कराने के लिए बहुत से उपचार किए लेकिन कहीं से किंचित मात्र भी लाभ नहीं हुआ। जब हरिद्वार से कनही राम और अलीगढ़ से कर्णसिंह सवाँई ग्राम में आये तो वहाँ भी श्री प्रभु जी के दर्शनों को प्राप्त कर आश्चर्यान्वित हुए और अलग-अलग दोनों ने प्रार्थना की कि महाराज हम तो रेलगाड़ी से आये हैं। और आप हम से पहले कैसे आ गये। तब श्री प्रभुजी मुस्करा दिए। दोनों भक्तों को सवांई के भक्तों से मालूम हुआ कि श्री प्रभुजी तो कहीं गये ही नहीं। इस अद्भुत घटना को सुनकर सभी लोगों को महान आश्चर्य हुआ, तथा सभी आनन्दित हुए। इस घटना से समीप के सभी गांवों में श्री प्रभुजी की कीर्ति हवा में सुगन्ध की भांति फैल गयी जिसके फलस्वरूप दूर-दूर से भक्त आपके दर्शनों के लिए आने लगे।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

तालाब में शक्तिपात व अमृतकुण्ड नाम

ग्राम वासियों के पवित्र प्रेम-भाव व लाला प्यारेलाल की सेवाओं से प्रसन्न होकर श्री प्रभुजी ने इस छोटे से जलाशय में शक्तिपात किया और कहा कि इस तालाब में जो चर्म रोगी स्नान करेगा उसकी तकलीफ दूर हो जायेगी। जो लोग गुफा की पवित्र रज को सेवन करेंगे और इस पवित्र अमृतकुण्ड में स्नान करेंगे उनके सब प्रकार के दु:ख दूर हो जायेंगे। परिणाम बिल्कुल वही हुआ। सैकड़ों दूर-दूर के प्राणी अपने बच्चों को तालाब में स्नान कराकर ले गये और उनके रोगों की पूरी तरह से निवृत्ति हो गई। अब भी इस प्रकार के कई व्यक्ति मौजूद हैं जो अमृतकुण्ड का प्रत्यक्ष प्रभाव अपने मुख से बतलाया करते हैं। श्री प्रभुजी के वरदान के बाद तालाब में स्नान करने वाले सैकड़ों चर्मरोगी व सूखावाय के रोगी बच्चे इस कुण्ड में नहाकर ठीक हुए व अभी तक बराबर ठीक हैं। उनमें से ठाकुर भूपसिंह, दौलतराम आदि प्रत्यक्ष प्रमाण के विषय हैं और वे अब भी मौजूद हैं। इन लोगों को सूखे की बीमारी से अत्यन्त क्षीण हालत में घर वालों ने स्नान कराया व फलस्वरूप सब प्रकार से ठीक हो गये। चर्मरोग व सूखावाय के रोगियों के लिए श्री प्रभुजी ने नियम रखा था कि ये लोग सवस्त्र तालाब में स्नान करें। बाद में गीले वस्त्र उतार कर वहीं फेंक दें और नये वस्त्र पहनकर घर जायँ। ऐसा करने से वह बिल्कुल निरोग हो जायेंगे। जिन लोगों ने अमृतकुण्ड में स्नान किया, परिणाम वैसा ही होता रहा। अमृतकुण्ड और गुफा के निर्माण हो जाने के बाद श्री प्रभुजी इस स्थान पर निरन्तर वास करने लगे। दर्शनार्थी लोगों की शनै:-शनै: भीड़ बढ़ने लगी। अनेक प्रकार से लोग अपनी मनोकामनाओं को पाकर अपने जीवन को सफल बनाने लगे। किन्तु एक बड़ा भारी आश्चर्य था, श्री प्रभुजी के जटा जूट अलौकिक विरक्त शरीर के दर्शन पाकर लोग साक्षात् महादेव जी समझते थे। सर्वसाधारण का यह साहस नहीं होता था कि सहसा उनके पास आ जाये। इसके साथ-साथ और भी भयानक बात यह हुई कि ज्योंही लोग बाग में प्रवेश करते तो उनको चारों तरफ सर्प ही सर्प नजर आते। महाभयंकर-सर्पों को देख करके लोगों का साहस बिल्कुल मन्द हो गया। निराश होकर के अपने आपको हतभाग्य समझ कर अपने घरों को लौटने लगे। लोगों की महान निराशा को देखकर श्री प्रभुजी ने उनको सान्त्वना दी कि भाई तुम घबराओ नहीं। तुम नि:संकोच मेरे पास ठहरो। ये सर्प तुम्हें बिल्कुल कुछ नहीं कहेंगे, किन्तु अपनी ओर से तुम इन्हें मारने का प्रयत्न न करना। श्री प्रभुजी की इस प्रकार की पवित्र आज्ञा को पाकर लोगों का साहस और बढ़ने लग गया। यातायात पूर्वत: जारी रहने लगा।

श्री महादेव जी के रूप में दर्शन

एक दिन प्रात:काल की पवित्र बेला में कुछ सत्संगियों ने बाग में प्रवेश किया। प्रात:काल ब्रह्ममुहूर्त का समय था। श्री प्रभुजी के दर्शन की तीव्र अभिलाषा मन में पूर्ण प्रबलता से बढ़ी हुई थी। खूब साहसपूर्वक गुफा के द्वार तक पहुँचे तो क्या देखा कि सामने चबूतरे पर श्री प्रभुजी विराजमान हैं। जटायें नीचे तक लटकी हुई हैं। बड़ा सुन्दर व्याघ्र चर्म कटिप्रदेश से बँधा है और हजारों की संख्या में सर्प उनके गले में लिपटे हुए हैं। कोई सर्प सिर पर चढ़ गया है कोई मेखला रूप बनकर लिपटा हुआ है। कोई जंघा प्रदेश के स्कन्ध पर्यन्त यग्योपवीत की आकृति धारण करके लिपटा हुआ है। कुछ सर्प आस-पास घूम रहे हैं। दो सर्प दांये और बांये भुजाओं पर अपने फल को ऊँचा उठाये हुए फुत्कार कर रहे हैं। इस भयंकर दृश्य को देखकर अतिशय विस्मयान्वित हुए व आगे बढ़ने का साहस न रहा और लोग चुपचाप पीछे हट गये तथा निराश होकर पीछे लौटने लग गये। तब श्री प्रभुजी ने स्वयं आवाज देकर बुलाया और कहा भाई डरो मत ये सर्प तो तुम्हारे अपने ही भाई हैं तुम्हें कुछ न कहेंगे। किन्तु आगे से तुम इतनी जल्दी जब तक कि सूर्य उदय न हो तब तक मेरे पास नहीं आना।

दो कुत्ते

स्त्री जाति के लिए श्री प्रभुजी का ऐसा नियम था कि उनके पास कोई स्त्री नहीं आ सकती थी नहीं किसी स्त्री के हाथ का भोजन किया करते थे। श्री प्रभुजी स्वयं भोजन बनाते थे या किसी अपने पास रहने वाले ब्रह्मचारी से बनवा लिया करते थे। झम्मन नाम के ब्राह्मण अधिकतर श्री प्रभुजी का भोजन बनाने की सेवा किया करते थे। एक दिन उन्होंने प्रार्थना की कि महाराज आज मैं स्वयं घर से ही भोजन बनाकर लाता हूँ। श्री प्रभुजी पहले तो इन्कार करते रहे किन्तु बाद में उन्होंने आज्ञा प्रदान की। झम्मन पुरोहित घर गया और अपने घर की स्त्रियों से भोजन बनवाकर ले आया। ज्योंही झम्मन श्री प्रभुजी के निकट पहुँचा तो श्री प्रभुजी ने इन्कार कर दिया कि आज हम भोजन नहीं करेंगे क्योंकि तुम स्त्रियों के हाथ का बना हुआ भोजन लाये हो। जिस स्थान पर श्री प्रभुजी धूनी लगाकर बैठा करते थे वहां पर दो कुत्ते उनकी सेवा में बैठे रहते थे। उन कुत्तों को श्री प्रभुजी की इच्छाओं का बराबर ज्ञान होता रहता था। जिस समय बाग में इधर-उधर से पुरुष दर्शनार्थ आते तो दोनों कुत्ते चुपचाप बैठे रहते और कदाचित कोई स्त्री बाग में आने का प्रयत्न करती तो दोनों कुत्ते भागकर उसे काट लिया करते थे। इन कुत्तों के भय से कोई स्त्री बाग में प्रवेश नहीं करती थी। सबसे बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि परिचित अपरिचित

कोई भी पुरुष आता तो दोनों कुत्ते बिल्कुल कुछ नहीं कहते और बाग में चुपचाप बैठे रहते थे।

अद्‌भुत दर्शन और भय

श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में हर समय सैकड़ों आदमियों की भीड़ लगी रहा करती थी। इधर-उधर से आकर लोग सत्संग लाभ करते थे। श्री प्रभुजी के अद्‌भुत दर्शन पाकर और अपने ऊपर अनेकों प्रकार की कृपाओं को देखकर लोगों के मन में ये भावना होती थी कि ये कोई परिपूर्ण महापुरुष हैं। इसलिए सब यह सोचते रहते थे कि प्रभो कृपा कर कोई विशेष चमत्कार दिखलायें। श्री प्रभुजी ने उनके वचनों को स्वीकार नहीं किया और कहा कि भाई हम क्या दिखलायें, मन लगाकर ईश्वर का भजन किया करो। तुम्हारे शरीर में अपने आप ही चमत्कार हो जायेंगे किन्तु फिर भी लोगों ने अपनी हठ को नहीं छोड़ा और बार-बार इस प्रकार प्रार्थना करते रहे। एक दिन जब सैकड़ों आदमियों की भीड़-भाड़ बैठी थी, लोगों ने हठपूर्वक प्रार्थना की कि प्रभो आज तो कोई विशेष चमत्कारिक लीला दिखलाओ तभी हम अपने घरों को जायेंगे। लोगों के बार-बार आग्रह करने पर श्री प्रभुजी ने कहा कि अच्छा भाई तुम सब आँखें बन्द कर लो। एक बार आँखें बन्द करने के बाद उन्हें आज्ञा दी कि अब सब आँखें खोल लो। श्री प्रभुजी की आज्ञा सुनकर जिस समय लोगों ने आँखें खोलीं तो बड़ा आश्चर्य हुआ। उनको कुछ दिखाई ही नहीं देता था न किसी की आवाज सुनाई देती थी, न किसी वस्तु का स्पर्श होता था न कोई शीतोष्ण का ज्ञान था। केवल महान्धकार ही अन्धकार अनुभव में आता था। कोई समय का ज्ञान नहीं था और न यह ज्ञान था कि हम कहाँ हैं? थोड़ी देर तक सब लोग इस में रहे। उसके बाद उनको अनुभव हुआ कि उनके नीचे से जमीन निकाल ली गई है जैसे किसी बैठे हुए आदमी के नीचे से आसन खींच लिया हो। ऐसी अनुभूति के बाद उन लोगों ने अनुभव किया कि वे प्रतिक्षण नीचे को गिरते जा रहे हैं। उन्हें एक धुँधले से प्रकाश में यही अनुभव हो रहा था कि पता नहीं वे कितने गहरे गड्ढ़े में नीचे को चले जा रहे हैं। बाह्वियान अनुभूति से बिल्कुल शून्य थे। उनका मन यह अनुभव कर रहा था कि पता नहीं कितने वर्ष हमें नीचे को जाते हुए हो गये हैं, किन्तु कोई आधार नहीं मिल रहा है जहाँ जाकर के ठहरेंगे। उनके मन में यह स्मृति थी कि हमने यह बहुत बड़ा अपराध किया जो कि बाबा के सामने इतनी बड़ी हठ की। अब दुबारा हमें हमारे घर-वार जमीन जायदाद व स्त्री को कौन दिखायेगा। ऐसी उद्विग्न स्थिति के अन्दर उन्होंने पुन: श्री प्रभुजी के चरण-कमलों का स्मरण किया और ऊपर की ओर देखने का प्रयत्न किया तो क्या देखते हैं कि ऊपर से बड़े-बड़े भयंकर सर्प दौड़े हुए उन्हीं की ओर बड़े वेग से भागे आ रहे हैं। मानो ये सब इन्हीं सबको खा जाना चाहते हैं। अब ये सब लोग और भी भयभीत हुए और श्री प्रभुजी का स्मरण करने लगे। प्रार्थना की कि हे प्रभो हमसे बड़ी भूल हुई अब ऐसी भूल हम फिर दुबारा नहीं करेंगे। आप कृपा करके हमारी रक्षा करें। भयभीत मन से यह प्रार्थना करने के बाद उनको एक वाणी सुनाई दी। वह वाणी श्री प्रभुजी की थी। श्री प्रभुजी ने कहा- अच्छा डरो मत आंखें बन्द करो। उन लोगों ने उसी स्थिति में आंखें बन्द करो। उन लोगों ने उसी स्थिति में आंखें बन्द कर लीं। पुन: आज्ञा हुई अब आंखें खोल दो। तब उन लोगों ने आंखें खोल कर देखा कि उनका शरीर पसीना से तरबतर था। भय के मारे कांप रहे थे। गले से आवाज नहीं निकलती थी व शरीर प्राणहीन जैसे हुए हुए थे। बड़ी कठिनता के साथ मन को चेतना में लाकर लोग धीरे से उठे और श्री प्रभुजी को प्रणाम करके चुपचाप बाग मे बाहर चले गये। फिर दुबारा उन्होंने कोई चमत्कार देखने की इच्छा प्रकट नहीं की और गांव में जाकर परस्पर चर्चा करने लगे कि यह साधारण महात्मा नहीं कोई योगेश्वर हैं, इनकी लीलायें वर्णनातीत हैं।

— क्रमश:

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

कृपा की चवन्नी

महा भाग्यशाली प्रभु के अनन्य अनुरक्त भक्त ठा. चन्दनसिंह को जिस प्रकार प्रभु के चरण कमलों से दिव्य माला का प्रसाद प्राप्त हुआ था, इसी प्रकार वयोवद्ध ठा. जौहरीसिंह ने लगभग ८ वर्ष पूर्व आश्रम में आकर के गद्‌गद् कण्ठ से प्रभु के कृपामय चरण-कमलों को हृदय में धारण करके एक विलक्षण घटना हमें बतलाई। उन्होंने हमसे कहा कि महाराज जी चवन्नी ने मुझे निहाल कर दिया, आज तक मैं धन-धान्य से पूर्ण हूँ। मेरे घर में किसी प्रकार का कोई रोग-शोक नहीं है। पुत्र पौत्र सभी प्रकार से सुख सम्पन्न हैं। ठा. जौहरी सिंह ने मुझे बतलाया कि मेरा जीवन अत्यन्त क्लेशित रहा करता था। अर्थाभाव के कारण घर में अनवरत क्लेश बना रहा करता था। कुटुम्ब के पालन-पोषण का कोई उपाय नजर में नहीं आता था किन्तु एक सौभाग्य था कि श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में नियम से आने-जाने की लगन बनी रहा करती थी। किसी प्रकार की प्रार्थना करने का कोई साहस नहीं होता था। एक दिन कृपानाथ श्री प्रभुजी स्वयं रीझे और मुझे आवाज देकर बुलाया कि जौहरीसिंह चिन्ता मत करो, चवन्नी ले जाओ तुम्हारे सब कार्य यह कर देगी। श्री प्रभुजी की दी हुई उस चवन्नी के प्रसाद को पाकर वह निहाल हो गया। चवन्नी के पाते ही घर में चारों ओर से धन-धान्य उमड़ने लगा। आजतक हमारा घर सब प्रकार से धन-धान्य से परिपूर्ण है। यह केवल श्री प्रभुजी की दी हुई चवन्नी का फल है जिसको मैंने अभी तक सँभाल कर रखा है। वह चवन्नी हमारे घर में किसी प्रकार का अभाव नहीं रहने देती। हर समय कृपा बरसती है। अभी भी समय-समय पर श्री प्रभुजी मुझे दर्शन देते रहते हैं। हर प्रकार की सान्त्वना देते हैं, उन कृपामय की मुझ पर पूर्ण कृपा है।

ठाकुरदास पर कृपा व चार पुत्रों का दान

आज से लगभग ४५ वर्ष पहले जिस समय मैं सवांई गांव में श्री सिद्धगुफा पर पहुँचा और यहाँ आकर योग-प्रचार करना आरम्भ किया, श्री प्रभुजी के निवास कालीन कृपा पात्र लोगों ने धीरे-धीरे मेर पास आना आरम्भ किया, ये सभी लोग श्री प्रभुजी की कृपाओं से अपने आपको सौभाग्यशाली समझते थे। एक वयो वृद्ध ठा. ठाकुरदास गद्‌गद् कण्ठ होकर रोज आश्रम में आकर बैठते रहा करते थे। वे बहुत जल्दी बोलते थे, जवान भी स्पष्ट नहीं थी। अपने मानस भावों को जल्दी-जल्दी कहा करते थे, उनकी बातों पर मैं ध्यान नहीं देता था, मैं समझता था वृद्ध शरीर है पता नहीं क्या कहते हैं? कहने दो, कहते रहेंगे; किन्तु वे नित्य ही कुछ न कुछ कहते रहते थे। इसलिए मन में एक दिन तरंग पैदा हुई कि हमें इन वृद्ध की बात को गौर से सुनना चाहिए। इनके क्या मानस भाव हैं और क्या यह कहना चाहते हैं। मैंने उन वृद्ध के पास जाकर पूछा, ठाकुर तुम क्या कह रहे हो? उसने अपनी ओर से स्पष्ट शब्दों में मुझसे कहा कि महाराज मैं कुछ नहीं कहता, यही कहता हूँ कि आपके चारों गुलाम मौजूद हैं; उनको सेवा में लगाकर रखो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ यह किन गुलामों का जिक्र कर रहे हैं? मैंने उनसे कहा वे कौन से गुलाम हैं। उन्होंने बड़े हर्ष के साथ कहा-चार गुलाम बड़े बाबा दे गये थे। मैंने ठाकुरदास से पूछा कि भाई यह घटना स्पष्ट करके बतलाओ। उन्होंने कहा कि मेरे दो विवाह हो चुके थे और दोनों स्त्री मर गयी थीं, मैं बड़ा दु:खी था और रोता फिरता था। एक दिन बाबा ने मुझे रोता हुआ देख लिया और अपने पास बुलाकर कहने लगे ठाकुरदास रोते क्यों हो? ये विभूति खाओ, अभी तुम्हारी एक और शादी होगी। उस स्त्री से तुम्हें चार पुत्र पैदा होंगे। सो ही उस विभूति के खाने के बाद बहुत जल्दी ही मेरी शादी हो गई और चार लड़के पैदा हुए। वे आपके चारों गुलाम अब भी मौजूद हैं। किसी भी प्रकार की सेवा की आवश्यकता हो तो अपने चारों गुलामों को अपने जानकर बुला लेना। ये मेरे नहीं हैं बाबा के हैं। यह कह कर वयोवृद्ध ठाकुरदास श्री प्रभुजी के कृपामय चरण कमलों को स्मरण कर गद्‌गद् कण्ठ होकर चुप हो गये।

कायाव्यूह की रचना

शास्त्र का लेख है—

यस्मिन देशे वसेद्योगी ध्यानयोग विचक्षण:।

सोपि देशो भवेत् पूत: किं पुनस्तम्य बान्धव:।।

अर्थात् जिस स्थान पर एक ध्यानयोगी वास करता है, उसके तेजोमय परमाणुओं से वह देश का देश पवित्र हो जाता है। उसके अन्य भाई-बान्धवों का तो कहना ही क्या? जिस दिन से श्री प्रभुजी ने नैपाल हिमालय से लौट कर संवाई गांव में पदार्पण किया, उसी दिन से स्वभाव से ही गांव में सुख सौभाग्य का वास हो गया। श्री सिद्धगुफा पर लोगों का यातायात बराबर बना रहने लगा। लोग तरह-तरह की मनोकामना लेकर आते, कोई व्यक्त कर पाते थे और कोई नहीं। किन्तु सभी मनोवांछित फल पाते थे। कल्पवृक्ष के नीचे बैठने वाले व्यक्ति जिस प्रकार से पूर्णरूप से अपनी मनोकामना लाभ कर लेते हैं उसी प्रकार से श्री प्रभुजी के चरणारविन्द जो लोग सद्‌भावना से आये, वे सभी सफल मनोरथ होकर गये।

मूकं करोति वाचालं पंगु लंघयते गिरिम्।

की युक्ति को चरितार्थ करने वाली विलक्षण घटनायें रात-दिन घटित होती थीं। हमें एक ब्राह्मण ने बतलाया उसका बिल्कुल भी बुद्धि का विकास नहीं था, केवल मात्र श्री प्रभुजी के चरणारविन्द के सत्संग को पाकर के वह कृतार्थ हो गया। वह मूकवत् श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में बैठा रहा करता था। शरीर से जो बन जाती, सेवा करता रहता था। एक दिन एकान्त में अत्यन्त विनयभाव से आये उस दीन ब्राह्मण को देख करके दीनबन्धु श्री प्रभुजी ने कहा ले यह विभूति खा ले। आज से तू पंडित माना जायेगा और आस-पास के समुदाय में पूर्ण सम्मानित होगा। इसी से तुझे अर्थ लाभ भी होगा। श्री प्रभुजी के मुखारविन्द से निकली हुई वाणी अमोघ थी। जो कुछ मुख से निकला वह तत्काल हो गया। वह दीन ब्राह्मण थोड़े ही समय में ऊँचे पंडितों में स्थान पा गया। थोड़ा पढ़ा-लिखा होने पर भी पंडितों में गणना पा गया व घर धन-धान्य से परिपूर्ण हो गया। यह ऐत्मादपुर का निवास था इसका नाम रामचरण था लोग उसे शास्त्री जी कह करके सम्मानित किया करते थे। इसी प्रकार से अनेक लोग आये उन्होंने अपनी मनोगत कामना पाई व कृत-कृत्य हुए। मानस सत्संग का प्रवाह अनवरत जारी रहता था। एक बार संयोगवश कोई पुण्य पर्व का समय आया। सवांई के वासी, आस-पास के सभी लोग गंगा स्नान के लिए गये। श्री प्रभुजी से लोगों ने आग्रह किया कि प्रभो! आप भी गंगा स्नान करने के लिए चलिये किन्तु श्री प्रभुजी ने इन्कार कर दिया और कहा कि भाई तुम लोग जाओ अभी हम नहीं चल रहे हैं, जब हमारी अभिरुचि होगी तो हम चले जायेंगे। सत्संगी लोगों की तीव्र अभिलाषा थी कि श्री प्रभुजी साथ चलें। किन्तु इस प्रकार इन्कार कर देने पर लोग अभिरुचि के अनुसार गंगा स्नान को चले गये किन्तु लोगों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उसी दिन श्री प्रभुजी भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न लोगों को मिले और सवांई गांव में उसी प्रकार से श्री सिद्धगुफा पर विद्यमान रहे। श्री सिद्धगुफा के सामने कदम के वृक्ष के नीचे अखाड़ा बनाया हुआ था। उस दिन वहां बच्चों को कुश्ती लड़ाते रहे। गंगा स्नान को जाने वाले लोगों ने बड़ा आश्चर्य देखा कि श्री महाराज जी उनके साथ भी रहे। उसी समय अनेकों स्थानों पर कई लोगों से मिले। सोरों में बौहरे कन्हीराम व ठा. लालाराम को स्नान करते हुए मिले। राजघाट में बौहरे खेतपाल को स्नान करते हुए मिले। कानपुर में बौहरे प्यारेलाल को गंगा स्नान करते मिले। अलीगढ़ में स्टेशन पर ठा. कर्णसिंह को मिले। इस प्रकार श्री प्रभुजी एक ही समय भिन्न-भिन्न स्थानों पर लोगों को मिले। जिस समय गांव के सब लोग वापिस आये तो श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में आकर श्री प्रभुजी के स्थान-स्थान पर मिलने की बातें करने लगे। लोगों ने जिस समय जब स्थानों-स्थानों पर श्री प्रभुजी के दर्शन किये उसी समय श्री प्रभुजी श्री सिद्धगुफा में विराजमान थे। जो व्यक्ति उनके पास उस समय रहे वह कहने लगे कि महाराज जी तो हमारे पास ही रहे हैं और यहाँ कुश्ती लड़ाते रहे हैं। इस बात को सुनकर गांव में आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

आकाश गमन

श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में जनसमुदाय का आकर्षण दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था और सभी की यह हार्दिक भावना रहती थी, कि यह कोई साधारण सन्त नहीं, प्रत्युत लोक कल्याणार्थ आये हुए योग योगेशवर हैं। इनके चरित्रों को समझ लेना हर व्यक्ति के लिए सहज नहीं। इस प्रकार के मधुर भावों को हृदय में धारण करने वाले जिज्ञासु समुदाय की यह हार्दिक इच्छा थी कि श्री प्रभुजी के कृपामय चरण-कमलों से हमारा कभी भी बिछोह न हो। ये हमारे पास बने रहें या हमें अपने साथ ले जायें। इसी से श्री प्रभुजी के कहीं भी यातायात को ये लोग देख नहीं सकते थे, अत: बहुत ज्यादा सचेत रहते थे कि ये कल्याणधन कहीं चुपचाप हम अनाथों को छोड़ न जायं। किन्तु श्री सफल कल्याण मूल श्री प्रभुजी के मन में अब वनों में जाने की तीव्र लालसा लगी हुई थी। उनकी इच्छा थी कि अब यहां से हटकर हिमालय चलें और जाकर जग जंजाल से दूर निस्त्रैगुण्य अपने शुद्ध स्वरूप में स्थित रहें। लोगों ने श्री प्रभुजी के मनोभावों को कुछ-कुछ समझ लिया था, इसलिए और भी सचेत होकर के श्री प्रभु जी के चरण कमलों में रहने लगे। उन्हें भय था कि अनाथनाथ हम अनाथों का छोड़ करके चुपचाप हिमालय न चले जायें। एक दिन अवसर जान करके श्री प्रभुजी ने सभी समुदाय को आज्ञा दी कि आज सभी लोग हमारे पास से चले जायँ क्योंकि हम अन्दर गुफा में जाकर समाधि लगाना चाहते हैं। वे लोग जाना नहीं चाहते थे। उनके इस आग्रह को देखकर श्री प्रभुजी ने आज्ञा दी कि अरे भाई इतनी चिन्ता क्यों कर रहे हो, लो हम अन्दर गुफा में चले जाते हैं और तुम लोग अपने विश्वास के लिए बाहर की कुण्डी लगाकर ताला लगा जाओ, फिर तो हम कहीं नहीं चले जायेंगे, किन्तु यह याद रखना कि कोई भी ताला खोल कर अन्दर न आने पाये। हमारी समाधि में कोई विघ्न न हो। श्री प्रभुजी का इस प्रकार का आदेश सुनकर लोग चुप हो गये और अपना अहोभाग्य समझा कि श्री प्रभुजी यहाँ समाधि लगा रहे हैं और वन जाने के तीव्र विचार को हटा दिया है। लोगों ने कुटिया से ताला लगा दिया और ताला लगाने के बाद भी वे लोग गुफा के द्वार पर लेटे रहे किन्तु उन योगेश्वर के चरित्र को यह गांव के भोले व्यक्ति क्या समझ सकते थे। उनके लिए तो गुफा में से निकलने का यही एक द्वार था जिससे वह ताला लगाकर बैठे हुए थे। श्री कल्याणधन प्रभुजी गुफा में जाकर समाधिस्थ हो गये और लगभग अर्धरात्रि के समय अणिमा के द्वारा अपने स्थूल शरीर को अणुवत् बना करके बाहर निकल आये और आकाश मार्ग से हिमालय को चले गये। जिस समय श्री प्रभुजी ने आकाश मार्ग से गमन किया उस समय ग्राम के वासी प्राय: सो चुके थे। आश्विन का महीना था अत: रात्रि को हल जोतने वाले लोग अपने अपने खेतों में हल जोत रहे थे। उन्हीं में एक परम भाग्यशाली व्यक्ति 'सूखा' नाम का धीमर था। वह भी अपने खेत में हल जोत रहा था। उसकी दृष्टि आकाश की ओर उठी तो सहसा देखा कि दिव्य जटाधारी स्वरूप है और श्री प्रभुजी बड़ी तेजी के साथ आकाश से होते हुए जो रहे हैं। उस बेचारे भोले-भाले व्यक्ति के लिए यह पहला मौका था। वह अत्यन्त भयभीत हो गया। उसने अपने मन में विचार किया, यह क्या बला है? मनुष्य आकाश में उड़ता जा रहा है। मुझ पर कोई संकट न आने वाला हो या यह कोई भूत प्रेत या कोई बला न हो। इसी भय से अत्यन्त भयभीत होकर उसने हल छोड़ दिया और यह इच्छा थी कि मैं शीघ्र ही दौड़ कर घर चला जाऊँ। किन्तु वह दीनबन्धु जी

उसकी दीन दशा को सहन नहीं कर सके और आकाश मार्ग से जाते-जाते पुन: लौटकर आ गये और आकाश में ठहर कर कहा, ''अरे सूखा! तू हमें पहचानता नहीं, हम गुफा वाले बाबा हैं, तू हमें बला समझता है, ऐसी बात कुछ नहीं है। चिन्ता को छोड़कर अपना हल जोत, हम वही गुफा वाले बाबा हैं जिनके पास तू सैकड़ों बार आया जाया करता है। अब यहाँ से गाँव में जाकर हमारे हिमालय चले जाने की बात तुम किसी से कहना नहीं। इतने शब्द कह करके श्री प्रभुजी पुन: उसी मार्ग से हिमालय को चले गये। उधर सूखा धीमर से न रहा गया। वह तत्काल हल को छोड़ कर गाँव में चला आया और गाँव में आकर उसने लोगों से स्पष्ट कह दिया कि भाई आज तो गुफा वाले बाबा आकाश मार्ग से उड़ते हुए हिमालय को चले गये। सूखा बीमार के मुख निकलते ही यह बात कर्ण परस्परा से सब गाँव में फैल गई। गाँव के लोग तत्काल दौड़े हुए आये। वहाँ पर जो लोग बाहर ताला लगाकर गुफा पर सो रहे थे। उसने आकर कहा कि भाई तुम तो यहाँ सो रहे और बाबा तो आकाश मार्ग से चले भी गये। रात्रि को उन्हें आकाश से जाते हुए सूखा धीमर ने देखा है। इन सब बातों को सुनकर लोगों ने तत्काल कुटिया का ताला खोला किन्तु बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि भीतर से श्री प्रभुजी ने कुण्डी लगाई हुई थी। अत: कोई भी गुफा में प्रवेश न कर सका। किन्तु सभी के मन में महान प्रवेश न कर सका। किन्तु सभी के मन में महान कौतूहल था और यह जानने की तीव्र लालसा थी कि वह योग योगेश्वर परम पुरुष श्री प्रभुजी अभी गुफा में ही हैं या सचमुच ही चले गये हैं। अन्दर से कुण्डी बन्द थी इसलिए कोई उपाय नहीं सूझता था कि जिससे गुफा में प्रवेश कर सकें और यह जान सकें कि श्री प्रभुजी यहाँ हैं या नहीं। अन्तत: सब प्रकार से विचार कर लेने के बाद यही निश्चय हुआ कि दीवार तोड़कर अन्दर घुसा जाय तभी यह निश्चय हो सकता है कि तथ्य क्या है। अन्तत: सूर्योदय के बाद कुटिया की दीवार को तोड़कर करके एक ठा. ज्वालाप्रसाद को जो अभी भी मौजूद हैं अन्दर घुसाया जो इस घटना को स्वयं अपने मुँह से बतलाते हैं। कुटिया की दीवार को तोड़ देने के बाद ज्वालाप्रसाद धीरे-धीरे निस्तब्ध भाव से पैरों को दबा कर गुफा में घुसे। अन्दर जाकर देखा कि श्री प्रभु जी वहाँ नहीं थे। केवल मात्र एक लोटा और एक पुस्तक रखी थी। ज्वालाप्रसाद ने बाहर आकर सबको बतला दिया कि वह कृपानिधि जी अपने विचारानुसार हिमाच्छादित हिमालय के वनों को चले गये। हमारी तुम्हारी पाबन्दियाँ व पहरेदारी, उन पर किसी भी प्रकार से सफलीभूत नहीं हो सकीं। जिस समय यह समाचार ठा. ज्वालाप्रसाद के मुख से सभी प्रेमियों ने सुना तो सभी के मन अत्यन्त व्याकुल हो उठे। अत्यन्त आर्तभाव से फूट-फूट कर रोने लगे और प्रार्थना की कि हे प्रभो! हमारे हृदय को आपने अपना घर बनाया है। योगेश्वर! फिर आप दोनों की तरह से हमें छोड़कर चले गये। हम आपके बच्चे हैं। अनाथों की तरह से मारे-मारे फिरेंगे इसलिए हे कृपानाथ! अपने दीन बच्चों की सम्भाल करो और दर्शन दो। जिस समय यह व्याकुल मन से अन्दर हृदय से पुकार कर प्रार्थना कर रहे थे उसी समय गुफा के अन्दर से एक आवाज सुनाई दी और वह यह थी, ''भाई तुमने हमारे साथ जिद की, इसलिए ऐसा हुआ। अब डरो मत। लगभग १२ वर्ष बाद हम फिर आवेगे। उस समय जो पहचान सको तो पहचान लेना।'' इस वाणी के सुनाई देने के बाद फिर कोई शब्द सुनाई नहीं दिया। सभी भक्त समुदाय अपने आर्द्रित हृदय से श्री प्रभुजी का गुणानुवाद करते हुए अपने-अपने कार्यों में लग गये।

— क्रमश:

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सवांई गांव से जाने के बाद श्री प्रभुजी अनेक वनीय स्थानों में घूमते हुए नैपाल पहुँचे और वहां से बागमती गंगा के तटों पर भ्रमण करते हुए 'सिद्धाश्रम' को चले गये। नैपाल से ऊपर गुँजेश्वरी देवी का स्थान है, उस स्थान से कई मील आगे एक वन-खण्ड में रहे और वहां पर बैठे हुए पूर्वानुभूत स्वयं सदाशिव रूप सद्गुरु तत्व का चिन्तन करते रहे। कुछ दिन वहाँ निवास करने के बाद एक दिन अकस्मात् एक वृद्ध महापुरुष वहाँ आये जिनकी आँखों की भवें लटक कर ओठों तक थीं, मुख देदीप्यमान था। अत्यन्त वृद्ध थे किन्तु महान तेजस्वी थे। उनके इशारे को पाते ही श्री प्रभुजी उनके साथ चल पड़े और क्षण भर में किसी हिमाच्छादित स्थान पर जा निकले। वहाँ पर श्री प्रभुजी उन महानपुरुष जी की आज्ञानुसार १२ वर्ष तक रहे। वह स्थान हिमाच्छादित था। वहाँ पर खाने को कन्दमूल फल कठिनता से प्राप्त होते थे। वह परम दिव्य स्थान था। वहाँ पर ६-६ मील की दूरी पर ऋषियों के स्थान थे व उन सभी ऋषियों की आयु ५०० या ६०० वर्ष की थी। १२ वर्ष वहाँ रह करके तीव्र तपश्चर्या के बाद दीन-हीन प्राणियों के कल्याण निमित्त पुन: अवनिमंडल पर लौटे और जनकल्याण करने का अपना कार्य आरम्भ किया। कई जगह आश्रमों की स्थापना की। हिमालय से लौटने के बाद श्री प्रभुजी अपने छिपे हुये पंडित वेश में रहने लगे। इस छिपे हुए वेश में उन्हें कोई योगेश्वर योगिराज नहीं समझ सकता था। हिमालय से लौटने के बाद श्री प्रभुजी ने तीन प्रकार के कार्य आरम्भ किये और ऋषिकेश योग-साधन आश्रम में विराजमान रह करके श्री प्रभुजी ने तीन प्रकार के यह कार्य आरम्भ किये-

(१) साध्यासाध्य सभी प्रकार के रोगों की सरल योग साधनों द्वारा चिकित्सा करना व उच्चतर अधिकारियों को कायाकल्प कराना।

(२) सभी प्रकार के गुप्त योग-साधनों को सरलता से सिखलाना।

(३) तीव्रतम् शक्तिपात के द्वारा कुण्डलिनी प्रबोध व मन की एकाग्रता कराना।

श्री प्रभुजी का यह प्रचार हिमालय से लौटने के बाद पंजाब में जोरों से चला। बड़े बड़े अनुभवी व्यक्ति तैयार किये जिनको समाधि की उच्चतम स्थितियाँ उपलब्ध हुयीं। किन्तु यह सब कार्य करते हुये भी श्री प्रभुजी अपने पुराने 'सिद्धाश्रम' सवाँई गांव का भी स्मरण कर लिया करते थे। जिस समय अपने भ्रमण की कथायें श्री प्रभुजी सुनाया करते थे, उस समय कभी-कभी सवांई गांव का चरित्र भी सुनाया करते थे और यह कहा करते थे कि जिला आगरा में एक सवांई गाँव है वहां हमारी गुफा बनी हुई है। वहां के लोग अब भी हमें बहुत याद करते रहते हैं। उन लोगों के साथ बड़ी-बड़ी विलक्षण घटनायें घटी हैं। जब लोग पूछते कि श्री प्रभुजी वह गाँव कहाँ है और वह गुफा कहाँ है तो हँसकर कह दिया करते कि अभी समय नहीं आया है, समय आने पर बतलायेंगे। किन्तु ऊँचे-ऊँचे ध्यानाभ्यासी लोग ध्यान में श्री प्रभुजी से सवाँई गाँव को दिखला दिया करते थे। एकबार श्री प्रभुजी भ्रमणार्थ हरिद्वार गये और हर की पौड़ियों पर पहुँचे। वहाँ कई व्यक्ति सवाँई गाँव के स्नान कर रहे थे। उनकी आकृतियों को देखकर के ध्यानानुभव देखने वाले हमारे कई गुरु भाइयों ने पहचान लिया कि ये उसी सवांई गाँव के लोग हैं जिनका जिक्र श्री प्रभु जी अपने मुखारविन्दु से किया करते हैं। यह बात विचार कर श्री प्रभुजी से प्रार्थना की कि ये लोग सवाँई गाँव के मालूम पड़ते हैं। श्री प्रभुजी ने उनकी यह बात सुनकर उस समय उनको उपेक्षित मन से किंचित् ताड़ना से कहा कि चलो यहाँ से। श्री प्रभुजी की आज्ञा पाकर सभी भाई-बहिन शीघ्रता से चल पड़े। किन्तु मार्ग में आकर फिर प्रार्थना की कि प्रभो! ये लोग मालुम तो सवांई के ही पड़ते थे, क्योंकि ध्यान में हमने कई बार इनको देखा है। किन्तु आपने उन लोगों से कुछ बात नहीं करने दी। हे दीनबन्धु! इसका क्या कारण है? आपकी क्या कृपा लीला है समझ में नहीं आ रही है। बार-बार इसी प्रकार प्रार्थना करने पर श्री प्रभुजी ने हँसते हुए उत्तर दिया, ''बेटा अभी इनका समय नहीं है। इस इस समय तुम लोग इनसे बात भी करते तो ये लोग तुम लोगों से अच्छी प्रकार नहीं बोलते क्योंकि अभी इनका संस्कारकाल नहीं है। जो प्राणी जब जिसके द्वारा आना होता है, उसी संयोग पर सब मेल मिलाप हुआ करते हैं। इसलिए संस्कार काल अपने पर ही इनका मिलना सम्भव हो सकेगा। इसलिए हमने तुम्हें रोक दिया था।'' इस प्रकार इधर-उधर प्रान्तों में प्रचार करते हुये श्री प्रभुजी एक बार आगरा पधारे और भार्गव बैंक के पास किसी स्थान पर ठहरे। वहां आने पर पुन: वही चर्चा चली। बहुत से भाई-बहिन श्री प्रभुजी के साथ थे। उन्होंने प्रार्थना की कि प्रभो! अब आप आगरा आये हुए हैं, कृपा करके वह सवाँई गाँव बतला दीजिए जहाँ आपकी गुफा बनी हुई है और वहाँ के लोगों ने आपको आकाश-गमन करते हुये देखा है। हम उस पवित्र गाँव के दर्शन करेंगे व श्री सिद्धगुफा को प्रणाम करके आवेंगे। श्री प्रभुजी ने मुस्कराकर आज्ञा दे दी, और कहा कि वह स्थान यहाँ से लगभग १५ मील की दूरी पर है। तुम सब उसकी तलाश करो। जो उसको तलाश करके आयेगा हम भी उसे इनाम देंगे। श्री सकल कल्याण मूल प्रभुजी की इस प्रकार की आज्ञा

पाकर सभी भाई-बहिनों ने सवाँई गाँव को तलाश करने का प्रयत्न किया किन्तु कोई भी सफल न हो सका। ये लोग ऐत्मादपुर व सवाँई गाँव तक भी आये किन्तु आश्चर्य यह था कि ये लोग सवाँई गाँव को पूछते थे और सुनने वाले पता नहीं क्या सुनते थे और वे लोग जो जवाब देते थे, उसको ये लोग पता नहीं क्या-क्या समझते थे। बड़ा ही विलक्षण आश्चर्य रहा। काफी प्रयत्न करने पर भी कोई भी भाई बहिन सवाँई गाँव को तलाश न कर सका। अन्त श्री प्रभुजी के चरणकमलों में प्रार्थना की कि प्रभो! वह गाँव को तलाश न कर सका। अन्त श्री प्रभुजी के चरणकमलों में प्रार्थना की कि प्रभो! वह गाँव हम लोगों को नहीं मिल रहा है। अब कृपा करके आप ही बतलायें कि वह गाँव कहाँ है, जिससे हम दर्शन कर सकें। तब श्री प्रभुजी ने ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी को आज्ञा दी कि अच्छा तुम जाओ। अब की बार तुम्हें वह सवाँई गाँव मिल जायेगा। इस प्रकार आज्ञा को पाकर भाई श्री गोपालानन्द जी आगरा से ऐत्मादपुर आये और ऐत्मादपुर में आकर सवाँई गाँव को पूछा तो लोगों ने तत्काल बतला दिया। ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी सवाँई गाँव आये व श्री सिद्धगुफा के दर्शन करके पुन: आगरा लौट गये। लाला अशर्फी लाल के बाग में जिस समय ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी ने प्रवेश किया, गाँव के निवासियों को व स्वयं लाला अशर्फीलाल को यह शक हुआ कि आस-पास यहाँ कहीं श्री प्रभुजी आये हैं। कर्ण परम्परा से यह बात तत्काल सारे गाँव में फैल गई कि बाबा यहाँ आस-पास ही हैं। उन्होंने अपने शिष्य को गुफा के दर्शन करने को भेजा है। १० या १२ वर्ष के बाद श्री प्रभुजी का पुनरागमन सुन करके दर्शनार्थ लोगों के मन बहुत ही आह्लादित हो उठे और वे इसी प्रतीक्षा में थे कि पुन: कब वे योग योगेश्वर की झांकी पाकर अपने जीवन को सफल बनायें।

सवाँई गाँव में पुन: पर्दाण व लोगों का पहचानना

लोग विचारों की इसी ऊहा-पोह में ही थे कि एक दिन श्री प्रभुजी अपने बदले हुए पंडित वेश में बाग में आये और अपनी ही गुफा के स्वयं दर्शन करके लौट पड़े। श्री प्रभुजी को एकाएक इस प्रकार लौटते देखकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ व मन ही मन यह अनुमान लगाते रहे कि सम्भव है कि अगाध करुणार्णव श्री प्रभुजी नैपाल हिमालय जाने से पूर्व जटाधारी रूप में रहे थे, वे यही होंगे। किन्तु किसी प्रकार आग्रह करने का या बोलने का साहस नहीं होता था। पहले की हुई हठ का परिणाम देख ही चुके थे। बड़ी विनय पूर्वक प्रार्थना करके श्री प्रभुजी को विश्राम करने के लिये लौटा लाये। एक वट के वृक्ष के नीचे बैठा करके शनै:-शनै: ज्यों-ज्यों ये लोग सेवा करते जाते थे त्यों-त्यों उनके अनुराग की तरंगे अधिकाधिक बढ़ती जाती थीं, उतना ही श्री प्रभुजी का मन भी प्रसन्न होता जाता था। परिणाम स्वरूप श्री प्रभुजी हंस पड़े व उन्हीं की कृपा से लोगों ने उन्हें पहचान लिया, झम्मन नाम के ब्राह्मण चरण सेवा करते हुये एक अंगूठे का दबाव अधिक डाल देते थे। यह हरकत देखकर श्री प्रभुजी हंस पड़े व हंसकर कहने लगे कि जिसकी जो आदत होती है वह बदलती नहीं। झम्मन प्रेम से परिपूर्ण थे। इतना शब्द सुनते ही चरणों में लिपट पड़े। श्री दीनबन्धु जी की पहचान हो गई। ग्राम निवासी लोग जो वर्षों से बिछोह को प्राप्त हुये थे, सहसा अपनी अमूल्य निधि को पाकर कृतार्थ हो गये। उस समय श्री प्रभुजी थोड़े समय वहाँ ठहर कर अन्यत्र प्रस्थान कर गये। किन्तु गाँव वासी भक्त समुदाय के अत्यन्त आग्रह करने पर पुन: सवाँई लोट आये। लगभग १ माह यहाँ रुककर के अपने प्रारम्भ किये हुये योग शिक्षण के अनुसार योग के सरल साधनों द्वारा सभी प्रकार के साध्य-असाध्य रोगों की नि:शुल्क चिकित्सा करते रहे। इन दिनों श्रीप्रभुजी 'जीवन तत्व' नामक साधन कराया करते थे, जिसके विधिपूर्वक ६ माह तक लगातार करने पर कायाकल्प हो जाता था। इस साधन को करने वाले व्यक्ति कई-कई सेर कच्ची चने की दाल कई-कई सेर कच्ची सब्जी खा जाया करते थे। इसके अतिरिक्त कई-कई सेर दूध व फलों का सेवन नित्य प्रति किया करते थे। ये साधन इतने विलक्षण थे कि इनके करने से मनुष्य को हर समय भूख लगी रहा करती थी। मनुष्य कच्ची सब्जी खाता-खाता थक जाता था, किन्तु उसकी भूख शान्त नहीं होती थी। इस समय श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में बाहर से आने वाले भी कितने ही भाई-बहिन साथ थे।

— क्रमश:

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

जीवन-तत्व साधन

सद्गुरुदेव योग योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज ने हिमालय से लौटने के बाद अपने मन से जीवनतत्व साधन का उद्घाटन किया, जिसमें ९ क्रियायें मुख्य हैं। सबसे पहली क्रिया सर्वोत्तान है।

(१) सर्वोत्तान :- इसमें सीधे लेट करके अपने सिर के पीछे दोनों हाथों की अँगुलियां, अँगुलियों में फँसाकर मिले हुये दोनों पंजों को उलटा करके व उधर सीधे पैरों को रखकर तनाव देकर सारे शरीर को तनाव में लाना। इसे सर्वोत्तान नाम की क्रिया कहते हैं। यह क्रिया जीवन तत्व साधन के प्रारम्भ में तीन बार की जाती है। पूरे शरीर को तनाव में लाकर के ढीला छोड़ देना चाहिए।

(२) स्कन्ध चालन :- दूसरी क्रिया का नाम स्कंध चालन है। इस क्रिया में क्रमश: अपने दोनों स्कंधों को आगे से पीछे और पीछे से आगे को गोलाकार घुमाना पड़ता है। जिस प्रकार साइकिल पर बैठकर व्यक्ति साइकिल के पैडल को गोलाकार चलाता है अभ्यस्त हो जाने के बाद मनुष्य के दोनों कन्धे एक के बाद एक इस तरह चलने लगते हैं, जिस प्रकार रुई बेलने वाली चक्की का बेलन चला करता है। इस क्रिया के करने से दोनों फेंकड़े शुद्ध हो जाते हैं। रक्त व रस का संचार विधिपूर्वक होने लगता है। यकृत, प्लीहा आदि रोग स्वभावत: शान्त हो जाते हैं।

(३) पग चालन :- साधन करने वाला मनुष्य मेरुदण्ड को सीधा करके लेट जाये। दांया और बांया हाथ अपने शरीर दण्ड के साथ सीधे जमाकर रखे हुये हैं। उसके बाद बांए पैर पर दांए पैर को रखकर इस प्रकार हिलायें कि जिससे बांए पैर का अँगूठा व दाँए पैर की एड़ी जमीन को स्पर्श करें। इसी प्रकार से दाहिने पैर पर बाँए पैर को रख करके पूर्वोक्त प्रकार से हिलायें जिससे बाँए पैर की एड़ी व दाँए पैर का अँगूठा जमीन को बराबर स्पर्श करते रहें। इस क्रिया के करने में शरीर के नाभि से नीचे का पूरा भाग हिलता हैं। आँतें पूरा काम करने लगती हैं, कोष्ठ-बद्धता आदि रोग निर्मूल हो जाया करते हैं।

(४) नाभि चालन :- इसमें मनुष्य सीधा लेट करके अपने हाथों को पूवोक्त बतलाये कायदे से शरीर के बांए व दांए हाथों को सीधा जमा करके पेट को दांए व बांऐ इस प्रकार हिलायें जिस प्रकार कि करवट बदली जाती है। इस क्रिया के करने से मंदाग्नि की निवृत्ति होती है और अत्यन्त भूख बढ़ती है।

(५) जानु प्रसार :- इस क्रिया में पूर्ववत् सीधे लेट रहें। एक पैर को बिल्कुल सीधा तनाये रहें और दूसरे पैर को मोड़कर के उसको सीधा रहने वो पैर के घुटने के पास रखें और घुटने को तीन बार क्रमश: जमीन पर लगायें। इस प्रकार करने से स्नायु मण्डल में पूरा-पूरा तनाव हो जाता है और किसी भी प्रकार स्नायुओं में विकृति नहीं रखती है।

(६) बाल मचलन :- यह क्रिया केवल बच्चों के मचलने का अभिनय है। सीधे लेट करके अपने हाथ व पैरों को दांऐ के बाद बांया व बांऐ के बाद दाँया इस प्रकार चलाओ जिस प्रकार मचलते हुए बच्चे करते हैं। यह क्रिया केवल एक ही मिनट पूरे वेग से की करने के बाद बिल्कुल शान्त भाव से सीधे लेट जाओ व बच्चे के बालस्वरूप का निरन्तर ध्यान करो। अपने आपको भी बिल्कुल बालक समझो।

(७) बाल-ध्यान :- बाल मचलन के बाद लगभग ३ मिनट तक बच्चे का ध्यान करना चाहिए। इसके करने से शरीर में जीवनी शक्ति का पूरा-पूरा विकास होता है। मन में कार्य करने की स्फूर्ति पैदा होती है।

(८) नाड़ी-संचालन :- इस क्रिया में सीधे बैठ करके अपने दोनों पैरों को खूब फैलाकर, जितना भी अधिक से अधिक फैला सकें मेरुदण्ड को थोड़ा आगे की ओर झुका करके चक्राकार घुमाते हुये दोनों हाथों से अपने पैरों के दांऐ व बांऐ पैरों के अँगूठों को स्पर्श करो अर्थात् जिस समय दाहिने हाथ से फैले हुये बांऐ पैर के अँगूठे को छुओगे तो बांया हाथ एकदम पीछे चला जायेगा और फैलाये हुये दाहिने पैर के अँगूठे को घूमते हुये बांऐ हाथ से छुओगे तो दाहिना हाथ एक दम पीछे चला जायेगा। इस क्रिया के करने से यथा नाम तथा गुण; अर्थात् सभी नाड़ियों में पूरी गति होती है। रक्त व रस का ठीक वहन होता है।

(९) उत्क्षेपण :- इसमें सब क्रियाऐं करने के बाद सीधे खड़े हो जायें। क्रम से अपने दाहिने व बांऐ पैरों को झटक दें व उसके बाद हाथों को झटक दें। इन्हीं नौ क्रियाओं का समुच्चय में नाम जीवन-तत्व साधन है।

इस साधन को करने वाला व्यक्ति प्रारम्भिक शिक्षण में सर्वोत्तान केवल ३ बार स्कंधचालन १० मिनट, पगचालन दोनों तरफ का ५ मिनट, नाभिचालन १० मिनट, जानुप्रसार केवल तीन बार, बाल मचलन १ मिनट, बच्चे का ध्यान ३ मिनट, नाड़ी संचालन १० मिनट और उत्क्षेपण क्रिया केवल तीन-तीन बार करें। इन क्रियाओं के करने से भूख की अत्यन्त वृद्धि होती है। निरन्तर करने पर मनुष्य को कायाकल्प हो जाया करता है। जितने योगासन आजकल संसार में प्रचलित हैं, उन सभी का इन नौ क्रियाओं में समुच्चय है। इन सबका प्राकट्य श्री प्रभुजी ने नैपाल

हिमालय से लौटने के बाद अपने मन से किया। पुन: सवाँई गाँव में आने के बाद श्री प्रभुजी ने इन साधनों का शिक्षण बाकायदा जारी रखा। इन क्रियाओं के करने के बाद एक विशेष प्रकार की स्थिति आ जाया करती है। इसमें पकवान बन्द करके केवल सब्जी कच्ची व कच्ची भीगी दाल आदि का ही सेवन करना पड़ता है। जिसमें भूख बराबर लगी रहती है। श्री सिद्धगुफा पर निवास करते हुये श्री प्रभुजी ने यह साधन पूरी प्रबलता से कराया और परिणाम यह निकला कि यहाँ पर आस-पास सब्जी का मिलना दुर्लभ हो गया। कच्चा खाने वाले साधक भूख के कारण अत्यन्त व्याकुल रहते थे। उनके यहाँ पर किसी भी भाव से खाने लायक सब्जी नहीं मिलती थी।

प्रभुजी की अलौकिक कृपा
खेत में असंख्य फलों की प्राप्ती

सवाँई गाँव के एक व्यक्ति ने कई बीधे में घीया की बेल लगाई थीं। कच्चा खाने वाले साधक उसी से सब्जी लिया करते थे। किन्तु कच्ची सब्जी खाने वालों की संख्या इतनी बढ़ी कि उस सारे खेत में एक भी घीया उपलब्ध नहीं हो पाई। श्री प्रभुजी ने स्वयं खेत वाले को बुलाकर कहा कि आज भाई एक छोटी सी घीया तू हमारे लिये ला दे। वह बेचारा श्री कृपानाथ जी की आज्ञा पाकर के बड़े हौसले से अपने खेत में गया किन्तु पूरा प्रयत्न करने पर भी उसे सारे खेत में एक भी घीया नहीं मिली। उसने लौट करके बड़े दीनभाव से उनके चरणों पर गिर करके प्रार्थना की कि दीनबन्धु मेरे बहुत प्रयत्न करने पर भी सारे खेत में एक भी घीया नहीं मिली। प्रभो मेरा बड़ा ही मंदभाग्य है जो आपने एक छोटी सी घीया मुझ से मंगाई किन्तु वह भी पूरा प्रयत्न करने पर नहीं मिली। खेत वाले की आँखों में आँसू थे व मन में बड़ा पश्चाताप था। परमकरुणार्णव का हृदय उसकी दीन दशा पर अत्यन्त द्रवित हुआ और प्रसन्न मुद्रा से कहने लगे। ''अरे भाई तू कैसे कहता है कि मुझे घीया नहीं मिली, चल हम स्वयं चलेंगे और तेरे खेत में घीया ढूँढ़ेंगे। श्री प्रभुजी स्वयं चलकर उसके खेत में गये। अन्य साधन करने वाले भी साध में चल पड़े। ज्योंही श्री प्रभुजी ने खेत में प्रवेश किया त्यों ही स्थान-स्थान पर बड़ी-बड़ी घीया बेलों पर लगी हुई दिखाई देने लगीं। श्री प्रभुजी ने एक घीया उतार कर खेत वाले से कहा- ले देख! तू कहता तो था कि हमारे खेत में घीया ही नहीं है। किन्तु इतनी बड़ी घीया ही नहीं है। साधक खाने वाले उन घीयाओं को खाकर तृप्त हो गये। उस दिन से उसके खेत में घीयाओं के फलों का पारावार न रहा। दूसरे दिन से आश्रम के सभी साधकों के लिए जितनी भी वे सब्जी खा सकते थे, उसने मुफ्त देनी प्रारम्भ कर दी। अभी तक भी सँवाई गाँव के वासी लोग इस विलक्षण घटना को निरन्तर स्मरण करते रहते हैं।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्दकन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

लाला प्यारे लाल व ठाकुर कर्णसिंह को अद्भुत दर्शन

ला. प्यारेलाल पटवारी और ठा. कर्णसिंह श्री प्रभुजी के अनन्य सेवकों में से थे। जब भी इनको अपने गृहकार्यों से अवकाश मिलता श्री प्रभुजी की सेवा में उपस्थि हो जाते, अपने मान और मर्यादाओं का कुछ भी ख्याल न करके अत्यन्त विनय भाव से सेवा में तत्पर रहते। अनेक प्रकार के सांसारिक झमेलों से उत्पन्न हुये संपातों की निवृत्ति श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में आते ही स्वभावत: हो जाया करती है। इसीलिए ये लोग अधिकाधिक समय श्री प्रभुजी की चरण सेवा में लगाने का प्रयत्न किया करते थे। किन्तु मन में एक तीव्र लगन कर समय लगी रहती थी और वह यह कि श्री प्रभुजी के अलौकिक ऐश्वर्य का दर्शन प्राप्त करें। ला. प्यारेलाल के मन में यह भावना अनेक बार उठती थी कि वे श्री प्रभुजी की विलक्षण कृपा-लाभ के लिए प्रार्थना करें किन्तु सम्मुख आने पर यह साहस नहीं होता था। इसलिए वे श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में अपने मनोभावों को व्यक्त करने मे असमर्थ रहा करते थे। एक दिन साहस करके प्रार्थना कर ही डाली कि प्रभो! हम आपकी विशेष कृपा का दर्शन करना चाहते हैं। निश्छल प्रेमभाव से व अनन्यभाव से सेवा करने वाले इन दोनों व्यक्तियों की प्रार्थनाओं को स्वीकार कर तालाब के किनारे खड़े हो गये। श्री प्रभुजी ने कहा- 'भाई क्या देखोगे? रहने दो। ईश्वर का भजन करो। इसी में कल्याण है। इसी में सर्वसुख शांति का वास है।' किन्तु श्री प्रभुजी के इतना समझाने पर भी उनके मन में उठी लगन बराबर कायम रही और कृपा की भिक्षा माँगते ही रहे। एक दिन श्री प्रभुजी प्रसन्नता से बैठे हुए थे कि लोगों ने फिर उसी प्रकार से चरणारविन्द में आकर अपने भाव व्यक्त किये। श्री प्रभुजी उनके हृदय के सरल व विशुद्ध प्रेम-भाव को देखकर मुस्करा पड़े और कहा कि अच्छा नहीं मानते हो तो आकाश की ओर देखो। ज्योंही ला. प्यारेलाल व कर्णसिंह ने आकाश की ओर दृष्टि की, तो बड़ा ही अद्भुत आश्चर्य देखा कि जो श्री प्रभुजी के सामने विराजमान हैं वे ही आकाश में विश्वरूप से समाये हुए हैं। उनके सहस्रों मुख और भुजायें हैं। उन्हीं के अन्दर अनेकों अद्भुत आश्चर्य दिखलाई देने लगे। जिस अङ्ग की ओर अपनी दृष्टि घुमाते थे उसी एक अङ्ग में बड़े-बड़े अद्भुत दृश्य दिखलाई पड़ते थे। कहीं पर बड़े-बड़े दिव्य तेज वाले ऋषि मुनि स्तुति कर रहे हैं और श्री प्रभुजी दिव्य तेजोमय स्वरूप से सामने विराजमान हैं। उनका वही रूप कभी द्विभुज, कभी चतुर्भुज और कभी सहस्र भुज नजर आता था। कहीं पर धाराप्रवाह दिव्य पुष्पों की वृष्टि हो रही है तो कहीं पर देव-कन्यायें दिव्य मंगल गीत गा रही हैं। कहीं पर बड़े-बड़े दिव्य ऋषि मुनि महान वेदध्वनि कर रहे हैं तो कहीं पर भृंगी नाद-सी दिव्य ध्वनियां सुनाई दे रही हैं, कहीं देवगण दिव्य स्तुति कर रहे हैं तो कहीं पर अलौकिक बाद्य बज रहे हैं तो कहीं पर जीवों की कर्म व्यवस्था हो रही है। इस प्रकार के अनेक विलक्षण रूपों में उन्होंने श्री प्रभुजी के अनेक रूपों को देखा। दोनों ही व्यक्ति अत्यन्त आश्चर्यचकित हो गये। वे श्री प्रभुजी के उन अपूर्व तेजों को सहन न कर सके और मन ही मन प्रार्थना करने लगे—

'हे प्रभो! कृपा करो, आपकी विलक्षण माया जानी नहीं जा सकती है।' श्री प्रभुजी ने उनको भयभीत व चकित देखकर उस अलौकिक दृश्य को अन्तर्हित कर लिया और पुन: उसी प्रकार अपने सौम्य साधु स्वरूप से सान्त्वना दी तथा समझाया कि भाई डरना नहीं चाहिए ये सब दृश्य तो बड़ी कृपा से देखने को मिलते हैं। श्री प्रभुजी के इस अलौकिक ऐश्वर्य को देखकर ला. प्यारेलाल व ठा. कर्णसिंह का विस्मय और भी बढ़ गया और वे लोग श्री प्रभुजी को अलौकिक पुरुष योग योगेश्वर मान करके अपना अधिक से अधिक समय सेवा में लगाकर जीवन को सफल बनाने लगे।

कुँए में गंगाजी के दर्शन

सांसारिक आदि-व्याधियों से पीड़ित प्राणी श्री प्रभुजी के दर्शनार्थ आते-जाते रहा करते थे। मानस-सत्संग का प्रभाव बराबर प्रवाहित होता रहता था। किसी भी प्रकार के मानस क्लेशों से क्लेशित प्राणी दीन-भाव से आकर श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में बैठ जाता है तो चाहे वह प्रकट रूप में अपने मानस भावों को व्यक्त कर सके या न कर सके किन्तु उसको प्रभुजी की मानस शक्ति का प्रसाद अवश्य मिल जाता था। कितने ही व्यक्ति इस प्रकार के थे जो तन मन धन से श्री प्रभु जी के चरण कमलों में न्यौछावर रहते थे। वे लोग अपने मन में समझते थे कि—

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वर:।
गुरुरेकं परंब्रह्म, तस्मै श्रीगुर्वे नम:।।

अर्थात् गुरुदेव ही ब्रह्मा, विष्णु व शिवात्मक हैं। अत: तन मन से श्री प्रभुजी की सेवा को ही अपना परम कर्त्तव्य पालन समझते थे। यद्यपि शास्त्र का वचन है-

सर्वतीर्थावगाहस्य,
प्राप्नोति फलं नर:।
गुरु चरणोदकं पीत्वा,
जलं शिरसि धारयेत्।।

अर्थात् गुरुदेव के चरण सेवन ही सर्व तीर्थावगाहन का फल देने

वाला है किन्तु जो संस्कार मन में दृढ़ हो चुके हैं वे अपना प्रभाव अवश्य दिखाते हैं। एक दिन संस्कारवश ऐसा संयोग प्राप्त हुआ कि श्री प्रभुजी के चरणारविन्द के दर्शनाभिलाषी लोग यथा समय इधर-उधर से आये हुए थे। यह दिन कोई पुण्य पर्व का दिन था। लोग पुण्यपर्व में स्नान करने के लिए बहुतायत से श्री गंगाजी का रहे कुछ लोग श्री प्रभुजी के चरणानुरागी कहीं भी नहीं जा सके और उनके चरण कमलों को ही सर्वेसर्वा समझ करके बैठे रहे। सवांई गांव के ठा. गुलाबसिंह जो इस समय भी मौजूद हैं, वयोवृद्ध हैं और उन्होंने ही अपने मुख से यह घटना हमें सुनायी भी है, उन सबके बीच विद्यमान थे। पर्वकाल में ये सब लोग श्री प्रभुजी के चरण कमलों में उपस्थित थे। उस समय इन लोगों के मन में एक स्वाभाविक उमंग पैदा हुई और उन लोगों ने प्रार्थना की कि बाबा आज पर्व का दिन है, स्नान करने की इच्छा वाले लोग चले गये किन्तु हम भी रह गये और तुम भी रह गये। श्री प्रभुजी हँस पड़े और कहने लगे, हां भाई गुलाबसिंह अब क्या करें? हम भी रह गये और तुम भी रह गये। अब तो रह ही गये किन्तु कोई बात नहीं, जाओ तुम इस कुएँ में घुसकर स्नान कर आओ। सम्भव है प्रभु सुन लें और तुम्हें पर्व का फल प्राप्त हो जाये। ठा. गुलाबसिंह आदि सभी समुदाय ने श्री प्रभुजी की आज्ञा को शिरोधार्य कर कुएँ में प्रवेश किया। किन्तु बड़ा भारी आश्चर्य यह हुआ कि जब तक इन लोगो को कुएँ के जल का स्पर्श नहीं तब तक इनको कुआ ही नजर आता रहा। पर ज्योंही कुएँ में घुसने के बाद जल का स्पर्श हुआ त्योंही कुए का आभास न रह करके श्री गंगाजी के दर्शन होने लगे। इन लोगों ने यह अद्‌भुत दृश्य देखा कि जो लोग पर्वस्नान के लिए गये थे वे लोग तो अभी पर्वस्नान से दूर ही हैं और ये लोग तो अभी पर्वस्नान से दूर ही हैं और ये लोग गंगाजी के पवित्र प्रवाह में स्नान कर रहे हैं। मकर वाहिनी भगवती अपना कर कमल उठा कर आशीर्वाद दे रही हैं और कह रही हैं कि बेटा तुम धन्य हो। सद्‌गुरु कृपा से तुमने पुण्य पर्वलाभ किया है। इस प्रकार पुण्य-पर्व में गंगास्नान करने के बाद यह लोग कुए के जल से बाहर निकले व ऊपर आये तो पूर्ववत् वह कुआँ, कुआँ ही दिखलाई देने लगा। यह कुआँ अब भी श्री सिद्धगुफा से थोड़ी दूर पर ठा. गुलाबसिंह की ठहार पर बना हुआ है। यह पुराने जमाने का लम्बा चौड़ा कुआ है। इस प्रकार ये लोग श्री प्रभुजी की अनुपम कृपा से पुण्य पर्व में भगवती भागीरथी में स्नान करके कृतार्थ हुए और श्री प्रभुजी को अलौकिक पुरुष समझकर चरण-सेवा में लीन रहने लगे।

अद्‌भुत माला

ठा. चन्दनसिंह कृपासागर श्री प्रभुजी के अनन्य भक्तों में से एक थे। सवांई गाँव के चमत्कारिक चरित्रों का अनुभव करने वाले व्यक्तियों में से एक प्रमुख व्यक्ति थे। इनके जीवन में कई एक घटनायें ऐसी अलौकिक घटीं, जिनको वे अपने मुख से गद्‌गद कण्ठ होकर बतलाया करते थे—

जैसी होय होतव्यता, तैसी उपजे बुद्धि।।

जिसका भला होनहार होता है, उसके अन्दर नम्रता, विनय, प्रेम के सद्‌भाव परिपूर्ण रूप से उमड़ पड़ते हैं। ठा. चन्दनसिंह का हृदय श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में अनन्य निष्ठा व प्रेम से परिपूरित रहा करता था। उनके हृदय में परम कृपानिकेतन श्री प्रभुजी के कृपामय चरण कमलों के अतिरिक्त कोई अन्य भाव प्रवेश नहीं कर सकते थे। जन्म-जन्मान्तरों के प्रारब्धवश उनके घर में अर्थाभाव रहता था। कोई-कोई समय बड़ कठिनता से साथ व्यतीत होता था, किन्तु उनके मन में कभी कमजोर नहीं आई। एक बार ठा. चन्दनसिंह के मन में कई प्रकार की चिन्तायें व्याप्त थीं और मन में बड़े क्लेशित थे। अर्थाभाव के कारण कई प्रकार की नौकरी करने का प्रयत्न किया, किन्तु विफल रहे। काफी प्रयत्न करने पर भी कोई सफलता नहीं मिली। इसी चिंता से वे खिन्न मन होकर निराश बैठे थे और विचार कर रहे थे कि कुटुम्ब पालन के लिए क्या किया जाय? अपने अनन्य निष्ठ भक्त बालक की इस प्रकार की स्थिति को देखकर श्री प्रभुजी हँसे और अपने गले से एक माला उतार कर चन्दनसिंह को पहना दी और कहा- बेटा जाओ चिन्ता छोड़ो। जब तक यह माला तुम्हारे साथ रहेगी तुम्हारे सभी कार्य सफल होंगे। अब तुम जहां भी जाओ इस माला को गले में पहन कर जाना, तुम्हें अवश्य ही सफलता मिलेगी। ठा. चँदनसिंह मुझसे स्वयं यह बतलाते थे कि दूसरे रोज उस माला को पहन कर अपनी नौकरी के लिए किसी आफीसर से मिलने के लिए गया तो मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ कि वह आफीसर पहले से ही मेरे इन्तजार में था, मुझे देखते ही उसने बड़े आदर के साथ बुलाया और कहा कि अरे भाई ठाकुर साहब कल तो हमने तुम्हें जवाब दे दिया था किंतु आज सुबह से ही बराबर तुम्हारा इंतजार कर रहे हैं। तुम बहुत ठीक आये, आओ अपना कार्य शुरू करो। चंदनसिंह को श्री प्रभुजी को दी हुई माला के अद्‌भुत आश्चर्यप्रद परिणाम को देखकर बड़ा आनन्द हुआ। एक प्रकार से उनको मनचाही सिद्धि मिल गई। ठा. चन्दनसिंह ने वह माला कई वर्षों तक अपने पास रखी और अपने सभी साध्य व असाध्य कार्य बड़ी सुगमता से किये। अन्त में उनके किसी मित्र के यहां प्रसव होने वाला था। मित्र की पत्नी कई दिन से कष्ट भोग रही थी किन्तु प्रसव नहीं हो रहा था। ठा. चन्दनसिंह को अपने मित्र के कष्ट भोग रही थी किन्तु प्रसव नहीं हो रहा था। ठा. चन्दनसिंह को अपने मित्र के कष्ट को देखकर उसकी पत्नी पर दया आई और सुगम प्रसव के लिए वह माला अपने मित्र को दे दी। उसने ज्योंही अपनी स्त्री को वह माला पहनाई तो तत्काल ही बच्चा पैदा हो गया और किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ। ठा. चन्दनसिंह को मित्र ने उस माला के अद्‌भुत प्रभाव को देखकर वह अपने पास छिपाकर रख ली और चन्दनसिंह से कह दिया कि वह माला तो कहीं खो गई। मित्र के इस कार्य से चन्दनसिंह के हृदय में बहुत बड़ा भारी दु:ख हुआ और उनका हृदय पश्चात्ताप की अग्नि में जलने लगा वे सोचने लगे कि मैंने यह क्या किया? किन्तु फिर भी हो क्या सकता है?

अब पछताये होत क्या—
जब चिड़ियां चुग गई खेत।।

जब तक चन्दनसिंह जीवित रहे, उस माला का बराबर सोच करते ही रहे। किन्तु शुभाशुभ को उन कृपासागर श्री प्रभुजी की इच्छा समझ कर अपने हृदय को सन्तुष्ट किया और अपने जीवन काल में अन्तिम समय तक आनन्दकन्द श्री प्रभुजी के अभय चरण कमलों का स्मरण करते रहे।

— क्रमश:

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्दकन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

एक और अद्भुत घटना जो श्री प्रभुजी के पावन एवं कल्याणकारी चरित्रों से सम्बन्ध रखने वाली है उसे योगेश्वर चरित्रमाला में लिख रहे हैं। लगभग सन् १९२८ के बाद श्री प्रभुजी अनवरत 'ऋषिकेश योग साधन आश्रम' में विराजमान रहा करते थे और वहां से ही भक्तों के विशेष आग्रह करने पर इधर-उधर के प्रोग्रामों पर यथावकाश जाया करते थे। विशेषत: पंजाब का यातायात अधिकतर बना रहता था। उन दिनों शक्तिपात दीक्षाओं के द्वारा श्री कृपानिकेतन जी ने महापतितों का उद्धार किया और योग का सन्मार्ग दर्शाकर उन लोगों को विरक्त वनवासी बना दिया। सैकड़ों व्यक्ति आनन्दमग्न रहते थे। कितने ही तुरीय स्थिति को पाकर देहाध्यास से शून्य होकर ध्यान मग्न होकर पड़े रहते थे। विलक्षण आनन्द का प्रवाह चल रहा था। जहां पर यह कृपा प्रवाह बह रहा था वहां पर श्री प्रभुजी के चरित्रों में और भी विलक्षण घटनायें घटित होती रहती थीं। कभी-कभी श्री प्रभुजी अपने भक्तों के क्लिष्ट संस्कारों को अपने शरीर पर भोगकर भुगतान कर दिया करते थे। इस रहस्य को हर व्यक्ति समझ नहीं पाता था। हमारे बड़े गुरु भाइयों में श्री मुलखराज जी महाराज और श्री गोपालानन्द जी उन दिनों हर समय तुरीय स्थिति मे रहा करते थे। वे श्री प्रभुजी की महान करुणा के पात्र थे। श्री गंगाजी के तट से ध्यानमग्नावस्था में दौड़ हुए आते थे और श्री प्रभुजी उनके प्रणाम को स्वीकार कर उनको हमेशा सम्मानित रखते थे। किन्तु एक दिन इसके बिल्कुल विपरीत हुआ। मुलखराज जी व ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी अपने आनंदमयी अवस्था में दौड़कर श्री प्रभुजी के चरण कमलों से लिपट गये। किन्तु श्री प्रभुजी ने उनको सान्त्वना व प्यार देने के विपरीत दोनों को उठाकर परे फेंक दिया, सभी लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। श्री मुलखराज जी व श्री ब्रह्मचारी जी देहाध्यास रहित होकर पड़े रहे किन्तु अन्य सभी आश्रमवासियों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। श्री प्रभुजी जिन बच्चों को कभी भी अपने कण्ठ से अलहदा नहीं करते थे आज उनको मिट्टी के ढ़ेले की तरह दूर फेंक दिया। इसका क्या कारण है समझ में कुछ नहीं आ रहा था। किन्तु उस दिन श्री प्रभुजी का तेज भी बहुत विलक्षण था। मुख मण्डल एक दम रक्त वर्ण का दिखलाई दे रहा था। आँखें तेज और लालिमा से झलझला रही थीं। अत्यन्त विनय के साथ आश्रमवासियों ने पूछा कि प्रभो आज ये आपका क्या विलक्षण स्वरूप है। आप अपने बच्चों से हमेशा लाड़ करते थे आज आपने उनकी भी मिट्टी के ढ़ेले की तरह से दूर फेंक दिया है। उस समय तो श्री प्रभुजी ने उनकी बात का कोई जवाब नहीं दिया किन्तु कुछ देर के बाद यथार्थ स्थिति में आकर श्री प्रभुजी ने उनके अत्यन्त आग्रह से प्रसन्न होकर बतलाया कि भाई सवांई गाँव में तुम्हारा एक भाई बाबूराम ठाकुर है उसने आज आत्म-हत्या करने के लिए अफीम खाई थी। उसका हमारे अन्दर बहुत प्रेम था इसलिए उसके अफीम खाने का नशा इस समय हमारे शरीर पर था। उसका यह कष्ट हमने इतनी देर भोग लिया वह इस आत्म-हत्या के महा संकट से बच गया है। इधर सवांई गाँव में मरने की इच्छा से अफीम खाने की प्रवृति वाले बाबूराम ने देखा कि श्री प्रभुजी उसके सामने आये हैं व अफीम का गोला उसके हाथ से स्वयं छीनकर खा गये। इस घटना को ठाकुर बाबूराम के भाई ज्वाला प्रसाद आदि भी जानते हैं। स्वयं बाबूराम ने यह विलक्षण महिमा अपने अन्य सब भाइयों को बतलाई थी।

भण्डारा भरपूर

ऊपर की घटना में वर्णित ठा. बाबूराम विलक्षण सन्तसेवी सज्जन थे, श्री गुरुदेव जी के चरण-कमलों पर तन-मन से न्यौछावर थे, उनकी यह हार्दिक भावना थी कि जीवन की घड़ी-घड़ी और पल-पल श्री प्रभुजी के चरण चिन्तन में ही व्यतीत हो जाय, यही इस मनुष्य जीवन का अमर फल है।

एक घड़ी आधी घड़ी आधी में पुनि आध।
तुलसी संगत साधु की हरै कोटि अपराध।।

अत: सन्त चरण सेवा, दीनों पर दया, और परोपकार की भावनायें उनके जीवन में कूट-कूट कर भरी हुई थीं। लोकापवाद का यत्किंचित भी भय नहीं था। ठा. बाबूराम की एक लड़की थी। यह कन्या युवावस्था को प्राप्त हुई और बाबूराम के मन में लड़की को शादी की चिन्ता हर समय व्याप्त रहती थी। घर में पैसे का बहुत अभाव था। किन्तु भक्त बाबूराम युवा बेटी के विवाह की चिन्ता होते हुए भी श्री प्रभुजी के चरणानुराग में बिल्कुल लापरवाह थे। लड़की का सम्बन्ध यथा तथा प्रयत्न करने पर निश्चित हो गया। दिन-दिन विवाह तिथि नजदीक आती गई। बारात के आतिथ्य का कोई साधन दिखलाई नहीं दे रहा था। किन्तु दृढ़ लगन प्रभु के चरणारविन्दों में लगी थी। मन में यह भावना थी कि जैसे उन कृपानिधि जी की इच्छा होगी वही सब होगा। मेरे कुटुम्बी भाई-बन्धु जिस प्रकार से भी समझेंगे करेंगे। इसी प्रकार की विचारधाराओं में बीच के दिन व्यतीत हो

गये। शादी का समय आ गया। लोग बाबूराम के भोलेपन व आत्म-समर्पणता को देखकर उपहास करने लगे। लोग कहते थे देखें अब बाबूराम क्या करेगा और क्या उसके बाबाजी करेंगे? शादी का समय आया देख और अपने आपको साधनहीन देख कर बाबूराम यह विचार कर रहे थे कि मैं अब कहीं चुपचाप अन्यत्र प्रस्थान कर जाऊँ जो कुछ होना होगा वह होता रहेगा। किन्तु चलते समय श्री प्रभुजी के चरणाविन्दों में प्रणाम करके चला जाऊँ सम्भव है उसमें कोई भविष्य के लिए शुभ हो। इसी भावना को लेकर बाबूराम श्री प्रभुजी के चरणारविन्दों में पहुँचा। वह घट-घट की पहचानने वाले भक्त वत्सल श्री प्रभुजी अपने आसन पर बैठे हुए मुस्करा रहे थे। बाबूराम को चिन्तित होते देख बोले, ''क्यों बाबूराम तुम्हारा मन अत्यन्त उदास क्यों दिखलाई दे रहा है, क्या तुम अपने मन की दारुण व्यथा हमको बतलाओगे? श्री दीनबन्धु जी के ऐसे वचन सुन कर ठाकुर बाबूराम ने अपनी करुण कहानी कह सुनाई। बाबूराम की उस अनुनय विनय को सुनकर करुणार्णव का हृदय द्रवित हो उठा। मुस्कराते हुए बोले कि ''बस इतनी सी बाते के लिए तुम घर छोड़कर जा रहे हो, यह लो हमारी चरणपादुका ले जाओ इनको भण्डारे में एक चौकी पर रख लेना। भण्डारे के सामने पर्दा रखना उसमें हर कोई व्यक्ति प्रवेश न करें। भण्डारे में रखी हुई यह चरण पादुकायें तुम्हें मनोवांछित फल देंगी, भण्डारे से जिस वस्तु की आवश्यकता तुम्हें महसूस हो निकाल लिया करना। तुम्हें सभी अभीप्सित वस्तुयें मिलती रहेंगी। जिस दिन तुम्हारी बारात की बिदा हो जाये, उसी दिन बारात की विदाई के बाद हमारी चरण पादुकायें हमें लौटा जाना। बाबूराम ने श्री अनाथ-नाथ जी की वाणी पर विश्वास करके जैसा ही किया। सभी लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। बाबूराम का भण्डारा भरपूर हो गया। सबसे बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि बारात की विदाई के बाद जिस दिन चरण पादुका लौटायीं उस दिन पूर्वोपार्जित सामग्री ज्यों की त्यों शेष थी। जो लोग उपहास करना चाहते इस आश्चर्य को देखकर सभी लोगों के मुख बन्द हो गये—

जाको राखै साइयां, मार सकै नहीं कोय।

बाल न बांका हो सकै, जो जग बैरो होय।।

जिस पर वह कृपानिधि जी कृपा करते हैं वह सकल कल्याण भाजन परम पवित्र व सुख शान्ति का धाम बन जाता है।

ग्रहण करके भी, प्रभुजी के अस्थि-चर्म देखने वालों एवं उन्हें मनुष्य रूप में देखने वाले भटकते हुये अपने गुरु भाइयों से मैं क्या निवेदन करूँ, केवल इसके कि वे ठण्डे मस्तिष्क से विचार करें— कितनी गइराई में हैं?

प्रस्तुत लेख में जो कुछ भी भला बन पड़ा होगा, विज्ञ पाठक उसे सद्गुरु चरण की कृपा को तथा शाब्दिक, साहित्यिक एवं सारी त्रुटियों को इन पंक्तियों को लिपिबद्ध करने वाले को ही जिम्मेदार समझेंगे।

अनन्त कोटि ब्रह्माण्डनायक योग योगेश्वर आनन्दकन्द परम सद्गुरुदेव की अनुपम कृपा प्रेरणा एवं रहस्यमय अज्ञात निर्देशन में पंक्तिबद्ध की हुई उनकी वस्तु उन्हीं के पूज्य पावन पादपद्मों में सादर समर्पित है।

— क्रमश:

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्दकन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

श्री योग योगेश्वर प्रभुजी कृपा-महिमा की धूम मची हुई थी। चारों ओर से दु:खित लोग अपने क्लेशों की निवृत्ति के लिये धड़ा-धड़ आ रहे थे। दरबार में यह नियम था कि जो लोग स्वयं चलकर आ सकते हैं व साधन कर सकते हैं उन्हीं को साधन कराये जायेंगे, जिनके नेत्रों में थोड़ी बहुत ज्योति है उनकी नेत्र ज्योति को योग के साधनों द्वारा ठीककर दिया जावेगा। अनेकानेक रोगी अपने-अपने कष्टों को लेकर आये व सब ठीक हो गये। अकस्मात् किसी गाँव के भोले व्यक्ति किसी अन्धी लड़की को लेकर आये और प्रार्थना की कि महाराज चेचक की तीव्र वेदना से इसकी आंखें जाती रहीं हैं, इस दीन लड़की पर आप दया करें। श्री प्रभुजी ने अपने नियमानुसार बतलाया- ''भाई जिसकी कुछ दृष्टि होती है, उसको हम साधन कराते हैं उसकी दृष्टि बढ़ सकती है, किन्तु इस लड़की को बिल्कुल दृष्टि नहीं है, इसलिये इसको किसी भी साधन का फलीभूत होना कठिन है। उसके साथ आने वाले लोगों ने सूर्य की तेज रोशनी में मुरादाबादी कलई के लोटे की झलक उसकी आंखों पर डाली जिससे कुछ आभास मालुम पड़ जाये। किन्तु उसको कुछ भी आभास नहीं मालुम हुआ। ऐसी स्थिति में भी वह लोग निराश नहीं हुए, वह दृढ़तापूर्वक विनय करते रहे। तब श्री प्रभुजी ने उन लोगों की अत्यन्त दीनतापूर्ण हठको देखकर एक गुलाब का फूल दिया और आज्ञा दी कि जाओ यह फूल ले जाओ इसको ठण्डे जल में भिगोकर इस लड़की की आंखों पर घुमाते रहो व प्रात:काल ठण्डे जल के छींटे इसकी आँखों पर दिया करो व नासिका से जल-पान कराओ यदि इसके कोई सुकृत हुये तो इसका भला हो जायेगा। लोगों ने श्री प्रभुजी की आज्ञा को प्राप्त करके उसी प्रकार किया। तथा उन कृपानिधि जी की परम कृपा से गुलाब का फूल नेत्रों में घुमाने मात्र से ही दृष्टि आ गई। उसी प्रकार श्री प्रभुजी के बतलाये हुये साधन उन लोगों ने उस लड़की को कराये तो बहुत जल्दी अच्छी दृष्टि वालों की तरह वह लड़की देख उठी। श्री प्रभुजी के महान अनुग्रह से नेत्र दृष्टि का प्रसाद पाकर के उसका व उसके घर वालों का जीवन सफल हो गया।

यदृच्छा गति

मूकं करोति वाचालं
पंगुं लङ्घयते गिरिम्।
यत्कृपा तमहं वन्दे
परमानन्द माधवम्।।

प्रभु सर्वशक्तिमान, कर्त्तुमकर्त्तुमन्यथा कर्त्तुम की शक्ति वाले अपने भक्तों पर अनुग्रह करने के लिये क्या नहीं करते। आवश्यकता केवल एक बात की है और वह है उनके चरणों का अनन्य चिन्तन, अनन्य निष्ठ व्यक्तियों को सभी कुछ सुलभ होता है। सवांई गाँव में श्री प्रभुजी के चरणार्विन्द के अनन्य अनुरागी परम गुरु-भक्त एक ठाकुर वास करते थे उनका नाम भगवानसिंह था। वह गाँव के सरल भोले-भाले व्यक्ति थे घर में हमेशा अर्थाभाव रहता था किन्तु उनकी प्रेम-निष्ठा में कोई कमी नहीं थी। समय-समय पर उनके साथ श्री प्रभुजी की विलक्षण कृपायें घटित होती रहती थीं। श्री सिद्धगुफा की रज को सेवन करना और आते-जाते गुफा को नमस्कार करना, गाँव में रहते हुये यह उनका नित्य कर्त्तव्य था। अपने जीवन में समय-समय पर घटने वाली उन्होंने अनेक विलक्षण बाते हमें बतलायीं किन्तु उन सभी में एक घटना बहुत विलक्षण व महत्व का स्थान रखती है जो ठाकुर भगवानसिंह ने स्वयं हमें अपने मुख से बतलाई थी। ठाकुर भगवानसिंह का कोई आवश्यक कार्य था उस काम को कर लेने के लिए उनको सूचना ऐसे समय पर मिली जिस समय पर उस दूसरे स्थान पर पहुँचने के लिये कोई भी साधन उपलब्ध नहीं हो सकता था और सूचना प्राप्त हो जाने के बाद उस ही दिन सायंकाल चार बाजे तक यदि भगवानसिंह अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाते हैं तो उनका कार्य बनता है अन्यथा निष्फलता तो थी ही। ठा. भगवानसिंह को अत्यन्त मानसिक क्लेश हुआ। जिस गाड़ी से गन्तव्य स्थान पर जाया जा सकता था उसके स्टेशन पर पहुँचने के समय में केवल ५ मिनट बाकी थे। जिस स्टेशन पर पहुँचना था वह स्टेशन गाँव से ८ मील की दूरी पर था। ५ मिनट के अन्दर ८ मील पर पहुँचा देने का कोई साधन नहीं था। भगवानसिंह को अत्यन्त मानसिक क्लेश हुआ, क्या किया जाये कोई उपाय नजर नहीं आता था।

'जैसी होय होतव्यता तैसी उपजै बुद्धि''

ठा. भगवानसिंह को श्री प्रभुजी के कृपामय चरण कमलों का तीव्रतम स्मरण हो आया। उन्होंने मन ही मन आर्त्तभाव से प्रार्थना की कि हे! दीनबन्धु आर्त्तहरण, हे! सिद्धों के महासिद्ध योग योगेश्वर गुरुदेव मेरी रक्षा करो किसी प्रकार मेरे गन्तव्य स्थान पर पहुँचाओ ताकि मेरा यह कार्य बन सके। भव भयहारी योग योगेश्वर श्री प्रभुजी ने अपने बच्चे की आर्त्तपुकार को सुना। सहसा आकाश वाणी हुई, ''बेटा चलो।'' अकस्मात् श्री प्रभुजी की वाणी को सुनकर भगवानसिंह गद्गद हो उठे। उन्होंने मन में निश्चय कर लिया कि जटाजूटधारी साधारण साधुओं की तरह बाबा कहने वाले योग योगेश्वर गुरुदेव श्री प्रभुजी ने मुझे चलने का

हुक्म दिया है, परिणाम वह स्वयं दीनबन्धु जी ही जानें। श्री प्रभुजी की आज्ञा को शिरोधार्य करके ठा. भगवानसिंह जी चल पड़े। बड़ा ही आश्चर्य हुआ। यह घटना भगवानसिंह जी ने स्वयं हमें अपने मुख से सुनाई थी। ज्योंही वह कदम उठा कर आगे को रखते थे उनका एक-एक कदम कई-कई फलाँग पर पड़ता था। जो व्यक्ति अभी एक क्षण के अन्दर २-३ फलाँग आगे दिखलाई देता है वह कदम उठाते ही कई फलाँग पीछे दिखलाई देता था। बड़े भारी आश्चर्य की बात यह हुई कि देखते ही देखते १०-१५ कदम चलने पर ही भगवानसिंह रेल्वे स्टेशन पहुँच गये। वहाँ जाकर घड़ी देखो तो वही ५ मिनट ज्यों के त्यों बकाया थे। यथासमय ट्रेन स्टेशन पर पहुँची, भगवानसिंह उसमें सवार हो गये व ठीक समय पर अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच गये। जिस कार्य को वह लक्ष्य करके गये थे, पहुँचते ही वह पूरी तरह सफल हो गया। परम कल्याणधन श्री प्रभुजी का अपने ऊपर इतना अनुग्रह देखकर ठा. भगवानसिंह कृतकृत्य हो गये और श्री प्रभुजी के चरण स्मरण में ही अपने मन को लगा दिया।

अबोध बालक पर अद्‌भुत कृपा

इस लेख माला में हम सद्‌गुरुदेव योग योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज की अपने भक्त बालकों पर होने वाली अनुकंपाओं अपने भक्त बालकों पर होने वाली अनुकंपाओं को लिख चुके हैं। जहाँ पर जिस पवित्र कुटुम्ब में यह प्रवाह प्रवाहित हो जाता है वहाँ पर यह देखा गया है उस कुटुम्ब के बालक भी उस रग में स्वभावत: रग जाया करते हैं। उनकी अनन्य निष्ठा उन कृपाओं का भाजन बना देती है और वह लोग भी प्रभुजी की अलौकिक महिमाओं को देखने लगते हैं। ठा. चन्दनसिंह का वर्णन हमने पिछले लेखों में किया है। उनको श्री प्रभुजी ने शक्ति संचरित की हुई एक माला दी थी जिसकी शक्ति का वर्णन हम कर चुके हैं। ठा. चन्दनसिंह का कुटुम्ब उनकी स्त्री व बाल बच्चे सदा सर्वदा बाबा कह करके श्री प्रभुजी के अद्‌भुत कृपामय स्वरूप का स्मरण करते रहते हैं और प्राय: नित्य श्री सिद्धगुफा को नमस्कार करते और रज को चाटते हैं। चन्दनसिंह का एक छोटा बालक रघुराज स्कूल से पढ़कर लौटता हुआ अचानक जंगल में फिसल कर किसी गड्‌ढ़े में गिर गया। जेठ मास को गर्मियों के दिन थे बच्चा प्यास से बहुत व्याकुल था, चलने में असमर्थ हो गया था। अचानक एक आवाज आई, ''बेटा क्या तू प्यासा है पानी पीयेगा। तो पानी पी।'' आवाज किसकी थी, बालक यह नहीं समझ सका। किन्तु आवाज के आते ही उसे सामने कुआँ नजर आया। उस पर काश्त करने वाले लोग पैर जोते हुये थे और चरस से पानी खैंच कर अपने खेतों की सिंचाई कर रहे थे। बच्चे ने पेट भर पानी पिया और पैर जोतने वाले लोगों ने जिस पैर में चोट आ गई थी उसे धोने के लिए कहा। उसने पैर और हाथ धो लिए और वहाँ से स्वस्थ होकर चला आया। किन्तु उस बालक ने देखा कि वहाँ पर कोई कुआँ नहीं था और उसका पानी पीकर स्वस्थ हो जाने के बाद भी वह कुआँ फिर वहाँ न रहा। बालक ने घर आकर अपने कुटुम्बियों को यह घटना बताई कि मेरे पानी पी लेने के बाद वह कुआँ व पैर जोतने वाले पता नहीं कहाँ चले गये। बालक के मुख से यह घटना सुनकर उसके कुटुम्बी लोग व उसके पिता के मित्र पं. रामचन्द्र आदि कुआँ को ढूँढ़ने गये, किन्तु उस मार्ग पर न तो कोई कुआ ही था और न वह मिला। अपने बालक पर कृपायुक्त इस घटना को समझ करके व यह जानकर कि अपने बच्चे के हित-साधन के लिए योग योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी की ही कृपा है, यह जानकर सब प्रेम-मग्न हो गये।

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्दकन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

सवांई के चमत्कारिक चरित्र

सद्गुरुदेव योग-योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज की अनुकम्पा से मुझे सवांई गाँव में निवास करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यह छोटा सा गाँव कितना बड़ा भाग्यशाली है, इसका वर्णन करना लेखनी से बाहर है। सवाँई बहुत छोटा सा गाँव है। इसकी जनसंख्या दो या तीन हजार से अधिक नहीं है किन्तु फिर भी इसमें बड़े-बड़े आदमियों का निवास है। इस गाँव के निवासी अच्छे ऊँचे पदों पर आसीन हैं। पोस्ट आफिस, टेलीफोन व बिजली का सुप्रबन्ध है। सबसे बड़ी सौभाग्य की बात तो यह है कि इस गाँव की पवित्र भूमि में नैपाल हिमालय से लौटकर योग-योगेश्वर सद्गुरुदेव प्रभु श्री रामलाल जी महाराज ने कुछ समय यहाँ निवास किया था। मन को बड़ा आश्चर्य होता है कि कहां सिद्धों से सेवित हिमालय जिसमें हजारों वर्षो की उम्र वाले विजयी सिद्ध योगिराज लोग निवास करते हैं और कहां यह एक साधारणसा गाँव, जहाँ श्री प्रभुजी ने आकर निवास किया था। यद्यपि श्री प्रभुजी की समस्त जीवन-कथाओं का संग्रह करना साधारण कार्य नहीं। उन्होंने एक ही समय में अनेक स्थानों पर कितने ही अद्भुत चरित्र किये। अपनी करुणा कृपा से सैकड़ों को पूर्णरूपेण कृतार्थ कर हिमालय की कन्दराओं में बिठा दिया। लाखों दु:खी प्राणियों को संकल्प मात्र से आरोग्य प्रदान किया। सभी कथाओं का संग्रह करना असम्भव नहीं तो दुसाध्य अवश्य है। किन्तु फिर भी इस छोटे से गाँव में आकर के लोकानुग्रह के लिए जो अद्भुत चरित्र किये, उनका यथावत साध्य संग्रह कर सर्वसाधारण के हितार्थ प्रकाशित कर देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

श्री प्रभुजी का जन्म पूर्वी पंजाब अमृतसर में पण्डित गण्डाराम जी ज्योतिषी के घर में हुआ था। महामना पण्डित गण्डाराम जी ज्योतिषी बड़े ही प्रकाण्ड पण्डित थे। उन्होंने अपने ज्योतिष-विद्या के प्रभाव से छोटे-बड़े सभी व्यक्तियों में ऊँचा सम्मान प्राप्त किया था। श्री प्रभु जी के जन्म-काल में ही उनके जन्म-कालीन ग्रहों को देख करके पं. गण्डा राम जी ने अपने मन में यह निश्चय कर लिया था कि यह बालक कोई परिपूर्ण जन्मसिद्ध योगिराज है और कुछ समय के बाद यह हमारे पास नहीं रह सकेगा। ऐसा ही हुआ भी। श्री प्रभुजी के बाल्यकाल में अनेकों अद्भुत घटनायें घटीं। कई एक सिद्ध महात्मा भ्रमण करते हुए अमृतसर में आकर ठहर जाया करते थे। अवसर पाकर पं. गण्डारामजी के घर में श्री प्रभुजी के दर्शनार्थ जाया करते थे। श्री प्रभुजी बाल-लीला करते हुए अपने मुखारविन्द से जो भी शब्द निकलते थे वह पूर्ण सत्य होता था। अपनी बाल्य-लीला में श्री प्रभुजी कितनी ही भविष्य की बातें कह देते थे। उन सब बातों का वर्णन कर देना इस छोटी सी लेखमाला का विषय नहीं।

पण्डित गण्डाराम जी ने श्री प्रभुजी को अद्भुत कर्मी जान करके अपने घर रखने के लिये अनेक प्रयत्न किये, किन्तु किसी में भी वे सफल नहीं हो सके। अवसर पाते ही पंचदश वर्षीय अपनी छोटी सी आयु में ही श्रीप्रभु जी अपने घर से निकल पड़े। वे कुरुक्षेत्र में आकर के विद्याध्ययन करते रहे। श्री पण्डित गण्डाराम जी को भी कर्ण परम्परा से इनके विद्याध्ययन के लिए कुरुक्षेत्र जाने का ज्ञान हो गया। उन्होंने अपने भाइयों को भेज करके कुरुक्षेत्र से श्री प्रभुजी को अमृतसर से लौटाने का प्रयत्न किया, किन्तु निष्फल रहे। अपने पिता जी की इस प्रकार की भावनाओं को देखकर श्री प्रभु जी कुरुक्षेत्र से हरिद्वार चले गये। हरिद्वार से कनखल पहुँच करके कुछ समय तक वहाँ पर अध्ययन करते रहे। किन्तु वहाँ का भेद भी पंडित गण्डाराम जी ने तीर्थयात्रा करने वालों के द्वारा पा लिया। फिर उन्होंने श्री प्रभु जी को लौटाने का पूरा-पूरा प्रयत्न किया। पण्डित तीर्थराम आदि श्री प्रभु जी के सहोदर भाइयों को भेजा, किन्तु इनमें से कोई भी श्री प्रभुजी के विचारों को न बदल सका और सब निष्फल होकर लौट आये। अपने लक्ष्य-साधन में श्री प्रभुजी इन सब बाधाओं को जान कर कनखल विद्यालय को भी छोड़ दिया। पूर्ण विरक्त भाव से इतस्तत: वनों में विचरने लगे। वनों की ओर तीर्थों की काफी दिनों तक यात्रायें कीं। श्री प्रभुजी के हृदय मे तीव्र लगन थी कि वह हिमालय जा करके उसकी कन्दराओं में रहने वाले योगियों की खोज करें एवं पूर्ण सद्गुरु को पा करके योग-विद्या की परिपूर्णता को प्राप्त कर सकें।

— (क्रमश:)

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्दकन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

बरहन ग्राम व ठाकुरदास जी पर कृपा

इसी भ्रमण काल में घूमते हुए श्री प्रभुजी हाथरस आये और हाथरस से छोटे-छोटे गाँवों बिचरते हुए बरहन गाँव में पहुँचे। बरहन ठाकुरदास नाम के एक तपस्वी भक्त का निवास था। ये जन्मकाल से ही साधु-महात्माओं थे। पूर्ण विनयी और आदर्श भक्त अकस्मात् श्री प्रभुजी के बरहन गाँव में श्री प्रभुजी को पाकर कृतकृत्य हो गये। कुछ दिनों में प्रभुजी ने बरहन में निवास किया। अनेकों भाइयों का भला किया। बरहन के निवास में श्री प्रभुजी ने भक्त ठाकुरदास जी को में योग-साधनों की सरल साधनाओं का आदेश किया व अनेकों आयुर्वेदिक अनुभूति बतलाये। उनको आशीर्वाद दिया कि दु:खी लोगों की निष्काम चिकित्सा करो। तुम्हारा बहुत पुण्य होगा और लोगों का प्रकार से कल्याण होगा। श्री प्रभुजी के कृपामय आशीर्वाद से भक्त ठाकुरदास जी सब तरह से कृतकृत्य हो गये। उनका घर उसी दिन से धन-धान्य पूर्ण हो गया। बरहन में आजकल भी उनके सुपुत्र सब प्रकार से सुयोग्य-चिकित्सक हैं।

गाँव सवांई में आगमन व लाला प्यारेलाल पटवारी को दर्शन

कुछ दिन बरहन में निवास करने के बाद श्री प्रभुजी विचरते-विचरते सवाँई गाँव में आये। सवाँई गाँव बहुत छोटा-सा गाँव है। इस गाँव में ला. प्यारेलाल नाम के एक पवित्र पुण्यात्मा पटवारी निवास करते थे। आप जाति से कुलश्रेष्ठ कायस्थ थे, और जन्म से ही पुण्यशील थे तथा ईश्वर के परम भक्त थे। ईश्वर भक्तों से, ब्राह्मणों से आपका स्वाभाविक प्रेम था। कहीं पर कोई भी सत्संग की कैसी भी चर्चा चलती या ईश्वर का गुणानुवाद होता वहां आप स्वभाव से ही उपस्थित का लाभ लेने में आप अपना अहोभाग्य समझते थे। मन में हर समय सन्तों के दर्शन करने को दृढ़ लगन लगी रहती थी। इसी लगन में ला. प्यारेलाल जी गाँव से बाहर विचर रहे थे तो अकस्मात् सब प्रकार से कल्याण-निधि श्रीप्रभु जी के दर्शन प्राप्त हुए। ला. प्यारेलाल जी ने विनीत भाव से श्री प्रभुजी के चरणार्विन्द में प्रणाम किया। प्रार्थना करके उन्हें अपने साथ लिवा लाये और अपने स्थान पर ठहरा लिया। भक्ति-भाव से श्री प्रभुजी की सेवा करने लगे। सत्संग का प्रभाव शनै:-शनै: बढ़ने लगा। हर समय स्त्री-पुरुषों व बालक-बालिकाओं की भीड़ अनवरत बनी रहने लगी। जो जिस कामना को लेकर आता था, वह पूर्ण होती थी। काफी समय तक ला. प्यारेलाल जी ने श्री प्रभुजी को भक्ति-भाव से अपने यहाँ ठहरा रखा। उस समय श्री प्रभुजी रात्रि के समय एक खास औषधि को निर्माण किया करते थे और रात्रि में ही कई सौ पुड़ियां बनाकर रख लिया करते थे। प्रात:काल होते ही असंख्य मरीज द्वार को घेर कर बैठ जाया करते थे। प्रात:काल होते ही श्री प्रभुजी उन पुड़ियाओं को सब प्रकार के मरीजों में बँटवा दिया करते थे। बड़े भारी आश्चर्य की बात तो यह थी कि जो प्राणी जिस तकलीफ को लेकर आता था, उन्हीं पुड़ियों से सभी व्यक्तियों को पूरा-पूरा लाभ होता था। औषधि का तो केवल मात्र बहाना था, वस्तुत: उनकी कृपा ही प्राणीमात्र के कल्याण का कारण थी।

गुफा का निर्माण

कुछ दिन ला. प्यारेलाल जी के यहाँ निवास करने के बाद श्री प्रभुजी के मन में एकांतवास की भावनाएँ अधिकाधिक जाग्रत होने लगीं। जिस दिन से ला. प्यारेलाल जी के स्थान पर श्री प्रभुजी ने निवास किया, उसी दिन से ला. प्यारेलाल जी के घर में सकल सम्पत्तियां वास करने लगीं। घर धन-धान्य से पूर्ण हो गया। सकल व्याधियां दूर हो गईं। विघ्न-बाधाओं का सर्वथा अभाव हो गया। दिन-दूना, रात चौगुना सम्मान बढ़ने लगा। उन्हीं दिनों ला. प्यारेलाल जी के घर में उनके पौत्र का जन्म हुआ, जिससे ला. प्यारेलाल जी के मन में खुशी का पारावार न रहा और उन्होंने श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में प्रार्थना की कि- प्रभुजी! आप कृपा करके कोई सेवा बतलाइये जिसको करके मैं अपना जीवन सफल बना सकूँ। श्री प्रभुजी ने प्रसन्नता में आकर आज्ञा दी कि हम एकांत वास करना चाहते हैं। इसलिए तुम एक गुफा तैयार कराओ जिसमें हम हर प्रकार के जन-समुदाय से अलग रह सकें। उसके साथ एक तालाब और बनवाओ जिसमें हम स्नान कर सकें। ला. प्यारेलाल जी ने श्री प्रभुजी की पवित्र आज्ञा को सुन करके अपने बाग में मजदूरों को लगा करके व गाँव के अन्य प्रेमियों को साथ ले करके एक तालाब खुदवाया जिसमें श्री प्रभुजी स्नान किया करते थे। तालाब के निकट ही कदम के नीचे गाँव के सब लोगों ने मिलकर एक गुफा बनाई। जिस समय लोग गुफा का निर्माण कर रहे थे, श्री प्रभुजी ने कहा कि यहां गुफा नहीं बन सकती। किन्तु गांव के लोगों ने उनकी आज्ञा को नहीं माना और प्रेम-विभोर हो करके वहां हीं गुफा का निर्माण करने लगे। बहुत प्रयत्नों के साथ गुफा बनकर तैयार हुई। किन्तु जिस समय सब लोग गुफा बनाकर बाहर बैठे तो यकायक गुफा गिर गई। लोगों को बड़ा भारी आश्चर्य हुआ। लोगों के विचार में आया कि गुफा की छत कुछ पतली रह गई होगी, छत काफी मोटी होनी चाहिये थी। इसी विचार से उन्होंने वहीं दुबारा गुफा बनाना आरम्भ कर दिया। श्री प्रभुजी ने फिर भी बार-बार मना किया कि यहां गुफा नहीं बनेगी। किन्तु लोगों को अपनी बुद्धि-बल

पर बड़ा विश्वास था कि हम यहां पर गुफा बनाकर ही रहेंगे। इसी आधार पर लोगों ने बड़े प्रयत्न ही रहेंगे। इसी आधार पर लोगों ने बड़े प्रयत्न के साथ उसी स्थान पर दूसरी गुफा और तैयार की। किन्तु वह भी गुफा कायम न रह सकी और थोड़ी देर बाद फिर गई। लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। लोग मन में विचार करने लगे कि हम बड़ा भारी प्रयत्न करते हैं, किन्तु इतना प्रयत्न करने पर भी हम बराबर विफल होते जा रहे हैं। मालूम पड़ता है कि इस गुफा के बनाने में श्री प्रभुजी का संकल्प नहीं है। इसलिए अबकी बार इनसे पूछकर ही इनके बताये हुए स्थान पर गुफा का निर्माण करें। यह विचार कर श्री प्रभुजी से प्रार्थना की कि, प्रभो! हमने काफी प्रयत्न कर लिया है, किन्तु सफलता नहीं मिल रही है। अब आप कृपा करके जिस स्थान की आज्ञा देंगे, उसी स्थान पर हम गुफा का निर्माण करेंगे। लोगों के पवित्र विचारों को जान करके श्री प्रभु जी ने प्रसन्नतापूर्व बाग के दक्षिणी भाग में नीमों के नीचे कंकरीली जमीन में गुफा बनाने की आज्ञा प्रदान की। लोगों ने बड़े उत्साह के साथ कई दिन लगा करके वहां गुफा का निर्माण किया, जो आजकल भी 'श्री सिद्ध गुफा' के नाम से प्रख्यात है। इस गुफा में श्री प्रभुजी ने काफी दिनों तक निवास किया। गुफा से लगभग ४० कदम की दूरी पर ला. प्यारेलाल जी ने एक छोटा सा तालाब तैयार करवा दिया, जिसमें श्री प्रभुजी नित्य स्नान किया करते थे। श्री प्रभुजी ने इस तालाब का नाम अमृतकुण्ड रखा।

तालाब में शक्तिपात व अमृतकुण्ड नाम

ग्रामवासियों के पवित्र प्रेम-भाव व लाला प्यारेलाल की सेवाओं से प्रसन्न होकर श्री प्रभुजी ने इस छोटे से जलाशय में शक्तिपात किया और कहा कि इस तालाब में जो भी चर्म रोगी स्नान करेगा, उसकी तकलीफ दूर हो जायेगी। और सब बीमार बच्चे स्नानमात्र से ठीक हो जायेंगे। जो लोग गुफा की पवित्र रज को सेवन करेंगे और इस पवित्र अमृतकुण्ड में स्नान करेंगे, उनके सब प्रकार के दु:ख भी दूर हो जायेंगे, उनके सब प्रकार के दु:ख भी दूर हो जायेंगे। परिणाम बिल्कुल यही हुआ। दूर-दूर के सैकड़ों प्राणी अपने बच्चों को तालाब में स्नान कराकर ले गये और उनके रोगों की पूरी तरह से निवृत्ति हो गई। अब भी इस प्रकार के व्यक्ति मौजूद हैं, जो अमृतकुण्ड का प्रत्यक्ष प्रभाव अपने मुख से बतलाया करते हैं। श्री प्रभुजी के वरदान के बाद तालाब में सैकड़ों लोग चर्म-रोगी व सूखा वाय के रोगी बच्चे इस कुण्ड में नहाकर ठीक हुए हैं और अभी तक बराबर ठीक हैं। उनमें से ठा. भूपसिंह, दौलतराम आदि प्रत्यक्ष प्रमाण का विषय हैं। यह अब भी मौजूद हैं। इन लोगों को सूखे की बीमारी से अत्यन्त क्षीण हालत में घर वालों ने स्नान कराया जिसके फलस्वरूप वे सब प्रकार से ठीक हो गये। चर्म रोग व सूखा वाय के रोगियों के लिए श्री प्रभुजी ने यह नियम रखा था कि ये लोग सवस्त्र तालाब में स्नान करें। बाद में गीले वस्त्र उतार कर वहीं फेंक दें और नये वस्त्र पहन कर घर जायें। ऐसा करने से वे बिल्कुल नि:रोग हो जायेंगे। जिन लोगों ने अमृतकुण्ड में स्नान किया, परिणाम वैसा ही होता रहा। यानी वे सब नीरोग होते गये।

अमृतकुण्ड और गुफा के निर्माण हो जाने के बाद श्री प्रभुजी इस स्थान पर निरन्तर वास करने लगे। दर्शनार्थी लोगों की शनै:शनै: भीड़ बढ़ने लगी। अनेक प्रकार से लोग अपनी मनो-कामनाओं को पा करके अपने जीवन को सफल बनाने लगे। किन्तु एक बड़ा भारी यह आश्चर्य था कि श्री प्रभुजी के जटा-जूटधारी अलौकिक विरक्त शरीर के दर्शन पाकर लोग साक्षात् उन्हें महादेव जी समझते रहे थे। सर्वसाधारण का यह साहस नहीं होता था कि साहसा उनके पास आ जावें। इसके साथ-साथ और भी भयानक बात यह हुई थी कि ज्योंही लोग बाग में प्रवेश करते थे तो उनको चारों ओर सर्प नजर आते थे। महा भयङ्कर सर्पो को देख करके लोगों को साहस बिल्कुल मन्द हो जाता था। निराश होकर के अपने आपको हतभाग्य समझकर सब घरों को लौटने लगते। लोगों की महान निराशा को देखकर श्री प्रभुजी ने उनको सान्त्वना दी कि- भाई! तुम घबराओं नहीं। तुम नि:संकोच मेरे पास ठहरो। ये सर्प तुमसे बिल्कुल कुछ नहीं कहेंगे किन्तु अपनी ओर से तुम इन्हें मारने का प्रयत्न न करना। श्रीप्रभुजी की इस प्रकार की पवित्र आज्ञा को पाकर के लोगों का साहस और भी बढ़ने लगा और उनका यातायात पूर्ववत् बाग में जारी रहने लगा। यण होकर शाश्वत सुख की यात्रा में निकल पड़ो-

अनित्य सुखं लोक-

मिमं प्राप्य भजस्व माम्।

गीता 9/33

यह संसार हमेशा एक-सा सुख देने वाला नहीं रहने का। बालू में से भी क्या तेल निकलता है? इस संसार में सुख ढूँढ़ने पर दु:ख ही हाथ लगेगा। थोड़े समय के लिए चाहे वह सुख भले ही लगे, परिणाम में दु:ख के अलावा यह संसार कुछ नहीं है। फिर क्यों न आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र को हृदय में बसाने वाला कार्य करें- ध्यान और समाधि-जिससे बार-बार वही दु:ख की कहानी न दुहराई जाय।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

अद्भुत माला

ठाकुर चन्दनसिंह कृपा-सागर श्री प्रभुजी के अनन्य भक्तों में से एक थे। सवाँई गाँव के चमत्कारिक चरित्रों का अनुभव करने वाले व्यक्तियों में से एक प्रमुख व्यक्ति थे। उनके जीवन में कई एक घटनायें ऐसी अलौकिक घटीं, जिनको वे अपने मुख से गदगद कण्ठ हो करके बतलाया करते थे-

जैसी होय होतव्यता, तैसी उपजै बुद्धि।

जिसका भला होनहार होता है, उसके अन्दर नम्रता, विनय, प्रेम के सद्भाव परिपूर्ण रूप से उमड़ पड़ते हैं। ठा. चन्दनसिंह का हृदय श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में अनन्य निष्ठ व प्रेम में परिपूरित रहा करता था। उनके हृदय में परम कृपामय श्रीप्रभुजी के कृपामय चरण-कमलों के अतिरिक्त कोई अन्य भाव प्रवेश नहीं कर सकते थे। जन्म-जन्मान्तरों के प्रारब्ध वश उनके घर में अर्थाभाव रहता था। कोई-कोई समय बड़ी कठिनता के साथ व्यतीत होता था। किन्तु उनके मन में कभी कमजोरी नहीं आई। एक बार ठा. चन्दनसिंह के मन में क्लेशित थे। अर्थाभाव के कारण कई प्रकार की नौकरी करने का प्रयत्न किया किन्तु विफल रहे। काफी प्रयत्न करने पर भी कोई सफलता नहीं मिली। इसी चिन्ता से वे खिन्न मन हो करके निराश बैठे थे और विचार कर रहे थे कि कुटुम्ब पालन के लिए क्या किया जाय? अपने अनन्य-निष्ठ भक्त बालक की इस प्रकार की स्थिति को देख करके श्री प्रभुजी हँसे और अपने गले से एक माला उतार करके चन्दनसिंह को पहना दी और कहा, बेटा! जाओ चिन्ता को छोड़ो। जब तक यह माला तुम्हारे साथ रहेगी तुम्हारे सभी कार्य सफल होंगे। अब तुम जहां भी जाओ इस माला को गले में पहनकर जाना, अब तुम्हें अवश्य सफलता मिलेगी। ठाकुर चन्दनसिंह मुझे स्वयं यह बतलाते थे कि दूसरे दिन उस माला को पहन करके अपनी नौकरी के लिये किसी आफीसर से मिलने के लिये गया तो मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ कि वह आफीसर मुझसे मिलने के लिये पहले से ही मेरे इन्तजार में था। मुझे देखते ही उसने बड़े आदर के साथ बुलाया और कहा कि अरे भाई ठाकुर साहब! कल तो हमने तुम्हें बराबर जवाब दे दिया था, किन्तु आज सुबह से ही तुम्हारा इन्तजार कर रहे थे। बहुत ठीक समय पर आये, आओ अपना कार्य शुरू करो। चन्दनसिंह को श्री प्रभुजी की दी हुई माला के अद्भुत आश्चर्यप्रद परिणाम को देखकर बड़ा आनन्द हुआ एक प्रकार से उनको मनचाही सिद्धि मिल गई। ठा. चन्दनसिंह ने वह माला कई वर्षों तक अपने पास रखी और अपने सभी साध्य व असाध्य कार्य बड़ी सुगमता से किये। अन्त में उनके किसी मित्र के यहाँ प्रसव होने वाला था। मित्र की पत्नी कई दिन से कष्ट भोग रही थी किन्तु प्रसव नहीं हो रहा था। ठा. चन्दनसिंह को अपने मित्र के कष्ट को देख करके उसकी पत्नी पर दया आई और सुगम प्रसव के लिए वह माला पहनाई तो तत्काल ही बच्चा पैदा हो गया और किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ। ठा. चन्दनसिंह केा मित्र ने उस माला के अद्भुत प्रभाव को देख करके वह माला अपने पास छिपा कर रख ली और चन्दनसिंह से कह दिया कि वह माला कहीं खो गई। मित्र के इस कार्य से चन्दनसिंह के हृदय में बहुत बड़ा भारी दुःख हुआ और उनका हृदय पश्चाताप की अग्नि में जलने लगा और कहने लगे मैंने यह क्या किया? किन्तु फिर भी हो क्या सकता था?

फिर पछताये होत क्या,
जब चिड़ियां चुग गई खेत।।

जब तक चन्दनसिंह जीवित रहे, उस माला का बराबर सोच करते ही रहे। किन्तु शुभा-शुभ को उन कृपा सागर प्रभुजी की इच्छा समझ करके अपने हृदय को संतुष्ट किया और अपने जीवन-काल में अन्तिम समय तक आनन्दकन्द श्री प्रभुजी के अभय चरण-कमलों का स्मरण करते रहे।

कृपा की चवन्नी

महाभाग्यशाली प्रभु के अनन्य अनुरक्त भक्त ठा. चन्दनसिंह को जिस प्रकार प्रभु के चरण-कमलों से दिव्य माला का प्रसाद प्राप्त हुआ था। इसी प्रकार वयोवद्ध ठा. जौहरीसिंह ने लगभग ८ वर्ष पूर्व आश्रम में आ करके को हृदय में धारण करके एक विलक्षण घटना हमें बतलाई। उन्होंने मुझसे कहा कि महाराज जी ने चवन्नी से मुझे निहाल कर दिया। आज तक मैं धन-धान्य से पूर्ण हूँ। मेरे घर में किसी प्रकार का कोई रोग-शोक नहीं है। पुत्र पौत्र सभी प्रकार से सुख-सम्पन्न हैं। ठाकुर जौहरीसिंह ने मुझे बतलाया कि मेरा जीवन अत्यन्त क्लेशित रहा करता था। अर्थाभाव के कारण घर में अनवरत क्लेश बना रहा करता था। कुटुम्ब के पालन-पोषण का कोई उपाय नजर में नहीं आता था, किन्तु एक सौभाग्य था कि श्री प्रभुजी के चरणाविन्द में नियम से आने-जाने की लगन बनी रहती थी। किसी प्रकार की प्रार्थना करने कोई साहस नहीं होता था। एक दिन कृपानाथ

श्री प्रभुजी स्वयं प्रसन्न हुये और मुझे आवाज देकर बुलाया कि जौहरीसिंह चिन्ता मत करो, यह चवन्नी से जाओ, तुम्हारे सब कार्य यह कर देगी। श्री प्रभुजी की दी हुई उस चवन्नी के प्रसाद को पाकर मैं निहाल हो गया। चवन्नी को पाते ही घर में चारों ओर से धन-धान्य उमड़ने लगा। आजतक हमारा घर सब प्रकार से धन-धान्य से परिपूर्ण है। यह केवल श्री प्रभुजी की दी हुई चवन्नी का फल है, जिसको मैंने अभी तक सम्भाल कर रखा है। वह चवन्नी हमारे घर में किसी प्रकार का अभाव नहीं रहने देती। हर समय कृपा बरसती है। अबभी समय-समय पर श्री प्रभुजी मुझे दर्शन देते रहते हैं। हर प्रकार की सांत्वना देते हैं, उन कृपामय की पूर्ण कृपा है।

ठाकुरदास पर कृपा व चार पुत्रों का दान

आज से लगभग १८ या २० वर्ष पहले जिस समय मैं सवांई गाँव में श्री सिद्धगुफा पर पहुँचा और यहां आकर योग-प्रचार करना आरम्भ किया। श्री प्रभुजी के निवासकालीन कृपा-पत्र लोगों ने धीरे-धीरे हमारे पास आना आरम्भ किया। ये सभी लोग श्री प्रभुजी की कृपाओं से अपने आपको सौभाग्यशाली समझते थे। एक वयेवृद्ध ठा. ठाकुरदास गदगद कंठ हो करके रोज आश्रम में आकर बैठे रहा करते थे। वे बहुत जल्दी बोलते थे, जबान भी स्पष्ट नहीं थी। अपने मानस भावों को जल्दी-जल्दी कहा करते थे। उनकी बातों पर मैं ध्यान नहीं देता था। मैं सझता था, वृद्ध शरीर है पता नहीं क्या कहते हैं? कहने दो कहते रहेंगे, किन्तु वे नित्य कुछ न कुछ कहते रहते थे। इसलिए मन में एक दिन एक तरंग पैदा हुई कि हमें इन वृद्ध की बातों को गौर से सुनना चाहिए। इसके क्या मानस भाव हैं और क्या ये कहना चाहते हैं। मैंने उन वृद्ध के पास जाकर के पूछा, ठाकुर तुम क्या कह रहे हो? उसने अपनी ओर स्पष्ट शब्दों में मुझसे कहा कि महाराज मैं कुछ नहीं कहता, यही कहता हूँ कि आपके चारों गुलाम मौजूद हैं, उनको सेवा में लगाकर रखो। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि ये किन गुलामों का जिक्र कर रहे हैं? मैंने उनसे कहा वे कौन से गुलाम हैं। उन्होंने बड़े हर्ष के साथ कहा- चार गुलाम बड़े बाबा दे गये थे। मैंने ठाकुरदास से पूछा कि भाई यह घटना स्पष्ट करके बतलाओ। उन्होंने कहा कि मेरे दो विवाह हो चुके थे और दोनों स्त्री मर गई थीं। मैं बड़ा दु:खी था और रोता फिरता था। एक दिन बाबा ने मुझे रोता हुआ देख लिया और अपने पास बुलाकर कहने लगे, ठाकुरदास रोते क्यों हो? ये विभूति खाओ, अभी तुम्हारी एक और शादी होगी, उस स्त्री से तुम्हें चार पुत्र पैदा होंगे। सो ही उस विभूति के खाने से बहुत जल्दी ही मेरी शादी हो गई। जिससे चार लड़के पैदा हुए। वे आपके चार गुलाम अब भी मौजूद हैं। किसी भी प्रकार की सेवा की आवश्यकता हो तो अपने चारों गुलामों को अपने जानकर बुला लेना। ये मेरे नहीं हैं बाबा के हैं। यह कहकर वयोवृद्ध ठाकुरदास श्री प्रभुजी के कृपामय चरण-कमलों को स्मरण कर गदगद कण्ठ होकर चुप हो गये।

काया-व्यू की रचना

शास्त्र का लेख है—

यस्मिन देशे बसेद्योगी
ध्यानयोग विचक्षण:।
सोपि देशो भवेत् पूत:
किम पुनस्तस्य बान्धव:।।

अर्थात् जिस स्थान पर एक ध्यान-योगी बास करता है उसके तेजोमय परमाणुओं से वह देश का देश पवित्र हो जाता है, उसके अन्य भाई बन्धुओं का कहना ही क्या। जिस दिन से श्री प्रभुजी ने नैपाल हिमालय से लौट कर सवाँई गाँव में पदार्पण किया, उसी दिन से स्वभाव से ही गांव में सुख सौभाग्य का बास हो गया। श्री सिद्धगुफा पर लोगों का यातायात बराबर बना रहने लगा। लोग तरह-तरह की मनोकामनायें ले करके आते। कोई व्यक्त कर पाते थे कोई नहीं। किन्तु सभी मनवांछित फल पाते थे। कल्पवृक्ष के नीचे बैठने वाले व्यक्ति जिस प्रकार से पूर्णरूप से अपनी मनोकामना लाभ कर लेते हैं उसी प्रकार से श्री प्रभुजी के चरणार्विन्द में जो लोग सद्भावना से आये, वे सभी सफल मनोरथ होकर गये।

मूकं करोति वा चालं
पंगु लंघयते गिरिम्।

की युक्ति को चरितार्थ करने वाली विलक्षण घटनायें रात-दिन घटित होती थीं। हमें एक ब्राह्मण ने बतलाया, उसका बिल्कुल भी बुद्धि का विकास नहीं हुआ था। केवल मात्र श्री प्रभुजी के चरणार्विन्द के सत्संग को पा-करके कृतार्थ हो गया। वह मूकवत श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में बैठा रहा करता था। शरीर से जो बन जाती, सेवा करता रहता था। एक दिन एकान्त में अत्यन्त विनय-भाव से आये उस दीन ब्राह्मण को देख करके दीनबन्धु श्री प्रभुजी ने कहा ले यह विभूति खाले। आज से पंडित माना जायेगा और आस-पास के समुदाय में पूर्ण सम्मानित होगा। इसी से तुझे अर्थ लाभ भी होगा। श्री प्रभुजी के मुखारविन्द से निकली हुई वाणी अमोघ थी। जो कुछ भी श्री प्रभुजी के मुख से निकली वह तत्काल हो गया। वह दीन ब्राह्मण थोड़े ही समय में ऊँचे पंडितों में स्थान पा गया। थोड़ा पढ़ा-लिखा होने पर भी पंडितों में गणना पा गया व घर धन-धान्य से परिपूर्ण हो गया। यह एत्मादपुर का निवासी था। इसका नाम रामचरन था। लोग उसे शास्त्री जी कह करके सम्मानित किया करते थे। इसी प्रकार से अनेक लोग आये उन्होंने अपनी मनोवत कामना पाई व कृतकृत्य हुए। मानस सत्संग का प्रवाह अनवरत जारी रहता था। एक बार संयोगवश कोई पुण्य पर्व का समय आया। सवाँई के बासी, आस-पास के सभी लोग गंगा स्नान के लिए गये। श्री प्रभुजी से लोगों ने आग्रह किया कि प्रभो आप भी गंगा स्नान के लिए चलिये किन्तु श्री प्रभुजी ने इन्कार कर दिया और कहा कि भाई तुम लोग जाओ अभी हम नहीं चल रहे हैं। जब हमारी अभिरुचि होगी तो हम चले जायेंगे।

सत्संगी लोगों की तीव्र अभिलाषा थी कि श्री प्रभुजी साथ चलें। किन्तु इस प्रकार इन्कार कर देने पर लोग अपनी अभिरुचि लेकर गंगा स्नान को चले गये किन्तु लोगों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उसी दिन श्री प्रभुजी भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न लोगों को मिले और सवाँई में उसी प्रकार से श्री सिद्धगुफा पर विद्यमान रहे। श्री सिद्धगुफा के सामने कदम के वृक्ष के नीचे एक अखाड़ा बनाया हुआ था उस दिन वहां बच्चों को कुश्ती लड़ाते रहे। गंगा स्नान करने वाले लोगों ने बड़े आश्चर्य से देखा कि श्री प्रभुजी उनके साथ भी रहे, उसी समय अनेकों स्थानों पर कई लोगों के साथ मिले। सोरों में बौहरे कन्हींराम व ठा. लालाराम को स्नान करते हुए मिले। राजघाट में बौ. खेतपाल को स्नान करते हुए मिले। कानपुर में बी. प्यारे-लाल को गंगा स्नान करते मिले। अलीगढ़ में स्टेशन पर ठा. कर्णसिंह को मिले। इस प्रकार श्री प्रभुजी एक ही समय भिन्न-भिन्न स्थानों पर मिले। जिस समय गांव के लोग वापिस आये तो श्री प्रभुजी के चरणार्विन्द में आकर श्री प्रभुजी के स्थान-स्थान पर मिलने की बातें करने लगे। जिस समय स्थानों-स्थानों पर श्री प्रभुजी के दर्शन किये उसी समय श्री प्रभुजी श्री सिद्धगुफा में विराजमान थे। जो व्यक्ति उनके पास रहे वे कहने लगे कि महाराज जी तो हमारे पास ही रहे हैं और यहाँ कुश्ती लड़ाते रहे हैं। इस बात को सुनकर गाँव में आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्दकन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

आकाश-गमन

श्री प्रभुजी के चरणार्विन्द में जन-समुदाय का आकर्षण दिन-प्रति दिन बढ़ता जा रहा था और सभी की यह हार्दिक भावना रहती थी कि यह कोई साधारण सन्त नहीं प्रत्युत लोक-कल्याणार्थ आये हुए योग-योगेश्वर हैं। इनके चरित्रों को समझ लेना हर व्यक्ति के लिये सहज नहीं। इस प्रकार के मधुर भावों को हृदय में धारण करने वाले जिज्ञासु-समुदाय की यह हार्दिक इच्छा थी कि श्री प्रभुजी के कृपामय चरण-कमलों से हमारा कभी भी बिछोह न हो। ये हमारे पास बने रहें या हमें अपने साथ ले जायें, इसी से श्री प्रभुजी का कहीं भी यातायात ये लोग देख नहीं सकते थे, अत: बहुत ज्यादा सचेत रहते थे किं ये कल्याण धन कहीं चुपचाप हम अनाथों को छोड़ न जाएँ। किन्तु श्री सकल कल्याण मूल श्रीप्रभु जी के मन में अब वनों में जाने की तीव्र लालसा लगी हुई थी। उनकी इच्छा थी कि अब यहां से हटकर हिमालय चलें वहां जा करके जग जंजाल से दूर निश्त्रैगुण्य अपने शुद्ध स्वरूप में स्थित रहें। लोगों ने श्री प्रभुजी के मनोभावों को कुछ-कुछ समझ लिया, इसलिये और भी सचेत हो करके श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में रहने लगे। उन्हें भय था कि अनाथों के नाथ हम अनाथों को छोड़ करके चुपचाप हिमालय न चले जायें। एक दिन अवसर जानकर श्री प्रभुजी ने सभी समुदाय को आज्ञा दी, आज सभी लोग हमारे पास से चले जायें, क्योंकि हम अन्दर गुफा में जा करके समाधि लगाना चाहते हैं, पर लोग जाना नहीं चाहते थे। उनके इस आग्रह को देख करके श्री प्रभुजी ने आज्ञा दी कि अरे भाई! इतनी चिन्ता क्यों कर रहे हो, लो हम अन्दर गुफा में चले जाते हैं और तुम लोग अपने विश्वास के लिये बाहर से कुण्डी लगाकर ताला लगा जाओ, फिर तो हम कहीं नहीं चले जायेंगे, किन्तु यह याद रखना कि कोई भी ताला खोलकर अन्दर न आने पाये, हमारी समाधि में कोई विघ्न न हो। श्री प्रभुजी का इस प्रकार का आदेश सुन करके लोग चुप हो गये और अपना अहो- भाग्य समझा कि श्री प्रभुजी यहां ही समाधि लगा रहे हैं और वन जाने के तीव्र विचार को हटा दिया है। लोगों ने कुटिया के ताला लगा दिया और कुटिया से ताला लगाने के बाद भी वे लोग गुफा के द्वार पर लटके रहे, किन्तु उन योगेश्वर के चरित्र को ये गाँव के भोले व्यक्ति क्या समझ सकते थे। उनके लिये तो गुफा में से निकलने का यही एक द्वार था, जिससे वे ताला लगाकर बैठे हुए थे। श्री कल्याण- धन प्रभुजी गुफा में जाकर समाधिस्थ हो गये और लगभग अर्द्ध रात्रि के समय अणिमा के द्वारा अपने स्थूल शरीर को अणुवत् बना करके बाहर निकल आये और आकाश मार्ग से हिमालय चले गये।

जिस समय श्री प्रभुजी ने आकाश मार्ग गमन किया उस समय ग्राम के वासी प्राय: सो चुके थे। आश्विन का महीना था अत: रात्रि को हल जोतने वाले लोग अपने-अपने खेतों में हल जोत रहे थे। उन्हीं में एक परम भाग्यशाली व्यक्ति सूखा नामक धीमर था। उसकी दृष्टि आकाश की ओर उठी तो सहसा देखा कि दिव्य जटाधारी स्वरूप है और श्री प्रभुजी बड़े तेजी के साथ आकाश से होते हुए जा रहे हैं। उस बेचारे भोले-भाले व्यक्ति के लिए यह पहला मौका था। वह अत्यन्त भयभीत हो गया। उसने अपने मन में विचार किया यह कैसी बला है? मनुष्य आकाश में उड़ता जा रहा है। मुझ पर कोई संकट न आने वाला हो या यह कोई भूत-प्रेत की बला न हो। इसी भय से अत्यन्त भयभीत होकर उसने हल छोड़ दिया और यह इच्छा की कि मैं शीघ्र ही दौड़कर घर चला जाऊँ। किन्तु वे दीनबन्धु उसकी दीन दशा को सहन नहीं कर सके और आकाश मार्ग से जाते-जाते पुन: लौटकर चले आये और आकाश में ठहर कर कहा अरे सूखा तू हमें पहचानता नहीं, हम गुफा वाले बाबा हैं, तू हमें बला समझता है ऐसी बात कुछ नहीं है। चिन्ता को छोड़कर अपना हल जोत, हम वही गुफा वाले बाबा हैं जिनके पास तू सैकड़ों बार आया-जाया करता था। अब यहाँ से जाकर के तुम गाँव में हमारी हिमालय जाने की बात किसी से कहना नहीं। इतने शब्द कह करके श्री प्रभुजी पुन: उसी आकाश मार्ग से हिमालय को चले गये। उधर सूखा धीमर से न रहा गया। वह तत्काल हल को छोड़कर के गाँव को चला आया- और गाँव में आकर उसने लोगों को स्पष्ट कह दिया कि भाई आज तो गुफा वाले बाबा आकाश मार्ग से उड़ते हुए हिमालय को चले गये हैं। सूखा धीमर से निकलते ही यह बात कर्ण परम्परा से सब गाँव में फैल गई। गाँव के लोग तत्काल दौड़े हुए आये। वहाँ पर जो लोग बाहर से ताला लगा करके गुफा पर सो रहे थे। उसने आकर कहा कि भाई तुम तो यहाँ सो रहे हो, बाबा तो आकाश-मार्ग चले भी गये। रात्रि को उन्हें आकाश से जाते हुए सूखा धीमर ने देखा है। इन सब बातों को सुनकर लोगों ने तत्काल कुटिया का ताला खोला। किन्तु बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि भीतर से श्री प्रभुजी ने कुण्डी लगाई हुई थी। अत: कोई भी गुफा में प्रवेश न कर सका। किन्तु सभी के

मन में महान कौतूहल था और यह जानने की तीव्र लालसा थी कि वह योगयोगेश्वर परम पुरुष श्री प्रभुजी अभी गुफा में ही हैं या सचमुच में ही चले गये हैं। अन्दर से कुण्डी बन्द थी इसलिए कोई उपाय नहीं सूझता था जिससे कि वे गुफा में प्रवेश कर सकें और यह जान सकें कि श्री प्रभुजी यहाँ हैं या नहीं। अन्ततः सब प्रकार से विचार कर लेने के बाद यही निश्चय हुआ कि दीवार तोड़कर अन्दर घुसा जाये तभी यह निश्चय हो सकता है कि तथ्य बात क्या है। अन्ततः सूर्योदय के बाद कुटिया की दीवार को तोड़ करके एक ठा. ज्वालाप्रसाद को जो अभी भी मौजूद है घुसाया। इस घटना को वे स्वयं अपने मुँह से बतलाते हैं। कुटिया की दीवार को तोड़ देने के बाद ज्वालाप्रसाद धीरे-धीरे निस्तब्ध भाव से पैरों को दबाकर गुफा में घुसे। अन्दर जाकर देखा कि श्री प्रभुजी वहां नहीं हैं। केवलमात्र एक लोटा और एक पुस्तक रखी है। ज्वालाप्रसाद ने बाहर आकर के सबको बतला दिया कि वह कृपा निधि जी अपने निश्चयानुसार हिमाच्छादित हिमालय के वनों को चले गये। हमारी तुम्हारी पाबन्दियां व पहरेदारी, उन पर किसी भी प्रकार से सफलीभूत न हो सकीं। जिस समय यह समाचार ठा. ज्वालाप्रसाद के मुख से सभी प्रेमियों ने सुना तो सभी के मन अत्यन्त व्याकुल हो उठे। अत्यन्त आर्तभाव से फूट-फूट कर रोने लगे और प्रार्थना की कि प्रभो! हमारे हृदयों को आपने अपना घर बनाया है योगेश्वर फिर आप दीनों की तरह से हमें छोड़कर चले गये। हम आपके बच्चे हैं। अनाथों की तरह से मारे-मारे फिरेंगे इसलिये हे कृपानाथ! अपने दीन बच्चों की सम्भाल करो और दर्शन दो।

जिस समय यह सब व्याकुल मन से अन्तर हृदय से पुकार कर प्रार्थना कर रहे थे, उसी समय गुफा के अन्दर से एक आवाज सुनाई दी और वह यह थी- ''भाई! तुमने हमारे साथ जिद की इसलिये ऐसा हुआ। अब डरो मत। लगभग १२ वर्ष बाद हम फिर आवेंगे, उस समय यदि पहचान सको तो पहचान लेना, इस वाणी के सुनाई देने के बाद फिर कोई शब्द सुनाई नहीं दिया। सभी भक्त-समुदाय अपने आर्दित हृदय से श्री प्रभुजी का गुणानुवाद करते हुए अपने-अपने कार्यों में लग गये। सवांई गांव से जाने के बाद श्री प्रभुजी अनेक वनीय स्थानो में घूमते हुए नैपाल पहुँचे और वहाँ से बागमती गंगा के तटों पर भ्रमण करते हुए सिद्धाश्रम को चले गये। नैपाल से ऊपर गुंजेश्वरी देवी का स्थान है। उस स्थान से कई मील आगे एक वनखण्ड में रहे और वहां पर बैठे हुए पूर्वानुभूत स्वयं सदाशिव रूप सद्गुरु तत्त्व का चिन्तन करते रहे। कुछ दिन वहां निवास करने के बाद एक दिन अकस्मात् एक वृद्ध महापुरुष वहां आये जिनकी आंखों की भवें लटक कर ओठों तक थीं। मुख दैदीप्यमान था। अत्यन्त वृद्ध थे किन्तु महान् तेजस्वी थे। उनके इशारे को पाते ही श्रीप्रभु जी उनके साथ चल पड़े और क्षणभर में किसी हिमाच्छादित स्थान पर जा निकले। वहां पर श्री प्रभुजी उन महापुरुष की आज्ञानुसार १२ वर्ष तक रहे, वह स्थान हिमाच्छादित था। वहां पर खाने को कंदमूल फल कठिनता से प्राप्त होते थे। वह परम दिव्य स्थान था, वहां पर ६-६ मील की दूरी पर ऋषियों के स्यान थे व उन सभी ऋषियों की आयु ५०० या ६०० वर्ष की थी। १२ वर्ष वहां रह करके तीव्र तपश्चर्या के बाद दीन-हीन प्राणियों के कल्याण निमित्त पुनः अवनी मण्डल पर लौटे और अपना कल्याणकरण कार्य आरम्भ किया, कई जगह आश्रमों की स्थापना की, हिमालय से लौटने के बाद श्री प्रभुजी अपने छिपे हुए पण्डित वेश में रहने लगे। इस छिपे हुए वेश में उन्हें कोई योगेश्वर योगिराज नहीं समझ सकता था। हिमालय से लौटने के बाद श्रीप्रभु जी ने तीन प्रकार के कार्य आरम्भ किये और ऋषिकेश योगसाधन आश्रम की स्थापना की। ऋषिकेश योगसाधन आश्रम में विराजमान रह करके श्री प्रभजी ने तीन प्रकार के कार्य आरम्भ किये—

(१) साध्यासाध्य सभी प्रकार के रोगों की सरल योग-साधनों द्वारा चिकित्सा करना व उच्चतर अधिकारियों को काया-कल्प कराना।

(२) सभी प्रकार के गुप्त योग-साधनों को सरलता से सिखलाना।

(३) तीव्रतम शक्तिपात के द्वारा कुण्डलिनी प्रबोध व मन की एकाग्रता कराना।

श्री प्रभुजी का यह प्रचार हिमालय से लौटने के बाद पंजाब में जोरों से चला। बड़े-बड़े अनुभवी व्यक्ति तय्यार किये, जिनको समाधि की उच्चतम स्थितियां उपलब्ध हुईं, किन्तु यह सब कार्य करते हुए भी श्री प्रभुजी अपने पुराने सिद्धाश्रम सवाँई गाँव का भी स्मरण कर लिया करते थे। जिस समय अपने जंगलों की कथायें सुनाया करते थे, उस समय कभी-कभी सवांई गाँव का भी चरित सुनाया करते थे कि जिला आगरा में एक सवाँई गाँव है, वहाँ हमारी गुफा बनी हुई है। वहाँ के लोग अब भी हमें बहुत याद करते रहते हैं। उन लोगों के साथ बड़ी-बड़ी विलक्षण घटनायें घटी हुई हैं। जब लोग पूछते हैं कि श्री प्रभुजी वह गाँव कहाँ है और वह गुफा कहाँ है तो हँसकर कह दिया करते कि अभी समय नहीं आया है, समय आने पर बतलायेंगे। किन्तु ऊँचे-ऊँचे ध्यानाभ्यासी लोग ध्यान में श्री प्रभुजी से सवांई गाँव दिखलरा देने की प्रार्थना करते तो ध्यान में दिखला दिया करते थे। एक बार श्री प्रभुजी भ्रमणार्थ हरिद्वार गये और हरि की पौड़ियों पर पहुँचे। वहां कई व्यक्ति सवांई गाँव के स्नान कर रहे थे। उनकी आकृतियों को देख करके ध्यानानुभव देखने वाले हमारे कई गुरु भाइयों ने पहचान लिया कि ये उसी सवांई गाँव के लोग हैं, जिनका जिक्र श्री प्रभुजी अपने मुखारविन्द से किया करते हैं। यह बात विचार कर श्री प्रभुजी से प्रार्थना की कि ये लोग सवांई गाँव के मालूम पड़ते हैं। श्री प्रभुजी ने उनकी यह बात सुनकर उस समय उनको उपेक्षित मन से किंचित् ताड़ना से कहा कि चलो यहाँ से। श्री प्रभुजी की आज्ञा पाकर सभी भाई बहन शीघ्रता से चल पड़े। किन्तु मार्ग में आकर फिर प्रार्थना की कि प्रभो! ये लोग तो सवांई के

मालूम पड़ते थे क्योंकि ध्यान में हमने कई बार इनको देखा है। किन्तु आपने उन लोगों से आज बात नहीं करने दी। हे दीनबन्धु! इसका क्या कारण है। आपकी क्या कृपालीला है समझ में नहीं आ रही है। बार-बार इसी प्रकार प्रार्थना प्रार्थना करने पर श्री प्रभुजी ने हँसते हुए उत्तर दिया, ''बेटा अभी इनका समय नहीं हैं। इस समय तुम लोग इनसे बात भी करते तो ये लोग तुम लोगों से अच्छी प्रकार नहीं बोलते क्योंकि अभी इनका संस्कार काल नहीं है। जो प्राणी जब जिसके द्वारा आना होता है, उसी संयोग पर सब मेल मिलाप हुआ करते हैं। इसलिये संस्कार-काल आने पर ही इनका मिलना सम्भव हो सकेगा। अत: हमने तुम्हें रोक दिया था।''

इस प्रकार इधर-उधर प्रान्तों में प्रचार करते हुए श्री प्रभुजी एक बार आगरा पधारे और भार्गव बैंक के पास किसी स्थान पर ठहरे। वहाँ आने पर पुन: वही चर्चा चली। बहुत से भाई-बहन श्री प्रभुजी के साथ थे। उन्होंने प्रार्थना की कि प्रभो! अब आप आगरा आये हुए हैं, कृपा करके वह सवांई गाँव बतला दीजिये। जहाँ आपकी गुफा बनी हुई है तथा जहाँ के लोगों ने आपको आकाश गमन करते हुए देखा है। हम उस पवित्र गाँव के दर्शन करेंगे और सिद्ध गुफा को प्रणाम करके आवेंगे। श्री प्रभुजी ने मुस्करा कर आज्ञा दे दी और कहा कि वह स्थान यहाँ से लगभग १५ मील की दूरी पर है। तुम सब उसको तलाश करो। जो उसको तलाश करके आवेगा हम भी उसे इनाम देंगे। श्री सकल कल्याण प्रभुजी की इस प्रकार की आज्ञा को मानकर सभी भाई-बहनों ने सवाँई गाँव को तलाश करने का प्रयत्न किया किन्तु कोई भी सफल न हो सका। ये लोग ऐत्मादपुर व सवाँई गाँव तक आये किन्तु आश्चर्य यह था कि ये लोग सवाँई गाँव को पूछते थे और सुनने वाले पता नहीं क्या सुनते थे। और वे लोग जो जवाब देते थे उसको ये लोग पता नहीं क्या-क्या समझते थे। बड़ा ही विलक्षण आश्चर्य रहा। काफी प्रयत्न करने पर भी कोई भी भाई-बहन सवाँई गाँव को तलाश न कर सके। अन्त में श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में प्रार्थना की कि प्रभो! वह गाँव हम लोगों को नहीं मिल रहा है अब कृपा करके आप ही बतलायें कि वह गाँव कहाँ है? जिससे हम दर्शन कर सकें। तब श्री प्रभुजी ने ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी को आज्ञा दी कि अच्छा तुम जाओ। अब की बार तुम्हें वह सवाँई गाँव मिल जायेगा। इस प्रकार आज्ञा को पाकर भाई श्री गोपालानन्द आगरा से ऐत्मादपुर आये और ऐत्मादपुर में आकर सवांई गाँव को पूछा तो लोगों ने तत्काल बतला दिया। ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी सवांई गाँव आये व श्री सिद्ध गुफा के दर्शन करके पुन: आगरा लौट गये। लाला अशर्फीलाल के बाग में जिस समय ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी ने प्रवेश किया, गांव के निवासियों को व स्वयं लाला अशर्फीलाल को यह शक हुआ कि आस-पास यहाँ कहीं श्री प्रभुजी आये हैं। कर्ण परम्परा से यह बात सारे गाँव में फैल गई कि बाबा यहाँ आस-पास ही हैं। उन्होंने अपने शिष्य को गुफा के दर्शन करने को भेजा है। १० या १२ वर्ष के बाद श्रीप्रभुजी का पुनरागमन सुन करके दर्शनार्थ लोगों के मन बहुत ही आह्लादित हो उठे और वे सभी इसी प्रतीक्षा में थे कि पुन: कब वे योग-योगेश्वर की झांकी पाकर अपने जीवन को सफल बनायें।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्दकन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

सवांई गाँव में पुन: पदार्पण व लोगों का पहचानना

लोग इसी प्रकार विचार में थे ही कि एक रोज श्री प्रभुजी अपने बदले हुए पण्डित वेश में बाग में आये और अपनी ही गुफा के स्वयं दर्शन करके लौट पड़े। श्रीप्रभुजी को इस प्रकार लौटते देखकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे मन ही मन यह अनुमान लगाते रहे कि सम्भव है कि अगाध करुणार्णव श्री प्रभुजी नैपाल हिमालय से जाने से पूर्व जटाधारी रूप में रहे थे, वह यही होंगे। किन्तु किसी प्रकार आग्रह करने का या बोलने का किसी को साहस नहीं होता था। पहले की की हुई हठ का परिणाम देख ही चुके थे, अत: बड़ी विनयपूर्वक प्रार्थना करके श्री प्रभुजी को विश्राम करने के लिये वे लौटा लाये। एक बटके वृक्ष के नीचे बैठा करके शनै:-शनै: ज्यों-ज्यों ये लोग सेवा करते जाते त्यों-त्यों अनुराग की तरंगें अधिकाधिक बढ़ती जाती थीं, उतना ही श्री प्रभुजी का मन भी प्रसन्न होता जाता था। परिणामस्वरूप श्री प्रभुजी सहसा स्वयं हँस पड़े व उन्हीं की कृपा से लोगों ने उन्हें पहचान लिया। झम्मन नाम के ब्राह्मण चरण-सेवा करते हुए एक अंगूठे का दबाव अधिक डाल देते थे। यह हरकत देखकर श्री प्रभुजी हँस पड़े व हँसकर कहने लगे कि जिसकी जो आदत होती है वह बदलती नहीं। झम्मन प्रेम से परिपूर्ण थे, इतना शब्द सुनते ही चरणों में लिपट पड़े, श्री दीनबन्धु जी की पहचान हो गई। ग्राम निवासी लोग जो वर्षों से बिछोह को प्राप्त हुए थे, सहसा अपनी अमूल्य निधि को पाकर कृतार्थ हो गये। उस समय श्री प्रभुजी थोड़े समय वहाँ ठहर कर अन्यत्र प्रस्थान कर गये थे। किन्तु ग्रामवासी भक्त समुदाय के अत्यन्त लगभग एक माह फिर यहाँ रुक कर अपने प्रारम्भ किये हुए योग-साधनों द्वारा सभी प्रकार के साध्य-असाध्य रोगों की नि:शुल्क चिकित्सा की। इन दिनों श्रीप्रभु जीवन तत्त्व नामक साधन कराया करते थे, जिससे विधिपूर्वक छ: माह तक लगातार करने पर काया-कल्प हो जाता था। इस साधन को करने वाले व्यक्ति कई-कई सेर चने की दाल, कई-कई सेर कच्ची सब्जी खा जाया करते थे। इसके अतिरिक्त कई-कई सेर दूध व फलों का सेवन नित्यप्रति किया करते थे। ये साधन इतने विलक्षण थे कि इनके करने से मनुष्य को हर समय भूख लगी रहा करती थी। मनुष्य कच्ची सब्जी खाता-खाता थक जाता था, किन्तु उसकी भूख शान्त नहीं होती थी। इस समय श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में बाहर से आने वाले भी कितने ही भाई-बहन साथ थे।

जीवन तत्व साधन

जीवन तत्व साधन की नौ क्रियायें मुख्य हैं जिनका उद्घाटन श्री प्रभुजी ने हिमालय के लौटने के बाद अपने मन से किया। हमें सबसे पहली क्रिया सर्वोत्तान है।

(१) इसमें सीधे लेट करके अपने सिर के पीछे दोनों हाथों की अंगुलियों में फँसा करके व उधर सीधे पैरों को रखकर तनाव देकर सारे शरीर को तनाव में लाना इसे सर्वोत्तान नाम की क्रिया कहते हैं। यह क्रिया जीवन तत्व साधन के प्रारम्भ में तीन बार की जाती है। पूरे शरीर को तनाव में ला-करके ढ़ीला छोड़ देना चाहिये।

(२) दूसरी क्रिया का नाम स्कन्ध चालन है। इस क्रिया में क्रमश: अपने दोनों स्कन्धों को आगे से पीछे और पीछे से आगे को गोलाकार घुमाना पड़ता है। जिस प्रकार साइकिल पर बैठने वाला व्यक्ति साइकिल के पैडिल को गोलाकार घुमाता है। अभ्यस्त हो जाने के बाद मनुष्य के कन्धे एक के बाद एक इस तरह चलने लगता है, जिस प्रकार रुई बेलने वाली चक्की का वेलन चला करता है। इस क्रिया के करने से दोनों फेफड़े शुद्ध हो जाते हैं। रक्त व रस का संचार विधिपूर्वक होने लगता है। यकृत, प्लीहा आदि रोग स्वभावत: शान्त हो जाते हैं।

(३) तीसरी क्रिया पग-चालन है। साधन करने वाला व्यक्ति अपने मेरुदण्ड को सीधा करके लेट जाये। दांया और बांया हाथ अपने शरीर दण्ड के साथ सीधे जमाकर रखे रहे। उसके बाद बायें पैर पर दांय पैर को रखकर इस प्रकार हिलाये कि जिससे बांये पैर का अंगूठा व दांये पैर की एड़ी जमीन को स्पर्श करे। इसी प्रकार से दाहिने पैर पर बांये पैर को रख करके पूर्वाक्त प्रकार से हिलाये जिससे बांये पैर की एड़ी व दांये पैर का अँगूठा जमीन को बराबर स्पर्श करता रहे। इस क्रिया के करने में शरीर को नाभि से नीचे का पूरा भाग हिलता है। आंतें पूरा काम करने लगती हैं, कोष्ठ-बद्धता आदि रोग निर्मूल हो जाया करते हैं।

(४) चौथी क्रिया का नाम नाभि-चालन है। इससे मनुष्य सीधा लेटर अपने हाथों को पूर्वाक्त बतलाये कायदे से शरीर के बांये व दांये हाथों को सीधा जमाकर पेट को दांये बांये हाथों को सीधा जमाकर पेट को दांये बांये इस प्रकार हिलाये जिस प्रकार की करवट बदली जाती है। इस क्रिया के करने से मन्दाग्नि की निवृत्ति होती है और अत्यन्त भूख बढ़ती है।

(५) इसके बाद पांचवीं क्रिया का नाम जानु-प्रसार है। इस क्रिया में पूर्ववत् सीधे लेटे रहें। एक पैर को बिल्कुल सीधा तनाये रहें और दूसरे पैर को मोड़ करके उनको सीधा रहने वाले पैर के घुटने के पास रखें और घुटने को तीन बार क्रमश: जमीन पर लगावें। दाहिने पैर का घुटना दाहिनी ओर तीन बार जमीन पर लगावें। इस प्रकार करने से स्नायुमण्डल में पूरा-पूरा तनाव हो जाता है और किसी भी प्रकार की स्नायुओं में विकृति नहीं रहती।

(६) इसके बाद छठी क्रिया का नाम बाल मचलन है। यह क्रिया बच्चों के मचलने का अभिनय है। सीधे लेट करके हाथ व पैरों को दायें के बाद बांया व बायें के बाद दांया इस प्रकार चलाओ जिस प्रकार मचलते हुए बच्चे करते हैं। यह क्रिया केवल एक ही मिनट पूरे वेग से ही जाया करती है। एक मिनट पूरे वेग से करने के बाद बिल्कुल शान्त भाव से सीधे लेट जाओ व बच्चे के बाल स्वरूप का निरन्तर ध्यान करो। अपने आपको भी बिल्कुल बालक समझो।

(७) इस क्रिया के बाद लगभग ३ मिनट तक बच्चे का ध्यान करना चाहिये। इसके करने से शरीर में जीवनी-शक्ति का पूरा-पूरा विकास होता है। मन में कार्य करने की स्फूर्ति पैदा होती है।

(८) इसके बाद आठवीं क्रिया का नाम नाड़ी संचालन है। इसी क्रिया में सीधे बैठकर के अपने दोनों पैदों को खूब दूर तक फैला ले। उसके मेरुदण्ड को थोड़ा आगे की ओर झुका करके चक्राकार घुमाते हुए दोनों हाथों से अपने पैरों को दाएँ और बाएँ पैरों के अंगूठों को स्पर्श करो अर्थात् जिस समय दाएँ हाथ से फैले हुए बाएँ पैर के अंगूठे को घुमाओगे तो दाहिना हाथ दाहिने पैर के अंगूठे को घूमते हुए बाएँ हाथ से घुमाओगे तो दाहिना हाथ एकदम पीछे चला जायेगा। इस क्रिया के करने से यथा नाम तथा गुण अर्थात् सभी नाड़ियों में पूरी गति होती है। रक्त व रस का ठीक बहन होता है।

(९) इसके बाद नवीं क्रिया का नाम उत्क्षेपण है। इसमें सब क्रियायें करने के बाद सीधे खड़े हो जायँ। क्रम से अपने दाहिने व बाएँ पैरों को झिड़क दें व उसके बाद हाथों को झिड़क दें। इन्हीं नौ क्रियाओं का समुच्चय में नाम जीवन तत्व साधन है।

इन साधनों को करने वाला व्यक्ति प्रारम्भिक शिक्षण में सर्वोत्तान केवल तीन बार, स्कन्ध चालन १० मिनट, पग चालन दोनों तरफ का

५ मिनट, नाभि चालन १० मिनट, जानु प्रसार केवल तीन-तीन बार, बाल मचलन १ मिनट, बच्चे का ध्यान ३ मिनट् नाड़ी चालन १० मिनट और उत्क्षेपण क्रिया केवल एक-एक बार करें। इन क्रियाओं को करने से भूख की अत्यन्त वृद्धि होती है। निरन्तर करने पर मनुष्य को कायाकल्प हो जाया करता है, जितने योगासन आजकल संसार में प्रचलित हैं, उन सबका इन नौ क्रियाओं में समुच्चय है। इन सबका प्राकट्य श्री प्रभुजी ने नैपाल हिमालय से लौटने के बाद अपने मन से किया। पुना सवाँई गाँव आने के बाद श्रीप्रभु जी ने इन साधनों का बाकायदा जारी रखा। इन क्रियाओं के करने के बाद एक विशेष प्रकार की स्थिति आ जाया करती है। इसमें पकवान बन्द करके केवल कच्ची सब्जी व कच्ची दाल का ही सेवन करना चाहिये, जिसमें भूख बराबर लगी रहती है। श्री सिद्धगुफा पर निवास करते हुए श्री प्रभु जी ने यह साधन पूरी प्रबलता से कराया और परिणाम यह निकला कि यहाँ पर आस-पास सब्जी का मिलना दुर्लभ हो गया। कच्चा खाने वाले साधक भूख के कारण अत्यन्त व्याकुल रहते थे। उनके यहाँ पर किसी भी भाव से खाने लायक सब्जी नहीं मिलती थी।

खेत में पर्दापण व असंख्य फलों की प्राप्ति

सवाँई गाँव के एक व्यक्ति ने कई बीघे में घीया की बेलें लगाई थीं। कच्चा खाने वाले साधक उसी से सब्जी लिया करते थे। किन्तु कच्ची सब्जी खाने वालों की संख्या इतनी बढ़ी कि उस सारे खेत में एक भी घीया उपलब्ध नहीं हो पाई। श्री प्रभुजी ने स्वयं खेत वाले को बुलाकर कहा कि भाई! आज छोटी सी घीया मेरे लिये तू ला दे। वह बेचारा श्री कृपानाथ जी की आज्ञा पा करके बड़े हौंसले से अपने खेत में गया, किन्तु पूरा प्रयत्न करने पर भी उसे सारे खेत में एक भी घीया नहीं मिली। उसने लौट करके बड़े दीन-भाव से उनके चरणों में गिर करके प्रार्थना की कि दीनबन्धु! मेरे बहुत प्रयत्न करने पर भी सारे खेत में एक भी घीया नहीं मिली। प्रभो! मेरा बड़ा ही मन्द भाग्य है जो आपने एक छोटी-सी घीया मुझसे मंगाई, किन्तु वह भी पूरा प्रयत्न करने पर नहीं मिली। खेत वाले की आंखों में आँसू थे वह मन में बड़ा पश्चात्ताप था। परम करुणार्णव का हृदय उसकी दीन दशा पर अत्यत्न द्रवित हुआ और प्रसन्न-मुद्रा से कहने लगे— ''अरे भाई! तू कैसे कहता है कि मुझे घीया नहीं मिली, चल हम स्वयं चलेंगे और तेरे खेत में घीया ढूँढ़ेगे।'' श्रीप्रभु जी स्वयं चलकर उसके खेत में गये। अन्य साधन करने वाले भी साथ में चल पड़े। ज्यों ही श्री प्रभुजी ने खेत में प्रवेश किया, त्योंही स्थान-स्थान पर बड़ी-बड़ी लम्बी घीया बेलों पर लगी हुई दिखलाई देने लगीं। श्री प्रभुजी ने एक घीया अपने हाथों उतार कर खेत वाले से कहा- '' ले देख! तू तो कहना है कि हमारे खेत में घीया है ही नहीं, किन्तु इतनी बड़ी लम्बी-लम्बी घीया तेरे खेत में पड़ी हैं। साधक खाने वाले उन घीयाओं को खाकर तृप्त हो गये। उस दिन से उसके खेत में घीयाओं का पारावार न रहा। दूसरे दिन से आश्रम के सभी साधकों के लिये जितनी भी वे सब्जी खा सकते थे, उसने मुक्त देनी आरंभ कर दी। अभी तक भी सवांई गाँव के वासी लोग इसी विलक्षण घटना को निरन्तर स्मरण करते रहते हैं।

आत्म-हत्या की निवृत्ति बाबूरामसिंह पर कृपा

इस छोटी-सी पुस्तिका में श्री प्रभुजी के वे संस्मरण लिखे गये हैं जिनका सम्बन्ध सवाँई गाँव से है। एक और अद्‌भुत घटना जो इन चरित्रों से सम्बन्ध रखने वाली है लिख रहे हैं। लगभग सन् १९२८ के बाद भी प्रभु जी अनवरत ऋषिकेश योग-साधन आश्रम में विराजमान रहा करते थे और वहाँ से ही भक्तों के विशेष आग्रह करने पर इधर-उधर के प्रोग्रामों पर यथावकाश जाया करते थे। विशेषत:

पंजाब का यातायात अधिकतर बना रहता था। उन दिनों शक्तिपात दीक्षाओं के द्वारा श्री कृपा-निकेतन जी ने महा-पतितों का उद्धार किया और योग का सन्मार्ग दर्शा कर उन लोगों को विरक्त वनवासी बना दिया। सैकड़ों व्यक्ति आनन्द-मग्न रहते थे, कितने ही तुरीय स्थिति को पाकर देहाभ्यास से शून्य होकर ध्यान-मग्न होकर पड़े रहते थे। विलक्षण आनन्द का प्रवाह चल रहा था, जहाँ पर यह कृपा प्रवाह बह रहा था, वहाँ पर श्री प्रभुजी के चरित्रों में और भी विलक्षण घटनायें घटित होती रहती थीं। कभी-कभी श्रीप्रभु जी अपने भक्तों के क्लिष्ट संस्कारों को अपने शरीर पर भोगकर भुगतान कर दिया करते थे। इस रहस्य को हर व्यक्ति समझ नहीं पाता था। हमारे बड़े गुरु-भाइयों में श्रीमुलखराज जी महाराज और श्री गोपालानन्द जी उन दिनों हर समय तुरीय स्थिति में रहा करते थे। श्री प्रभुजी की महान करुणा के पात्र थे। श्री गंगा जी के तट से ध्यान मग्नावस्था में दौड़े हुए आते थे और श्री प्रभुजी के चरणों लिपट जाया करते थे। श्री प्रभुजी उनके प्रणय को स्वीकार कर उनको हमेशा सम्मानित रखते थे, किन्तु एक दिन इसके बिल्कुल विपरीत हुआ। मुलखराज जी व ब्रह्मचारी गोपालानन्द जी अपनी आनन्दमयी अवस्था में दौड़कर श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में लिपट गये, किन्तु श्री प्रभुजी ने उनको सान्त्ना व प्यार देने के अतिरिक्त दोनों को उठाकर फेंक दिया। सभी लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। श्री मुलखराज जी व श्री ब्रह्मचारी जी देहाध्यास रहित होकर पड़े रहे, किन्तु अन्य सभी आश्रम-वासियों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। श्री प्रभुजी जिन बच्चों को कभी भी अपने कण्ठ से अलग नहीं करते थे आज उनको मिट्टी के ढ़ेले की तरह दूर फेंक दिया। इसका क्या कारण है समझ में कुछ नहीं आ रहा था। किन्तु उस दिन श्री प्रभुजी का तेज भी बहुत विलक्षण था। मुख-मण्डल एकदम रक्त वर्ण दिखलाई दे रहा था, आंखें तेज और लालिमा से झलझला रहीं थीं। अत्यन्त विनय के साथ आश्रम वासियों ने पूछा- कि प्रभो आज ये आपका क्या विलक्षण स्वरूप है। आप अपने बच्चों से हमेशा लाड़-प्यार करते थे आज आपने उनको भी मिट्टी के ढ़ेले की तरह से दूर फेंक दिया है। उस समय तो श्री प्रभुजी ने उनकी बात का कोई जवाब नहीं दिया किन्तु कुछ देर के बाद यथार्थ स्थिति में आकर श्री प्रभुजी ने उनके अत्यन्त आग्रह से प्रसन्न होकर बतलाया कि भाई सवाँई गाँव में तेरा एक भाई बाबूराम ठाकुर है उसने आज आत्महत्या करने के लिये अफीम खाई थी उसका हमारे अन्दर बहुत प्रेम रहता है इसलिये उसके अफीम खाने का यह नशा इस समय हमारे शरीर पर था। उसका यह कष्ट हमने इतनी देर भोग लिया। वह इस आत्महत्या के महान संकट से बच गया है। इधर सवांई गाँव में मरने की इच्छा से अफीम खाने की प्रवृत्ति वाले बाबूराम ने देखा कि श्री प्रभुजी उसके सामने आये हैं व अफीम का गोला उसके हाथ से स्वयं छीनकर खा गये। इस घटना को ठाकुर बाबूराम के भाई ज्वालाप्रसाद आदि भी जानते हैं। स्वयं बाबूराम ने यह विलक्षण महिमा अपने अन्य सब भाइयों को बतलायी थी।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगिराज श्री मुलखराज जी महाराज

योग-योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

पूर्व-जन्म का ज्ञान

श्री गणपति जी ने उनको पूर्व-जन्म का दर्शन कराया। श्रीमुलखराज जी महाराज ने ध्यान में देखा कि एक सुन्दर पहाड़ है। वहां एक गांव दिखलाई दे रहा है, उस गांव वालों का रहन-सहन बहुत सुहावना है। पहाड़ से पानी के श्रोत झड़-झड़कर निकलते दिखाई दे रहे हैं। इस गांव में एक मकान है, जिसका एक द्वार पूर्व की ओर और एक पश्चिम की ओर था। पूर्व द्वार के सामने एक जलाशय-सा दिखाई देता था, उसके आस-पास कुछ सुहावने वृक्ष खड़े हुए थे। उस मकान में लगभग तीन या चार कमरे थे, उस मकान में एक परम तेजस्वी ब्राह्मण और एक दिव्य देवरूप देवी दिखलाई दी। श्री गणपति जी ने बतलाया कि यही तुम्हारा पूर्व-जन्म का गांव है, यही तुम्हारा घर है और यह तेजस्वी ब्राह्मण तुम्हारे पिता हैं और यह तुम्हारी माता हैं। श्री मुलखराज जी जिस समय अपने पूर्व-जन्म के दृश्य को देख रहे थे, उस समय उनको अपने इस जन्म की सुध-बुध बिल्कुल भूल गई थी। उन्होंने अपने आपको भी उस पूर्व-जन्म की आकृति में देखा। अपने पूर्व-जन्म के माता-पिता को ही माता-पिता जाना, पूर्व-जन्म के भाई-बहिनों को ही भाई-बहिन जाना और अपने पूर्व-जन्म के गाँव के मित्रों को मित्र जाना। वे ध्यान दृष्टि से बार-बार अपने पूर्व जन्म के घर में जाते और आते थे। जिस समय इनको अपने पूर्व-जन्म की स्मृति भंग हुई तो श्री गणपति जी से प्रश्न किया कि महाराज! मेरे माता-पिता अब कहां हैं? मैं यह जानना चाहता हूँ। मेरे उस जन्म वाले माता-पिता इस समय कहां वास करते हैं। श्री गणपति जी ने उसी समय हाथ का इशारा करते हुए श्री प्रभुजी की ओर बतलाया, यही तुम्हारे पूर्व-जन्म के पिता हैं। जिस समय माता जी को जानने की इच्छा हुई तो श्री माताजी का दर्शन एक देवलोक में कराया, उनका वर्ण बहुत उज्ज्वल गौर व तेजोमय था।

शरीरमान काफी लम्बा था, बहुत मृदुभाषिणी थीं। श्री माता जी ने देवलोक से ही इन्हें आशीर्वाद दिया। इसके अतिरिक्त और कई प्रकार के दृश्य ध्यान में श्रीमुलखराज जी महाराज ने देखे। इन्हीं आठ दिनों के अन्दर श्रीगणपति जी के दर्शन हर समय खुली आँखों और बन्द आँखों उनको होते रहे। आठ दिन के बाद जिस समय श्री प्रभुजी ओकाड़ा मण्डी से से लौटकर आये तो श्रीप्रभुजी ने श्री मुलखराज जी की ओर मुस्कराते हुए देखकर कहा- ''कहो बेटा! तुम्हारे प्रश्नों का जवाब तुम्हें मिला गया है?'' श्री प्रभुजी के दर्शन पाते ही श्री मुलखराज जी ने साष्टांग दण्डवत् प्रणाम की और प्रार्थना की। हां प्रभुजी! आपने अपने भटकते हुए बालक को पकड़ लिया है। श्री मुलखरजा जी के अत्यन्त विनययुक्त शब्दों को सुन करके श्री प्रभुजी ने उनको करुणाकर कंठ लगा लिया और हार्द दीक्षा दे करके एकदम तुरीय अवस्था प्रदान कर दी, जिससे उनका वर्षों तक बनी रहने वाली मस्ती, जैसा नशा सामान्य रूप से बना रहने लगा, इसी नशे के विषय में अनुभवी लोगों ने वाणियां लिखी हैं!

गुरु नानकदेव ने कहा है, ''नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रात।'' यह स्थिति उनकी इस प्रकार की थी, जिसमें यह बिल्कुल बाह्य ज्ञान से शून्य रहते थे। स्थिति में जिसके लिये जो जैसा शब्द निकल गया वह अमिट हो गया।

तुरीय स्थिति की दिव्य घटनाएँ

श्री मुलखराज जी महाराज इस मस्ती के नशे में इस प्रकार झूमते-झामते चलते थे, जिसमें उनको बिल्कुल बाह्य ज्ञान नहीं रहता था, किन्तु एक बड़ा भारी आश्चर्य था वह यह कि जिस समय वे अमृतसर के कर्मों ड्योढ़ी व हाल बाजार आदि बड़े-बड़े बाजारों से सिकलते थे, उस समय भी किसी मोटर, तांगा, रिक्शा व साधारण मनुष्यों से भी उनकी भिड़न्त नहीं होती थी। एक बार भाई ब्रह्मचारी श्रीगोपालानन्द श्री प्रभुजी के साथ चल रहे थे, उधर दाहिनी ओर श्री मुलखराज जी महाराज चल रहे थे, उस समय श्री ब्रह्मचारी जी ने श्री प्रभुजी से पूछा कि प्रभुजी! यह क्या बात है कि भाई जी की आंखें बिल्कुल बन्द रहतीं हैं और ऐसी स्थिति में भी ये सभी मोटर, तांगे, रिक्शों से बचकर निकल जाते हैं और इस स्थिति में क्या आनन्द आता है, उसको तो यही जानता है। यह आनन्द बतलाने में वाणी का विषय नहीं है।

''ज्यों गूँगा गुड़ खाय है, सैनिन स्वाद सराहिं।''

जिस आनन्द को किसी ने अभी तक नहीं देखा जो हर किसी को उपलब्ध भी नहीं है, उस आनन्द का वर्णन जीभ क्या करके बतलायेगी। दूसरी बात तुमने पूछी है कि इनकी भिड़न्त क्यों नहीं हो जाती तो इसको ले जाने वाला ड्राइवर सर्व शक्तिमान है, जो सभी का उर-प्रेरक है। इसलिये ऐसी स्थिति में कभी भी भिड़न्त नहीं हुआ करती और न ही ऐसी स्थिति में पहुँचे हुए योगी को कोई किसी प्रकार का नुकसान पहुँच सकता है।

समाधि परिणाम वाले योगी की वृत्ति जहाँ-जहाँ पहुँचती है वहाँ-वहाँ वह तद्रूप हो जाता है और तद्रूप होने पर उसकी वे शक्तियाँ हर समय उसका साथ दिया करती हैं। समाधि का अर्थ है- ''समाधि समतावस्था जीवात्म परमात्मन:'' अर्थात् जीवात्मा और परमात्मा की बिल्कुल अभिन्नावस्था को समाधि कहते हैं। भगवान पतञ्जलिदेव जी के शब्दों में समाधि का अर्थ है—

'तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधि:।'

अर्थात् योगी जिसका ध्यान करता है वही भासित होता रहे, अपना स्वरूप भी शून्यवत् हो जाये। अर्थात् अपना स्वरूप ज्ञान न होकर लक्ष्य का ही स्वरूप ज्ञान हो, योगी यह समझे कि वह मैं ही हूँ तो समझ लेना चाहिए कि समाधि शब्द उसके लिए क्रियान्वित है। श्री मुलखराज जी महाराज इसी स्थिति में हर समय रहते थे। वह चलते-फिरते, उठते-बैठते देखते थे कि भगवान विष्णु के चतुर्भुज स्वरूप में विलीन हो हरे हैं। कदाचित् उनको समाधि परिणाम वाली मनोवृत्ति भगवान शिव की ओर चली गई तो उन्होंने देखा—

'शिवोऽहम् शिव: केवलोऽहम्।'

अर्थात् मैं शिव हूँ केवल सदाशिव में मैं ही हूँ। एक बार इस तुरीय स्थिति में बन्द आँखों में अमृतसर में गुरु बाजार से होते हुए श्री मुलखराज जी कहीं घण्टाघर की तरफ जा रहे थे। उस स्थिति में जाते हुए श्रीमती बहन द्रोपदी जी ने उनको देखा तो दीक्षा कि वह साक्षात् सदाशिव हैं। उनके तीसरे नेत्र से महान प्रकाश निकल रहा है। तीसरे नेत्र का वह प्रकाश जिस किसी जीत पर पड़ गया वही सफल मनोरथ हो गया। श्रीमती बहन द्रोपदी जी उस समय तक श्री प्रभुजी के चरणार्विन्दों में नहीं आई थीं।

उन्होंने उनको को शिवरूप में देखक मन में बड़ा आश्चर्य माना और कहने लगीं, इन महापुरुष को देखना चाहिए। यह कौन है, मनुष्य है या इस रूप में स्वयं सदाशिव है। बहन द्रोपदी जी श्री मुलखराज जी महाराज के पीछे चलती रहीं और लोगों से पूछती रहीं कि यह कौन महापुरुष है या इस देश में छुपे हुए स्वयं भूतनाथ सदाशिव भगवान शंकर हैं।

लोगों ने श्री मुलखराज जी महाराज का परिचय देते हुए बतलाया कि यह योग-योगेश्वर प्रभु श्रीर रामलाल जी महाराज के पूर्ण कृपापात्र शिष्य हैं। श्री प्रभुजी की इस अलौकिक कृपा को देखकर बहन द्रोपदी जी अत्यन्त प्रभावित हुई व श्री कृपानिधि प्रभुजी के चरण कमलों में जाकर शरण ग्रहण कर ली। वैसे तो श्री मुलखराज जी महाराज का जीवन सारा ही योगमय रहा है, किन्तु इस तुरीय स्थिति में जबकि उनकी आंखें बन्द रहती थीं, तब भी प्राय: अद्भुत घटनायें घटती ही रहती थीं।

उड्डयान गति द्वारा पहाड़ से नीचे आना

एक बार श्री प्रभुजी श्री मुलखराजजी को व श्री गोपालानन्द जी को साथ लेकर कांगड़े के पहाड़ पर गये। साथ में और भी बहुत से गृहस्थ शरीर थे। अन्य साथ में जाने वाले सत्संगी लोगों ने जब इन दोनों की ऐसी दशा देखी कि पल-पल में मूर्छित हो जाते थे और शरीर चेतना हीन होकर जड़वत् पत्थर की तरह गिर जाते थे, लोगों ने श्री प्रभुजी से प्रार्थना की कि प्रभो! आप ले तो आये हैं किन्तु पहाड़ से नीचे कैसे उतारेंगे, तो श्री प्रभुजी हँसे और कहा कि भाई यह तुम लोगों से पहले जायेंगे और कोई नुकसान भी नहीं होगा। लोगों ने श्री प्रभुजी से प्रार्थना की कि महाराज हम यह देखना ही चाहते हैं कि यह पागलों जैसी स्थिति में रहने वाले कैसे पहाड़ से नीचे उतर जाते हैं। लोगों की इस हार्दिक भावना को देखकर श्री प्रभुजी ने कहा कि अच्छा अभी हम तुम्हारे सामने नीचे उतारे देते हैं। ऐसा कहकर श्री प्रभुजी ने दोनों को खड़ा कर लिया और निर्दय भाव से गर्दन पकड़ कर पहाड़ की चोटी से नीचे को धकेल दिया, सभी लोगों ने देखा कि श्री गोपालानंद जी दादुरी वृत्ति से नीचे जा रहे हैं और श्री मुलखराज जी उड्डयान गति से नीचे जा रहे हैं। सभी लोग पहाड़ों पर ही खड़े थे, सभी को बड़ा आश्चर्य हुआ और लोग धन्य-धन्य कहने लगे।

ब्रह्मपुरी के जंगल में चीते का दर्शन और प्यार

एक बार श्री प्रभुजी ऋषिकेश योगसाधन आश्रम से ब्रह्मपुरी के जंगल में भ्रमण करने के लिए गये। ज्योंही ब्रह्मपुरी के जंगल में पहुँचे और राह में जाने वाले सभी घूमते हुए आगे बढ़ने लगे तो इतनी देर में क्या देखा, कि सामने एक खूँख्वार चीता भागता हुआ आ रहा है। जिसको देखकर सभी सत्संगी डर गये और प्रार्थना करने लगे कि प्रभुजी ने आदेश दिया कि डरो मत यह चीता तुम्हें कुछ नहीं कहेगा, अपना आहार खाकर व जल पीकर वापस लौट जायेगा। श्री मुलखराज जी महाराज उस समय श्री प्रभुजी के साथ थे और उनकी तुरीय स्थिति चल रही थी। नेत्र कुछ अर्द्धोन्मीलित से रहने लगे थे। ऐसी हालत में श्री प्रभुजी ने श्री मुलखराज जी से कहा कि- बेटा देख तो यह क्या आ रहा है। श्री मुलखराज जी ने थोड़ी सी दृष्टि उठाई और उस चीते की ओर देखकर कहा कि- प्रभुजी यह आपका बच्चा ही तो है। यह कहते-कहते श्री मुलखराज जी ने चीते को पकड़ लिया और उसे प्यार करने लगे। चीते के मन के अन्दर भी कोई राग-द्वेष नहीं दिखाई दिया। वह उनके प्यार को पाकर स्वेच्छा गति से लौट गया व किसी से कुछ नहीं कहा। भगवान पतञ्जलिदेव ने इसी सिद्धान्त का योग-दर्शन के अन्दर खुले शब्दों में प्रतिपादन किया है—

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्याग:।

अर्थात् जिस योगी की अहिंसा में पूरी प्रतिष्ठा हो जाती है, उसके प्रति प्राणीमात्र बैर छोड़ देता है।

श्री मुलखराज जी महाराज वर्षों तुरीय स्थिति में रहे। वह सब क्रियायें करते हुए भी देहाभास रहित रहा करते थे। लगभग आठ महीने तो बिल्कुल ही बाह्य चेतना शून्य रहे। ऐसी स्थिति में सभी प्रकार के विषैले जंतु भी इन पर अपना कोई प्रभाव नहीं डालते थे। सर्प, बिच्छू आदि अङ्ग में लिपट जाते और फिर अपनी स्वाभाविक गति से उतर कर चले जाते। श्री मुलखराज की यह स्थिति जब अनवरत बनी ही रहने लगी तो उनके घरवालों को बड़ी चिन्ता हुई।

उन्होंने श्री प्रभुजी के चरणारविंदों में आकर प्रार्थना की- महाराज यही हमारा बड़ा लड़का है और ये ही नशैयों की तरह से दिन-रात पड़ा रहता है। हमारा कोई भी कार्य व्यवहार नहीं चलता, इसलिये कृपा करके इसकी इस तुरीय स्थिति में परिवर्तन कीजिये जिससे कि यह अपना भजन, ध्यान करता हुआ दुनियावी व्यवसाय में भाग ले सके। यद्यपि योग-योगेश्वर श्री प्रभुजी की यह इच्छा बिल्कुल नहीं थी कि वे श्री मुलखराज जी को यत्किंचित् भी बहिर्मुखता की ओर ले जायें, किन्तु उनके घरवालों के अतिशय अनुरोध करने पर श्री प्रभुजी ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और आज्ञा दी कि- अच्छा, कल से मुलखराज तुम्हारे घर के सब काम करेगा, किन्तु आंखें उसकी बन्द ही रहेंगी। तुम्हारे किसी भी कार्य व्यवहार में हानि नहीं हो सकेगी। काम सब बराबर चलते रहेंगे। श्री प्रभुजी के आदेश को पाकर श्री मुलखराज जी ने पिताजी ने प्रार्थना की कि मुलखराज जी ने पिताजी ने प्रार्थना की कि महाराज बन्द आँखों में यह मुलखराज दुकान पर क्रय-विक्रय का कार्य कैसे कर सकेगा। और इसकी आँख बन्द रहते हुए किसी प्रकार का नुकसान हो गया तो इसका जिम्मेवार कौन होगा। श्री प्रभुजी ने उत्तर दिया- कोई चिन्ता मत करो इससे किसी भी प्रकार का नुकसान हो गया तो उसके जिम्मेवार हम होंगे। श्री प्रभुजी के बार-बार ऐसे आज्ञा प्रदान करने पर श्री मुलखराज जी के पिता उनको अपने साथ ले गये और दुकान पर सौदा बेचने के लिए बैठा दिया। वह भी श्री प्रभुजी की आज्ञानुसार क्रय-विक्रय आदि सभी कार्य करने लगे।

दुकान पर अखण्ड समाधि व माता को दर्शन

श्री प्रभुजी की परम अनुकम्पा से दुकान का सभी कार्यभार श्री मुलखराजजी ने संभाल लिया। जिस दिन से श्री मुलखराज दुकान पर बैठे उसी दिन से दुकान की आय दस गुनी अधिक बढ़ गई। श्रीमुलखराज के सभी कुटुम्बी यह भली प्रकार से समझ गये कि यह सब कुछ श्री प्रभुजी की परम अनुकंपा का ही फल है। एक दिन प्रात:काल के समय श्री मुलखराज की माताजी दुकान पर आयीं। उन्होंने आकर देखा कि उनके पुत्र श्री मुलखराज बिल्कुल निश्चल भाव से बैठे हुए हैं और उनकी अखंड समाधि लगी हुई है। उनके सिर पर एक चूहा चढ़ा हुआ है और दो पैर के बल खड़ा हो करके कभी ऊपर सामने लगता है, किन्तु श्री मुलखराज को इसका यत्किंचित भी बोध नहीं है। अपने पुत्र की इतनी ऊँची स्थिति को देख करके उनकी माताजी ने श्री प्रभुजी का परम अनुग्रह माना और अपने बेटे को ही साक्षात् शिव का रूप मानकर उनको बार-बार नमस्कार किया।

श्री मुलखराजजी के पिता व उनके भाइयों के विचार आर्य सामाजिक थे। वे लोग श्री मुलखराज की ऊँची समाधि स्थिति को देखते भी इन पर विश्वास नहीं रखते थे। अत: ये लोग इस आशा में थे कि मुलखराज जी के व्यापार कार्यों में कोई त्रुटि निकले या किसी प्रकार की हानि दिखलाई दे तो यह लोग श्री प्रभुजी से जाकर कहें कि आज मुलखराज ने हमारा अमुक नुकसान किया, किन्तु श्रीप्रभुजी की परम अनुकम्पा से उनके भरसक छिद्रान्वेषण करने पर भी ऐसा कोई अवसर नहीं मिला पाया जिससे कि वह मुलखराज जी की शिकायत कर सकें।

किन्तु जिस व्यक्ति को जैसी लगन होती है यदाकदा उसको वैसा संयोग मिल ही जाया करता है। यहाँ पर भी एक घटना इसी प्रकार की घटित हो ही गई जिससे वह लोग अपने मन में शिकायत करने के लिये उल्लसित हो उठे। ये लोग मन में यह सोचते भी थे कि भले ही हमारा नुकसान हो जाय, किन्तु एक बार हम श्री मुलखराज के गुरुदेव योग योगश्वर प्रभु श्री रामलाल जी के चरण-कमलों में यह कह तो दें कि इस मुलखराज ने अपनी भजन समाधि में ही हमारी दुकान का इतना नुकसान कर दिया। सो ईश्वर इच्छा से उनको ऐसा ही एक असफल संयोग मिला। वह इस प्रकार है—

कुम्हारों पर कृपा

एक दिन श्री मुलखराजजी नित्य की भांति ध्यान मुद्रा में पड़े हुए थे। ग्राहक लोग आते थे और सौदा लेते थे, चले जाते थे और कीमत पूरी-पूरी अदा कर जाते थे। एक दिन कहीं से कुछ कुम्हार लोग आये और उन्होंने दुकान पर आ करके थोक के भाव से कुछ बिनौले खरीदे और अपने गधों पर लाद करके चुपचाप चल दिये। कुम्हारों ने अपने मन में यह अनुमान लगा लिया था कि यह लाला नशे में है जो रोज सोया पड़ा रहता है, इसको कीमत चुकाने की आवश्यकता ही क्या है? सौदा खरीद ही लिया है, तुम चुपचाप यहाँ से चले चलो। कुम्हारों ने अपने मन में इस प्रकार का विचार किया और तत्काल ही उस विचार को कार्य रूप में परिणित किया और फिर वे लोग तत्काल वहाँ से चल दिये। इधर श्रीमुलखराज जी उसी प्रकार ध्यानस्थ पड़े थे। कहीं से उनके पिता लाला देवीदासजी और छोटे भाई घूमते हुए आये।

उन्होंने आकर पूछा कि भाई मुलखराज! कुम्हार बिनौले खरीद कर ले गये हैं उसका रुपया कहाँ है। श्री मुलखराज जी ने उत्तर दिया कि कुम्हार वह रुपया नहीं दे गये। ज्योंही श्री मुलखराज जी के मुख से यह उत्तर निकला, त्योंही उनके पिताजी और छोटे भाई ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि आज श्री मुलखराज के गुरुदेव जी के चरण-कमलों में जाकर कहेंगे कि महाराज हमारा इतना नुकसान हो गया है। अत: आप अपने वचनानुसार इस दुकान को पूरा कीजिये। इधर ये लोग विचार कर ही रहे थे कि इतनी देर में क्या देखा कि वही कुम्हार हाथ बांधे हुए आ रहे हैं और गिड़गिड़ाकर यह कह रहे हैं कि हे लाला जी! कृपा करके अपना रुपया ले लीजिये और हमें रसीद दीजिये, हम रुपया देना भूल गये थे, आपने मार-मार के हमारा नाश कर दिया, पता नहीं वह कौन आदमी है, लम्बे कद का, शरीर का रंग गौरवपूर्ण है। जिसको तुमने भेजा है उसने हमें बुरी तरह मारा और गधों को पीटकर भगा दिया है। हम जान बचा करके मुश्किल से भागकर आये हैं।

जब तक तुम रसीद बनाकर नहीं दोगे तब तक वह आदमी हमें बिल्कुल निकलने नहीं देगा। इसलिये कृपा करके रसीद बना दो। रसीद तो बनाई, किन्तु साथ ही श्री मुलखराज जी के पिता और छोटे भाई विचार करने लगे कि हमने रसीद तो बना दी किन्तु कोई व्यक्ति तो हमने भेजा ही नहीं था, जिसका ये कुम्हार नाम ले रहे हैं। वह आदमी कौन था? कुम्हारों के कथनानुसार जब वहाँ जाकर देखा तो वहाँ पर कोई आदमी नहीं मिला। श्री मुलखराज जी अपने मन में पूरी तरह से समझ गये कि यह व्यक्ति श्री प्रभुजी के चरण-कमलों के अतिरिक्त और कोई नहीं था। श्री प्रभुजी की इस अनुकम्पा को देखकर ये लोग भी भली प्रकार समझ गये कि ये लोग श्री मुलखराज को कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकते। किन्तु स्वाभाविक डाह इनके मन में बना ही रहा।

शनैः-शनैः इसी चिढ़ाचिढ़ी के अन्दर इनके मन में अधिकाधिक ईर्ष्या श्री मुलखराज जी के प्रति बढ़ती चली गई। श्री मुलखराज जी का कोई छिद्र तो ये लोग पकड़ नहीं सके किन्तु उनको चिढ़ाने वाले कार्य बार-बार करने लगे। ये कभी भी अवकाश पाते ही श्री प्रभुजी को अपवाद की बातें किया करते थे और मुख से अपशब्द बोलते और सोते समय जिधर श्री प्रभुजी निवास करते थे उस दिशा को पैर करके सोते थे जिससे श्री मुलखराजजी मन में चिढ़ उठे और दुःखी हो गये। और वैसा ही हुआ भी। इनके दुर्व्यवहार से श्री मुलखराज जी बहुत ही अधिक तंग आ गये और यह सोचने लगे कि मेरे शरीर के कारण ही मेरे पिता हैं।

इसलिये तुच्छ शरीर को मुझे त्याग देना चाहिये क्योंकि यह लाला देवीदास से पैदा हैं। न यह शरीर रहेगा और न यह निन्दा सुननी पड़ेंगी। यह सब विचार करके श्री मुलखराजजी ने श्री प्रभुजी के चरणों में जाकर प्रार्थना की कि हे प्रभो! मेरा पिता मुझसे बड़ा अन्याय करता है और आपके श्री चरणों का बड़ा अपवाद करता है, यह सब कुछ मुझ से सहन नहीं होता, या तो कृपा करके मेरे पिता के स्वभाव को ही बदल दीजिये अन्यथा यह शरीर अब इस संसार में न रहे, यही अच्छा है। श्री मुलखराज जी की प्रार्थना को सुनकर श्री प्रभुजी मुस्कराये और कहने लगे कि बेटा! यह बात तुम्हारे लिये कुछ भी कठिन नहीं हैं। तुम आज ध्यान में बैठकर जब भी गणपति में लय होगे तो सिद्धि को आज्ञा दे देना कि वह तुम्हारे पिता के स्वभाव को बदल दे। बस इतना करने से तुम्हारे पिता का स्वभाव बिल्कुल बदल जायेगा और वह तुम्हें फिर कोई अपशब्द नहीं कहेगा।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

आनन्दकन्द योग-योगेश्वर श्री सद्गुरुदेव जी द्वारा

भण्डार भरपूर

पहले की घटना में वर्णित ठा. बाबूराम विलक्षण सन्त-सेवी सज्जन थे, श्री गुरुदेव जी के चरण कमलों पर तन मन से न्यौछावर थे, उनकी यह हार्दिक भावना थी कि घड़ी-घड़ी और पल-पल श्री प्रभुजी के चरण चिन्तन में ही व्यतीत हो जायें, यह इस मनुष्य जीवन का अमर फल है—

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी में पुनि आध।
तुलसी संगति साधु की, हरै कोटि अपराध।।

अत: सन्त चरण सेवा, दीनों पर दया और परोपकार की भावनायें उनके जीवन में कूट-कूटकर भरी हुई थी। लोकापवाद का यत्किंचित भी भय नहीं था। ठा. बाबूराम की एक लड़की थी। यह कन्या युवावस्था को प्राप्त हुई और बाबूराम के मन में लड़की की शादी की चिन्ता हर समय व्याप्त रहने लगी। घर में पैसे का बहुत अभाव था किन्तु भक्त बाबूराम युवा बेटी के विवाह की चिन्ता होते हुए भी प्रभु के चरणानुराग में बिल्कुल लापरवाह थे, लड़की का सम्बन्ध यथा तथा प्रयत्न करने पर निश्चित हो गया। दिन-दिन विवाह तिथि नजदीक आती गई। बारात के आतिथ्य का कोई साधन दिखलाई नहीं दे रहा था, किन्तु दृढ़ लगन प्रभु के चरणार्विन्द में लगी थी। मन में यह भावना थी जैसे उन कृपानिधि की इच्छा होगी सब शुभ होगा, मेरे कुटम्बी-भाई बन्द जिस प्रकार से भी समझेंगे करेंगे। इसी प्रकार की विचार-धाराओं में बीच के दिन व्यतीत हो गये। शादी का समय आ गया। लोग बाबूराम के भोलेपन व आत्म समर्पणता को देखकर उपहास करने लगे लोग कहते थे देखें अब बाबूराम क्या करेगा और क्या उसके बाबाजी करेंगे। शादी का समय आया देख और अपने आपको साधनहीन देख करके बाबूराम यह विचार कर रहे थे कि मैं अब कहीं चुपचाप अन्यत्र प्रस्थान कर जाऊँ जो कुछ होना होगा होता रहेगा। किन्तु चलते समय श्री प्रभुजी के चरणार्विन्दों के प्रणाम करके चला जाऊँ सम्भव है उसमें कोई भविष्य के लिये शुभ है इसी भावना को लेकर बाबूराम श्री प्रभुजी के चरणार्विन्दों में पहुँचा। वे घट-घट के पहचानने वाले भक्त-वत्सल श्री प्रभुजी अपने आसन पर बैठे हुए मुस्करा रहे थे। बाबूराम को चिन्तित देखकर बोले ''क्यों बाबूराम दे रहा है क्या तुम अपने मन की दारुण व्यथा हमसे बतलाओगे?'' श्री दीनबन्धु जी के ऐसे करुण वचन सुन करके ठा. बाबूराम ने अपनी करुण कहानी सुनाई। बाबूराम की उस अनुनय-विनय को सुनकर करुणार्णव का हृदय द्रवित हो उठा और मुस्कराते हुए बोले कि ''बस इतनी सी बात के लिए तुम घर छोड़कर जा रहे हो, यह लो हमारी चरण-पादुका ले जाओ इसको भण्डारे में एक चौकी पर रख लेना। भण्डारे के सामने पर्दा रखना उसमें हर व्यक्ति प्रवेश न करें। भण्डारे में रखी हुई यह चरण पादुकायें तुम्हें मनोवांछित फल देंगी। भण्डारे से जिस वस्तु की आवश्यकता तुम्हें महसूस हो निकाल लिया करना। तुम्हें सभी अभीप्सित वस्तुयें मिलती रहेंगी। जिस दिन तुम्हारी बारात विदा हो जाये, उसी दिन तुम्हारी बारात विदा हो जाये, उसी दिन बारात की विदाई के बाद हमारी चरण-पादुकायें हमें लौटा जाना। बाबूराम ने श्री अनाथनाथ जी की वाणी पर विश्वास करके वैसी ही किया। सभी लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ, बाबूराम का भण्डारा भरपूर हो गया। सबसे बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि बारात की विदाई के बाद जिस दिन चरण-पादुकायें लौटायीं उस दिन पूर्वोपार्जित सामग्री ज्यों की त्यों शेष थी। जो लोग उपहास करना चाहते थे। इस आश्चर्य को देख करके सभी लोगों के मुख बन्द हो गये-

जा को राखै साइयां, मार सके नहिं कोय।
बाल न बांका हो सकै, जो जग बैरी होय।।

जिस पर कृपानिधि जी कृपा करते हैं वह सफल कल्याण-भाजन परम पवित्र व सुख शान्ति का धाम बन जाता है।

अन्धी लड़की पर कृपा

योग-योगेश्वर श्री प्रभुजी की कृपा महिमा की धूम मची हुई थी। चारों ओर से दुखित लोग अपने क्लेशों की निवृत्ति के लिये धड़ाधड़ आ रहे थे। दरबार में यह नियम था कि जो स्वयं चलकर आ सकते हैं व साधन कर सकते हैं उन्हीं को साधन कराये जायेंगे। जिनके नेत्रों में थोड़ी-बहुत ज्योति है, उनकी नेत्र-ज्योति का योग-साधनों द्वारा ठीक कर दिया जायेगा। अनेकानेक रोगी अपने-अपने कष्ट को लेकर आये, वे सब ठीक हो गये। अकस्मात् किसी गाँव के भोले व्यक्ति किसी अंधी लड़की को लेकर आये और प्रार्थना की कि महाराज! चेचक की तीव्र वेदना से इसफा आँखें जाती रही हैं, इस दीन लड़की पर आप दया करें और इसको चक्षु दान देकर कृतार्थ करें। श्री प्रभुजी ने अपने नियमानुसार बतलाया— ''भाई! जिसको कुछ दृष्टि होती है, उसको हम साधन कराते हैं उसकी दृष्टि बढ़ सकती है, किन्तु इस लड़की की बिल्कुल दृष्टि नहीं है, इसलिये

इसको किसी भी साधन का फलीभूत होना कठिन है। उसके साथ आने वाले लोगों ने सूर्य की तेज रोशनी में मुरादाबादी कलई के लोटे की झलक उसकी आँखों पर डाली, जिससे कुछ आभास मालूम पड़ जाये, किन्तु उसको कुछ भी आभास नहीं मालूम हुआ। ऐसी स्थिति में भी वे लोग निराश नहीं हुए। वे लोग दृढ़तापूर्वक विनय करते रहे, तब श्री प्रभुजी ने उन लोगों को अत्यन्त दीनतापूर्ण हठ को देखकर एक गुलाब का एक फूल दिया और आज्ञा दी कि जाओ यह फूल ले जाओ, इसको ठण्डे जल में भिंगो कर इस लड़की की आँखों पर घुमाते रहो व प्रात:काल ठण्डे जल के छींटे इसकी आँखों पर दिया करो व नासिका से जल-पान कराओ, यदि इसके कोई सुकृत हुए तो इसका भला हो जायेगा। लोगों ने श्री प्रभुजी की आज्ञा को प्राप्त करके उसी प्रकार किया। उन कृपानिधि जी की परम-कृपा से गुलाब का फूल नेत्रों में घुमाने मात्र से ही दृष्टि आ गई। उसी प्रकार श्री प्रभुजी के बतलाये हुए अन्य साधन उन लोगों ने उस लड़की से कराये तो बहुत जल्दी अच्छी दृष्टि वालों की तरह से वह लड़की देख उठी। श्री प्रभुजी के महान अनुग्रह से नेत्र दृष्टि का प्रसाद पाकर उसका व घर वालों का जीवन सफल हो गया।

यद्दच्छा-गति

मूकं करोति वाचालं पंगु लङ्घयते गिरिम्।
यत्कृषा तमहं बन्दे परमानदं माघवम्।।

प्रभु सर्वशक्तिमान, कर्त्तुमकर्त्तुममन्यथा-कर्त्तम की शक्ति वाले अपने भक्तों पर अनुग्रह करने के लिये क्या नहीं करते। आवश्यकता केवल एक बात की है और वह है उनके चरणों का अनन्य चिन्तन। अनन्यनिष्ठ व्यक्तियों को सभी कुछ सुलभ होता है। सवाँई गाँव में श्री प्रभुजी के चरणार्विन्द के अनन्यच अनुरागी परम गुरु-भक्त एक ठाकुर वास करते थे उनका नाम भगवानसिंह था। गाँव के सरल भोले-भाले व्यक्ति थे, घर में हमेशा अर्थाभाव रहता था किन्तु उनकी प्रेम-निष्ठा में कोई कमी नहीं थी। समय-समय पर उनके साथ श्री प्रभुजी की विलक्षण कृपायें घटित होती रहती थीं। श्री सिद्धगुफा की रज को सेवन करना और आते-जाते गुफा को नमस्कार करना। गाँव में रहते हुए यह उनका नित्य कर्तव्य था। अपने जीवन में समय-समय पर घटने वाली उन्होंने अनेक विलक्षण बातें हमें बतायीं। किन्तु उन सबमें एक घटना बहुत विलक्षण व महत्व का स्थान रखती है। जो ठा. भगवानसिंह ने स्वयं अपने मुख से बतलाई थी। ठा. भगवानसिंह का कोई आवश्यक कार्य था उस समय उस काम को कर लेने के लिए उनको सूचना ऐसे समय पर मिली जिस समय उस दूसरे स्थान पर पहुँचने के लिए कोई भी साधन उपलब्ध नहीं हो सकता था और सूचना प्राप्त हो जाने के बाद उस दिन सायंकाल चार बजे तक यदि भगवानसिंह गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाते हैं तो उनका कार्य बनता है अन्यथा निष्फलता तो थी ही। ठा. भगवानसिंह को अत्यन्त मानसिक क्लेश हुआ। जिस गाड़ी से गन्तव्य स्थान पर जाया जा सकता था उसके स्टेशन पर पहुँचने के समय में केवल पाँच मिनट बाकी थे। जिस स्टेशन पर पहुँचना था वह स्टेशन गाँव से आठ मील की दूरी पर था। पांच मिनट के अन्दर आठ मील पर पहुँचा देने का कोई साधन नहीं था। भगवानसिंह को अत्यन्त मानस क्लेश हुआ। क्या किया जाये कोई उपाय नजर नहीं आता था।

''जैसी होय हीतव्यता तैसी उपजै बुद्धि।''

ठा. भगवानसिंह को श्री प्रभुजी के कृपामय चरण-कमलों का तीव्रतम स्मरण हो आया। उन्होंने मन ही मन आर्त्त-भाव से प्रार्थना की। हे दीनबन्धु आर्त्त-हरण! हे सिद्धों के महासिद्ध योग-योगेश्वर गुरुदेव जी! मेरी रक्षा करो, किसी भी प्रकार हमें गंतव्य स्थान पर पहुँचा दो, ताकि मेरा यह कार्य बन सके। भव-भयहारी योग-योगेश्वर श्री प्रभुजी ने अपने बच्चे की आर्त्त पुकार को सुना। साहसा आकाशवाणी हुई, 'बेटा चलो!' अकस्मात् श्री प्रभुजी की वाणी को सुनकर ठा. भगवासिंह गद्‌गद् हो उठे। उन्होंने अपने मन में निश्चय कर लिया कि जटा-जूटधारी साधारण साधुओं की तरह बाबा कहने वाले योग-योगेश्वर गुरुदेव श्री प्रभुजी ने हमें चलने का हुक्म दिया है, परिणाम वे स्वयं दीनबंधु ही जानें। श्री प्रभुजी की आज्ञा को शिरोधार्य करके ठा. भगवानसिंह जी चल पड़े, बड़ा ही आश्चर्य हुआ। यह घटना भगवानसिंह जी ने स्वयं हमें अपने मुख से सुनाई थी। ज्योंही वह कदम उठाकर आगे को रखते थे उनका एक-एक कदम कई-कई फलाँग पर पड़ता था। जो व्यक्ति अभी एक-क्षण के अन्दर २-३ फलाँग आगे दिखाई देता है वह कदम उठाते ही कई फलाँग पीछे दिखलाई देता था। बड़ी भारी आश्चर्य की बात यह हुई कि देखते ही देखते १०-१५ कदम चलने पर ही भगवानसिंह जी रेल्वे स्टेशन पहुँच गये। वहाँ जाकर घड़ी देखी तो वही ५ मिनट ज्यों के त्यों बकाया थे। यथा समय ट्रेन स्टेशन पर पहुँची। ठा. भगवानसिंह उसमें सवार हो गये व ठीक समय पर अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच गये। जिस कार्य को वह लक्ष्य करके गये थे पहुँचते ही वह पूरी तरह सफल हो गया। परम कल्याणधन श्री प्रभुजी का अपने ऊपर इतना अनुग्रह देखकर ठा. भगवानसिंह कृत-कृत्य हो गये और श्री प्रभुजी के चरण स्मरण में ही अपने मन को लगा दिया।

अबोध बालक पर अद्‌भुत कृपा

इस पुस्तिका में हम पीछे सद्‌गुरुदेव योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज की अपने भक्त बालकों पर होने वाली अनुकंपाओं को लिख चुके हैं। जहाँ पर जिस पवित्र कुटुम्ब में यह प्रवाह प्रवाहित हो जाता है, वहाँ पर यह देख गया है कि उस कुटुम्ब के बालक भी उस रंग में स्वभावत: रंग जाया करते हैं, उस कुटुम्ब के लोगों की अनन्य निष्ठा उन कृपाओं का भाजन बना देती है और वे लोग भी प्रभुजी की अलौकिक महिमाओं को देखने लगते हैं। ठा. चन्दनसिंह का वर्णन हम ऊपर की घटनाओं में कर चुके हैं। उनको श्रीप्रभु जी ने शक्ति-संचरित की हुई एक माला दी थी, जिसकी शक्ति का वर्णन ऊपर की घटनाओं में कर दिया गया है। ठा. चन्दनसिंह का कुटुम्ब उनकी स्त्री व बाल-बच्चे सदा-सर्वदा

बाबा-बाबा कह करके श्री प्रभुजी के अद्‌भुत कृपामय स्वरूप का स्मरण करते रहते हैं और प्राय: नित्य ही श्री सिद्धगुफा को नमस्कार करते हैं और रज को चाटते हैं। चन्दनसिंह का एक छोटा सा बालक रघुराज स्कूल से पढ़कर लौटता हुआ अचानक जंगल में फिसलकर किसी गड्‌ढ़े में गिर गया। जेठ मास की गर्मियों के दिन थे बच्चा प्यास से बहुत व्याकुल था, चलने में असमर्थ हो गया था। अचानक एक आवाज आई ''बेटा क्या तू प्यासा है पानी पीयेगा। तो पानी पी।'' आवाज किसकी थी बालक यह नहीं समझ सका, किन्तु आवाज के आते ही उसे कुँआ नजर आया उस पर काश्त करने वाले लोग पैर जोते हुए थे और चरस से पानी खींचकर अपने खेतों की सिंचाई कर रहे थे। बच्चे ने पेट भर पानी पिया और पैर जोतने वालों ने जिस पैर में चोट आ गई थी उसे धोने के लिये कहा। उसने पैर और हाथ धो लिये और वहां से स्वस्थ होकर चला आया। किन्तु उस उस बालक ने देखा वहां पर कोई कुआँ नहीं था और उसका पानी पीकर स्वस्थ हो जाने के बाद फिर भी वहाँ कुआँ न रहा। बालक ने घर आ करके अपने कुटुम्बियों को यह घटना बताई कि मेरे पानी पी लेने के बाद वह कुआँ व पैर जोतने वाले पता नहीं कहाँ चले गये। बालक के मुख से यह घटना सुनकर उसके कुटुम्बी लोग व उसके पिता के मित्र पं. रामचन्द्र आदि उस कुआँ को ढूँढ़ने गये किन्तु उस मार्ग पर न तो कुआँ था और न ही कोई मिला। अपने बालक पर कृपायुक्त इस घटना को समझ करके व यह जानकर अपने बच्चे के हित-साधन के लिये योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज की ही कृपा है, यह जानकर सब प्रेम मग्न हो गये।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

भैरवी चक्र के कुचक्र से जयराम की रक्षा

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सवाँई से नैपाल (हिमालय) जाते हुए श्री प्रभुजी बनारस में रुक गये और कुछ दिन वहीं रहे। जयराम नामक एक विद्यार्थी यहाँ उनके सम्पर्क में आया और उनके चरणारविन्दों में प्रीति रखने लगा। उन दिनों बनारस में बाममार्गियों द्वारा भैरवीचक्र लगाया जाता था। वह चक्र व्यभिचार का एक अड्डा होता था। उसमें युवा पुरुष और स्त्रियाँ सम्मिलित हुआ करती थीं। नियमानुसार स्त्रियों को अपना एक वस्त्र उतारकर एक अँधेरे कमरे में रखना पड़ता था। फिर पुरुष उन वस्त्रों पर टूट पड़ते थे। जिसके हाथ जिस महिला का वस्त्र लग जाता उस पर उसका अधिकार माना जाता था। उसके साथ नाचने तथा कुकर्म करने की उसे पूरी छूट होती थी। अविवाहित स्त्री-पुरुष ही आमतौर पर उस संस्था के सदस्य बना करते थे। यदि बाद में युवक का विवाह हो जाये तो संस्था के नियमानुसार उसे अपनी नव-विवाहिता पत्नी को भी भैरवी-चक्र में शामिल करना पड़ता था। ऐसा न करने पर वाममार्गी अपने तान्त्रिक प्रयोगों द्वारा उस दम्पत्ति को या तो मार ही डालते थे अथवा उनका अंग-भंग कर देते थे।

जयराम विद्यार्थी भी एक-दो भैरवी-चक्रों में जा चुका था। बाद में उसका विवाह हो गया। दैवीयोग से उसे बड़ी सुन्दर और सुशील पत्नी मिली। वाममार्गियों के प्रधान को जब इस बात का पता लगा तो वह जयराम पर इस बात का पता लगा तो वह जयराम पर इस बात के लिये दबाव डालने लगा कि वह अपनी पत्नी को भैरवी चक्र में शामिल करे।

एक दिन की बात है कि जयराम आनन्दकन्द श्री प्रभुजी के चरणार्विन्दों में बैठा हुआ था तो वह वाममार्गी ब्राह्मण जयराम को ढूँढ़ता हुआ वही आ पहुँचा। उसे देख जयराम भय से काँपता हुआ उठ खड़ा हुआ। उसने उसे साष्टाङ्ग प्रणाम किया और हाथ जोड़े उसकी बातें सुनता रहा। कुछ समय बाद जब वह चला गया तो श्री प्रभु जी के पूछने पर जयराम ने सारा किस्सा उन्हें कह सुनाया।

श्री प्रभुजी ने उसे आज्ञा दी कि तुम इस बात का पता लगाओ कि अब भैरवी चक्र कब और कहाँ लगेगा? यदि तुम हमें यह जानकारी दे दोगे तो हम उसका सारा घमण्ड चूर चूर देंगे और तुम्हारी हर तरह से रक्षा करेंगे।

जयराम अपने मन में विचार करने लगा कि यदि मैंने इन्हें भैरवी चक्र के बारे में जानकारी दे दी और यह मेरी रक्षा करने में असमर्थ रहे तो मुझे वाममार्गियों के कोष का भाजन बनना पड़ेगा। वे लोग मुझ तो मार ही डालेंगे साथ ही मेरी पत्नी को भी असह्य यातनाएँ देंगे।

सर्वान्तर्यामी श्री प्रभुजी उसके मनोभावों को जान गये और दृढ़तापूर्वक बोले- घबराओ मत, तुम्हारा बाल बाँका नहीं होने दिया जायेगा। तुम हमें केवल इतना पता दे दो कि भैरवी चक्र किस दिन, कहाँ लगेगा? बस। फिर सारी स्थिति खुद संभाल लेंगे।

श्री प्रभुजी के ये वचन सुनकर जयराम आश्वस्त हो गया और भैरवी चक्र का पता लगाने चला गया। कुछ घण्टों में ही वह पूरी-पूरी जानकारी लेकर प्रभु-चरणों में लौट आया और सारा रहस्य उन्हें बता दिया।

श्री प्रभुजी को वाममार्गियों का यह धर्म विरुद्ध आचरण असह्य हो गया। उन्होंने मर्यादा की रक्षा के लिए भैरवी चक्र को समाप्त करने का निश्चय किया। जयराम से कहा- भैरवी चक्र वाले दिन तुम हमें वहाँ पहुँचा देना। इस पर जयराम ने कहा—

महाराज जी! आम लोगों को वहाँ घुसने नहीं दिया जाता। हाँ, वह स्थान मैं आपको दिखा दूँगा।

श्री प्रभुजी ने कहा- ठीक है, तुम हमें स्थान दिखा देना। अन्दर हम अपने आप चले जायेंगे।

जिस दिन भैरवी चक्र होना था उस दिन रात्रि को श्री प्रभुजी जयराम के साथ उस स्थान पर गये और अणिमा सिद्धि से उस मकान के अन्दर घुस गये जहाँ भैरवी चक्र का आयोजन चल रहा था।

वहाँ जाकर श्री प्रभुजी ने देखा कि बीच में जमीन के ऊपर एक नर-कपाल से बने खप्पर में एक बहुत बड़ा दीपक जल रहा है और उसके चारों ओर स्त्री-पुरुष गोल दायरे में बैठ कर मांस-मदिरा आदि का सेवन करते हुए तथा अमानुषीय हरकतें कर रहे हैं। श्रीप्रभु जी ने उस खप्पर के निकट जाकर अपनी योग शक्ति का प्रयोग किया, जिसके फलस्वरूप खप्पर सहित दीपक उठकर उनके हाथों में आ गया। सब लोग जहाँ के तहाँ स्तम्भित से रह गये। क्योंकि वाममार्ग में यह सिद्धान्त लागू होता है कि यदि दीपक अपने स्थान से हट जाये और जब तक मुद्रावस्थित स्त्री-पुरुष अपने स्थान पर स्तम्भित रह जाते हैं, किन्तु उस दीपक को कोई छेड़ने का साहस नहीं कर सकता।

प्रभुजी के इस अद्भुत चमत्कार को देख कर सभी वाममार्गी आश्चर्यचकित रह गये। उन्होंने श्री प्रभु चरणारविन्दों में अपने अपराध

के लिये बार-बार क्षमायाचना की। प्रभुजी ने उन्हें बुरी तरह फटकारा। बाद में उनके अनुनय-विनय पर भविष्य में कभी भी भैरवी चक्र न लगाने तथा लोगों को किसी प्रकार का कष्ट न देने की प्रतिज्ञा करवा कर खप्पर सहित दीपक को लौटाते हुए उनको क्षमा कर दिया। खप्पर के अपने नियत स्थान पर पहुँचते ही उन लोगों के मृत प्राय: शरीरों में हरकत होने लगी। सबने उठकर प्रभुजी को प्रणाम किया और अपने कृत्यों पर लज्जित होकर उनके सामने सिर झुकाये खड़े रहे।

कल्याणधन श्रीप्रभुजी ने उन सबको शास्त्रीय मर्यादा का पालन करते हुए सन्मार्ग पर चलने का उपदेश दिया और सबको आशीर्वाद देकर वहाँ से चले गये।

इस प्रकार प्राणीमात्र के परम हितैषी श्री प्रभुजी ने अपनी अहैतुकी कृपा से उन सबका कल्याण किया और भैरवी चक्र को तोड़कर लोगों को उनके आतंक से छुटकारा दिला दिया। वापस अपने आवास पर लौटकर उन्होंने जयराम को भी पवित्र योग-मार्ग का उपदेश दिया और अपने गन्तव्य की ओर प्रस्थान कर गये।

(क्रमश:)

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योग-योगेश्वर अनन्त श्री गुरुदेव जी द्वारा

सवाँई आने से पूर्व आनन्दकन्द श्री प्रभु जी ने कुछ दिन मथुरा में निवास किया, वहाँ एक योगाभ्यासी ब्रह्मचारी भी रहते थे। उनके हजारों शिष्य थे, जो कि हमेशा उनकी सेवा में लगे रहते थे। ब्रह्मचारी जी की ख्याति सुनकर लोग अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति के लिये दूर दूर से उनके पास आया करते थे। इस प्रकार उनके पास दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती थी। कल्याणधन श्री प्रभु जी उस ब्रह्मचारी को प्रवृत्ति मार्ग से हटाना चाहते थे। उन्होंने कृपा पूर्वक उसे दर्शन दिये और कहा तुम इस झमेले में व्यर्थ ही फंस रहे हो, तुम्हारा मार्ग निवृत्ति का है। तुम्हें एकान्त में रहते हुए अपना अभ्यास बढ़ाने के लिये प्रयत्न करना चाहिये।

ब्रह्मचारी ने कहा- प्रभो! ये लोग मेरे भक्त हैं, मुझसे बहुत स्नेह रखते हैं। मेरे बिना तो ये लोग रह ही नहीं सकते। इनको मैं कैसे छोड़ूँ? श्री प्रभुजी ने कहा- इनमें से कोई भी तुम्हारा अपना नहीं है। ये लोग भक्ति का दिखावा मात्र करते हैं परन्तु भक्त नहीं है। यदि तुम्हें विश्वास न हो तो परीक्षा करके देख लो। यह कहकर श्री प्रभु जी अन्तर्धान हो गये।

ब्रह्मचारी जी बहुत देर तक अपने मन में विचार करते रहे और अन्त में उन्हें एक उपाय सूझा। उन्होंने नगर से एक वैश्या को बुलाया और चुपके से उसे कुछ रुपये देकर कहा जब मैं शिष्य समुदाय के बीच में बैठा हूँगा तो तुम कुछ इस प्रकार की हरकत करना जिससे सभी लोग मुझसे घृणा करने लग जायें और मेरे विरोधी बन जायें।

वैश्या ने ऐसा ही किया। जब ब्रह्मचारी अपने भक्तों के बीच में बैठे हुये थे तो उपरोक्त वैश्या सामने आकर बोली- ''महात्मा जी! आप बनते तो सिद्ध महापुरुष हैं लेकिन काम आपके इतने घटिया हैं कि आपने मेरा पचास रुपये का उधार अब तक नहीं चुकाया मेहरबानी करके मेरे पैसे अभी दे दो नहीं तो मैं आपका सारा महात्मापन निकाल दूँगी।''

ब्रह्मचारी जी ने उसे चुप रहने का संकेत किया किन्तु वह अधिक जोर से बोलने लगी और ब्रह्मचारी पर घृणित से घृणित लाछन लगाने लगी। तब ब्रह्मचारी जी ने उसे पचास रुपये देकर विदा कर दिया।

इस घटना को देखकर सारा समुदाय दंग रह गया। सबने यही अनुमान लगाया कि ब्रह्मचारी जी वैश्यागामी हैं, अत: सभी नाक मुँह सिकोड़कर एक एक कर वहाँ से खिसकने लगे, देखते ही देखते सारा पंडाल खाली हो गया वहाँ कुल दो ही व्यक्ति रह गये जो कि ब्रह्मचारी को के अनन्य भक्त और सेवक थे।

अब ब्रह्मचारी को पूरा विश्वास हो गया कि ये सब लोग स्वार्थी है और भक्ति का दिखावा करते हैं। इन लोगों से तो अब छुटकारा हो ही गया है, अब मुझे ऐसा काम करना चाहिए कि नगरवासी सब लोग मुझसे घृणा करने लग जायें और यहाँ आकर मेरे भजन में बाधक न बनें। इस उद्देश्य से वह हाथ में शराब न बनें। इस उद्देश्य से वह हाथ में शराब की बोतल लेकर उसी वैश्या के साथ नगर की गलियों और बाजारों में घूमने लगा। वैश्या उस ब्रह्मचारी के गले में हाथ डाले हुई थी और दोनों बड़ी मस्ती के साथ आपस में बाते करते हुए शराबियों की तरह झूमते हुए जा रहे थे।

नगरवासी इस दृश्य को देखकर आश्चर्य चकित थे और अपनी अपनी मति के अनुसार यही अनुमान लगा रहे थे कि ब्रह्मचारी शराबी है और वैश्यागामी है। सभी लोग उन दोनों को तरह तरह के ताने सुनाते जा रहे थे। कोई कहता है।

यह वही ब्रह्मचारी है जो अपने को योगी बताकर सारे शहर को वेबकूफ बनाये हुए है। इसके दो हजार से अधिक शिष्य हैं।

कोई कहता जब गुरुओं के वे हाल हैं तो चेलों का तो ईश्वर ही मालिक है।

इस पर एक वृद्ध ने कहा- भाई किसी को दोष मत दो। यह सब कलियुग का प्रभाव है, यह महात्मा भी कलयुगी है।

स्त्रियाँ उन्हें देखकर मुँह सिकोड़ लेतीं और कई तो थूक कर मुँह फेर लेती थी। बच्चे तालियां बजा बजाकर उस ब्रह्मचारी की ओर संकेत करके आपस में एक-दूसरे को कह रहे थे।

देख लिया तुमने अपने गुरु का हाल? अब तो नहीं कहोगे कि- मेरे गुरु बड़े चमत्कारी हैं और पूर्ण सिद्ध हैं आज उनका असली चमत्कार सबने देख लिया है।

इस प्रकार के अपमान जनक व्यवहार का महात्मा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, वे मन ही प्रसन्न हो रहे थे और शराबी का अभिनय करते हुए उसी मस्ती के साथ भरे बाजार में आगे गुजरते जा रहे थे।

इतने में आनन्दकन्द श्री प्रभुजी भी अपने शिष्यों के साथ टहलते हुए सामने से निकले ब्रह्मचारी ने उन्हें झुककर प्रणाम किया और श्री प्रभु जी ने उसे आशीर्वाद दिया। यह देख उनके साथ चल रहे शिष्यों को बड़ी हैरानी हुई। वे अपने मन में सोचने लगे कि प्रभु

जी ने इस शराबी को आशीर्वाद क्यों दिया होगा, इसे तो दण्ड देना चाहिये था। पंडा नामक एक व्यक्ति से रहा नहीं गया। वह पूछ ही बैठा प्रभु जी यह शराबी तथा भ्रष्ट महात्मा आपको प्रणाम कर रहा है और आप भी इसे आशीर्वाद दे रहे हैं। यह रहस्य हमारी समझ में नहीं आया। हमें बड़ा आश्चर्य हो रहा है।

प्रभुजी ने मुस्कारते हुए कहा- बेटा! सायंकाल को तुम हमारे साथ उस ब्रह्मचारी के आश्रम में चलना। वहाँ सारी बात तुम्हारी समझ में आ जायेगी।

अपने कार्यक्रम के अनुसार श्री प्रभु जी पंडा को साथ लेकर ब्रह्मचारी को कुटिया में पहुँचे वहाँ जाकर देखा कि ब्रह्मचारी अपने ध्यान कक्ष में समाधिस्थ थे और उनका आसन जमीन से उठकर कमरे की छत्त के साथ लगा हुआ था। प्रभु जी ने पंडा से कहा बेटा! यह वही ब्रह्मचारी है जो शराब की बोलत हाथ में थामे वैश्या के साथ बाजार में घूम रहा था। अब तुम समझ हो गये होगे कि क्यों मैंने इसे आशीर्वाद दिया था?

पंडा हाथ जोड़कर अत्यन्त नम्रता से बोला प्रभो! मुझ मूढ़बुद्धि को क्षमा कीजिये मैंने अपनी स्थूल बुद्धि से यही अनुमान लगाया था कि यह ब्रह्मचारी भ्रष्ट है। मुझे पता नहीं था कि यह ऐसा पहुँचा हुआ महात्मा है।

पंडा को यह दृश्य दिखाकर श्री प्रभु जी उसके साथ चुपचाप अपने स्थान को लौट आये।

अगले दिन प्रात: श्री प्रभु जी अकेले ही ब्रह्मचारी के पास गये और पूछा- क्या बात है, आज तुम्हारे भक्त लोग नजर नहीं आ रहे हैं? ब्रह्मचारी ने उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया और अत्यन्त विनय पूर्वक बोला दीनबन्धों! आप ठीक ही कह रहे थे। वे सब लोग स्वार्थी थे। आपकी कृपा से मैंने युक्ति से काम लेकर उन सबसे पीछा छुड़ा लिया है।

श्री प्रभु जी ने उसे मीठी ताड़ना देते हुए कहा यह तो ठीक है पर तुम्हें महात्माओं के बान को बदनाम नहीं करना चाहिये। खैर क्या अब भी तुम्हारे पास कोई सेवक हैं?

ब्रह्मचारी बोला- दयानिधान! अब मेरे पास केवल दो व्यक्ति रह गये हैं। वे मेरे सच्चे भक्त हैं।

श्री प्रभुजी किसी बहाने वहाँ से उठे और ब्रह्मचारी के सेवकों कन्हैया और शंकर को एक ओर बुलाकर एकान्त में उनसे वार्तालाप करने लगे। श्री प्रभु जी बोले- भाई तुम लोग यहाँ रहकर अपना जीवन बरबाद क्यों कर रहे हो। तुम जानते ही हो कि ब्रह्मचारी वैश्यागामी है और शराबी है। ऐसे व्यक्ति से तुम कल्याण की क्या आशा रखते हो? शहर इसके नाम पर थूक रहा है और तुम अब भी इसके भक्त

बने हुए हो। इस पर कन्हैया बोला- कह तो आप ठीक ही रहे हैं, पर किया क्या जाये।

किन्तु शंकर अपने गुरु की निन्दा को सहन नहीं कर सका और रोषपूर्वक बोला महात्मा जी! हमारे गुरुदेव के चरित्र के बारे में ऐसी बातें कहने का आपका कोई अधिकार नहीं है। खबरदार! अब आपने उनकी निन्दा की तो ठीक नहीं होगा। आपको अतिथि समझकर क्षमा कर रहा हूँ। अब आपका हित इसौ में है कि आप चुपचाप यहाँ से चले जाओ।

इस पर कल्याणधन श्री प्रभुजी ने गद्‌गद् होकर उसे कंठ से लगा लिया और उसी उसी समय समाधि प्रदान कर दी।

तब श्री प्रभु जी ने ब्रह्मचारी को कहा तुम्हारे शिष्य शंकर को अधिकारी जानकर हमने समाधि दे दी है। कन्हैया में अभी कुछ कमी है। इसे भी तुम साधनायोग में लगाओ, कालान्तर में यह भी समाधि का अधिकारी बनकर कल्याण भाजन बन जायेगा।

श्री प्रभुजी ने ब्रह्मचारी को असंग रहने की आज्ञा दी और उसे अपना अमोघ आशीर्वाद प्रदान कर वहाँ से प्रस्थान कर गये।

श्री प्रभुजी की कृपा से वह ब्रह्मचारी बिल्कुल बीतराग बन गया और निर्बीज समाधि को प्राप्त हो गया। वह उस स्थान को छोड़कर चला गया और हिमालय की कन्दराओं में जाकर समाधिस्थ रहने लगा।

बैठी दिव्यात्मा का ध्यान करे अथवा ध्यान द्वारा शरीर संशोधन करे तो परम लाभ की प्राप्त होगी। रे मानव! तुम्हारे शरीर में कितने चक्र हैं, मस्तक में कितने प्रकार के अमृत भरे रसों का कुण्ड है जिसका पान करने पर तू अजर व अमर हो जाएगा। कितने प्रकार के ज्ञान-तन्तुओं के कुञ्ज हैं। जो आदि शक्ति महामाया कुण्डलिनी तुम्हारे ही शरीर में जन्म जन्मान्तरों से सोयी हुई पड़ी है। अपने पास इतनी सब कुछ अतुल सम्पदा होते हुए भी अभागा मानव अज्ञानवश कस्तूरी मृगवत् इस नश्वर जगत में भटक रहा है।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

बरहन गाँव में शुभागमन

जन-जन के कल्याणार्थ अवनिमंडल पर विचारण करते हुए आनन्दकन्द श्री प्रभु जी मथुरा से बरहन नामक गाँव में पहुँचे। यह गाँव आगरा जिले में पड़ता है और आगरा नगर के निकट है। जिस समय श्री प्रभुजी बरहन गाँव के समीप पहुँचे तो अचानक मूसलाधार वृष्टि आरम्भ हो गई। श्री प्रभुजी वर्षा में भीगते हुए बड़ी मस्ती के साथ आगे बढ़ते जा रहे थे। इतने में उन्हें सामने एक विशाल वटवृक्ष दिखाई दिया। उसके चारों ओर सुन्दर चबूतरा बना हुआ था। श्री प्रभुजी अपनी उसी मस्तानी चाल से वृक्ष की ओर बढ़े और वहाँ पहुँचकर वृक्ष के नीचे ठहर गये तथा वर्षा रुकने की प्रतीक्षा करने लगे। उस समय उनकी शोभा देखने योग्य थी। उनका मुखमण्डल दिव्य तेज से दैदीप्यमान था, कमर तक लम्बी-लम्बी जटाओं से जल धारायें इस प्रकार धरती पर गिर रही थीं कि ऐसा मालूम पड़ता था कि शंकर जी की जटाओं से गंगा की धारायें पृथ्वी पर गिर रही हों। वे अपने गौरवर्ण शरीर पर वस्त्र के नाम पर केवल एक कौपीन धारण किये हुए थे, वक्षस्थल शुभ्र यज्ञोपवीत से सुशोभित था। उनके एक हाथ में लम्बा चिमटा तथा दूसरे में कमण्डलु था। वे बगल में मृगछाला दाबे हुए थे, आम लोगों की अपेक्षा कद में भी बहुत ऊँचे थे तथा शरीर के सभी अंग पूरी तरह सुगठित थे। उनके रोमकूपों से अलौकिक तेज की धारायें बह रही थीं। यह सब मिलकर सौन्दर्य के देवता कामदेव का मद चूर्ण करने तथा भक्तजनों को आह्लादित करने के लिये पर्याप्त था।

ज्योंही वर्षा बन्द हुई, श्री प्रभु जी गाँव की ओर बढ़ने लगे तो उन्हें सामने से एक व्यक्ति आता हुआ नजर आया। वह गाँव का एक प्रतिष्ठित तथा सम्पन्न व्यक्ति था। ग्रामवासी उसका नाम सुनकर भय से थर-थर कांपा करते थे और उसे ठाकुर साहब कहकर सम्बोधित किया करते थे। पास में पहुँचकर श्री प्रभुजी ने उससे कहा- अरे भाई! हम इसी गाँव में विश्राम करना चाहते हैं।

वह व्यक्ति बड़ा क्रूर तथा अहंकारी था। मदिरापान तथा मांस-भक्षण उसका नित्य प्रति का काम था। वह ग्रामवासियों के डरा धमकाकर अपने अधिकार में रखने की चेष्टा किया करता था। जो कोई उसकी बात न मानता उसकी वह बेंत से पिटाई कर देता था। सरल स्वभाव के व्यक्तियों तथा सन्त महात्माओं का अनादर करना उसका स्वभाव बन चुका था। उसके हाथ में बेंत हमेशा रहा करती थी। उस समय वह अपने कंधे पर बन्दूक लटकायें हुए था। प्रभुजी की बात सुनकर उसने उन्हें सिर से पांव तक घूरकर देखा और फिर नाक-मुँह सिकोड़कर बड़े अपमान जनक शब्दों में बोला- हमारे पास तुम जैसे मुसटण्डों के लिये कोई जगह नहीं है, जाओ रास्ता नापो। इन शब्दों का श्री प्रभुजी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा वे अपनी सहज गम्भीरता से बोले—

'भाई! रास्ता तो हमने नापना ही नापना है। हम सोच रहे थे कि समय अधिक हो गया है साथ ही मौसम भी ठीक नहीं है, अत: आज की रात यहीं विश्राम कर लिया जाये। इसी अभिप्राय से तुमसे ठिकाना पूछा था। अच्छा यह तो बताओ कि इस गाँव में कोई मन्दिर भी है?''

इस पर ठाकुरसाहब बोले- अरे मुण्डने! मन्दिर-वन्दिर यहाँ कोई नहीं है। हम लोगों ने मन्दिर से लेना भी क्या है? अपने घर पर तो तुम्हें कोई ठहरायेगा नहीं। हाँ! इस गाँव में ठाकुरदास नाम का एक आदमी है। उसके यहाँ मुसटण्डे आते रहते हैं। उसके पास काम तो कुछ है नहीं, घर में बच्चों को खिलाने को दो दाने नहीं होते और मुसटण्डों के पीछे फिरता रहता है। तुम चाहो तो उसके यहाँ चले जाओ।

श्री प्रभुजी ने कहा ठीक है हम वहीं जाते हैं। यह कहकर वे गाँव की ओर चल पड़े और लोगों से पूछते-पूछते ठाकुरदास के घर पर जा पहुँचे। ठाकुरदास की आर्थिक स्थिति बड़ी दयनीय थी। उसके पास रहने को ढंग का मकान भी नहीं था। कुल एक कमरा था और उसके आगे बरामदा था। वह परिवार सहित उसी एक कमरे में गुजारा करता था। उसकी आर्थिक दशा दयानीय थी ही यहाँ तक कि- आय के समुचित साधन न होने के कारण वह कई बार अपने बच्चों के लिये भरपेट भोजन तक नहीं जुटा पाता था। आज भी उसकी वही स्थिति बनी हुई थी। मार्ग में उस तथाकथित ठाकुरसाहब ने अतिथि परायण ठाकुरदास को परेशानी में डालने की भावना से श्री प्रभुजी को उसके यहाँ जाने की सलाह दी थी। अन्तर्यामी श्री प्रभुजी सब कुछ जानते हुए भी अनजान बनकर लोगों से पूछ-पूछकर ठाकुरदास के घर पहुँचे और बाहर खड़े होकर ठाकुरदास को पुकारा, ठाकुरदास ने बाहर निकलकर उन्हें प्रणाम किया और बड़े आदर पूर्वक उन्हें घर ले गया।

जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।

तुलसीदास जी की इस उक्ति के अनुसार ठाकुरदास ने श्री प्रभुजी को एक योगिराज के रूप में ही देखा। वह उनकी दिव्य तेजोमय आकृति को ही देखकर अपने भाग्य को सराहता हुआ मन ही मन बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने बरामदे में एक चारपाई बिछाकर प्रभुजी को उस पर विराजमान कर दिया। उसकी पत्नी इस बात से बड़ी चिन्तित थी कि उनका आतिथ्य किस प्रकार किया जाये, क्योंकि घी दूध की तो बात ही दूर रही आज तो घर पर आटा तक नहीं था। ठाकुरदास अपनी पत्नी से विचार विमर्श करके ईश्वर को स्मरण करता हुआ बड़े उत्साह पूर्वक घर से बाहर निकला और थोड़ी ही देर में गुजारे लायक आटा-दाल तथा घी आदि लेकर आ गया। उसकी पत्नी ने बड़े प्रेम से भोजन बनाकर प्रभुजी के अर्पण किया। भोजनोपरान्त कुछ समय तक श्री प्रभुजी ठाकुरदास से बातचीत करते रहे और फिर उसे विश्राम करने की आज्ञा देकर स्वयं भी विश्राम करने लगे।

इधर गाँव के तानाशाह ठाकुरसाहब का इकलौता पुत्र गत दिवस उसी समय एकाएक गम्भीर रूप से बीमार हो गया जिस समय ठाकुरसाहब ने श्री प्रभुजी को अपमानित किया था। उसने गाँव के वैद्य को बुलाकर उपचार करवाया तथा गाँव के वैद्य को बुलाकर उपचार करवाया तथा शहर से भी औषधियाँ मंगवाई गई किन्तु रोगी की दशा में तनिक भी सुधार नहीं हुआ। तब किसी ने उसे सलाह देते हुए कहा- ठाकुरदास के यहाँ सन्त-महात्मा लोग आते रहते हैं। उनके सम्पर्क में रहने से वह जड़ी-बूटियों का इलाज अवश्य जानता होगा अत: आप उसके पास चले जाओ। उसके पास कोई न कोई दवा अवश्य मिल जायेगी।

यह सुनकर ठाकुरसाहब अपने उसी ठकुराई ठाठबाट से ठाकुरदास के घर पहुँचा। उसे देखकर ठाकुरदास घबरा गया। वह भयभीत होकर हाथ जोड़कर उसके सामने खड़ा हो गया और बोला- ठाकुरसाहब! आपने यहाँ आने का कैसे कष्ट किया? कहिये मैं आपकी क्या सेवा कर करूँ? कहीं ऐसा तो नहीं है कि मुझसे कोई भूल हो गयी हो, जिस कारण आपको यहाँ आने का कष्ट उठाना पड़ा हो!

इस पर ठाकुरसाहब बोला- अरे ठाकुरदास! मेरे लड़के के पेट में जोर का दर्द है। हम उसके लिये दवाई लेने तेरे पास आये हैं। तेरे पास जो भी दवा हो जल्दी से दे दो, पर इस बात का ध्यान रहे कि- बच्चे को दवाई से लाभ हो जाना चाहिये।

इस पर ठाकुरदास गिड़गिड़ाता हुआ बोला महाराज! मेरे पास कोई दवा नहीं है, मैं कहाँ से दूँ। आपको किसी ने गलत बता दिया है।

ठाकुरसाहब फिरउसी प्रकार रौब से बोला- अरे ठाकुरदास! तू हमें मत बना, हमारे साथ भी मक्कारी कर रहा है और दवा होते हुए भी देने से मना करता है। जल्दी से दवा दे दें नहीं तो तुझे हमारा पता ही है।

श्री प्रभुजी ने उनकी बातें सुन लीं और बाहर झाँककर देखा तो उसे पहचान लिया कि यह वही व्यक्ति है जो उन्हें कल वटवृक्ष के पास मिला था। उन्होंने कहा ठाकुरदास! यदि तेरे पास दवा नहीं है तो घर से कोई चीज उठाकर इसे दे दे। उसने कहा महाराज! घर में कुछ भी नहीं है, क्या दूँ? श्री प्रभुजी बोले अरे! कूछ तो होगा ही, जो कुछ है वही दे दे।

ठाकुरदास कहने लगा महाराज जी! यहाँ तो चूहे की मींगन पड़ी हैं, उसके अलावा कुछ भी नहीं है। यदि मैंने यह चीज इसे दे दी तो यह व्यक्ति मुझे मार डालेगा, यह बड़ा खूँखार है।

श्री प्रभु जी बोले- अरे तू हमारी बात मानकर चूहे की मींगन ही दे दे। इसी से ही बच्चा ठीक हो जायेगा।

ठाकुरसाहब ने उनकी बात सुन ली थी। ज्योंही ठाकुरदास अन्दर से चूहे की मींगन लाकर उसे देने लगा तो वह क्रोध से उसे घूरता हुआ बोला ला, चूहे की मींगन दे रहा है ना! ले आ। बच्चे को यही खिलाऊँगा और कोई दवा नहीं दूँगा। यदि बच्चे को आराम न हुआ तो तेरी भी और तेरे मुंडने की भी खैर नहीं। ऐसा कहकर वह बड़ी तेजी से अपने घर की ओर चला गया। उसके चले जाने के बाद ठाकुरदास ने प्रभु जी से निवेदन किया। महाराज जी यह बहुत खतरनाक आदमी है। यदि उसका बच्चा ठीक न हुआ तो वह आकर हम दोनों का पिटाई कर जायेगा। अत: बचने का कोई उपाय सोचना चाहिये।

परम कौतुका श्री प्रभुजी मुस्कराते हुए बोले चिन्ता मत कर ठाकुरदास। तेरी दी हुई दवा से उसके पुत्र का पेट दर्द कुछ घण्टों के लिये बिल्कुल ठीक हो जायेगा। शाम के समय पुन: वैसा ही दर्द उठेगा, तब वह दुबारा तुम्हारे पाह आयेगा। तब तुम उसे वही पहले वाली दवा अर्थात् चूहे की मींगन दे देना। किन्तु उससे पहले पैसे रखवा लेना।

ठाकुरदास बोला महाराज जी चूहे की मींगन तो मैं उसे दे दूँगा, किन्तु उससे पैसे माँगना मेरे वश की बात नहीं। ऐसा करने पर तो वह मुझे खा जायेगा।

श्री प्रभुजी ने कहा अच्छा जब वह आयेगा तब देख लेंगे।

शाम को सूर्यास्त होने को था, इतने में ही ठाकुर हाँफता हुआ वहाँ आ पहुँचा और आते ही बड़े रोब से बोला ठाकुरदास बच्चे के लिये जल्दी से दवा दे दे, तेरी दवा से उसे कुछ समय आराम रहा था।

प्रभुजी ने उसे सुनाते हुए कहा। ठाकुरदास पहले इससे पैसे मांग ले, दवा फिर देना सुबह के भी पैसे मांग ले। ठाकुरदास बोला पैसे मांगना तो मेरे वश की बात नहीं है। इस पर श्री प्रभुजी बोले- अच्छा तू पैसे मांगने मे डर रहा है तो मैं ही इसे पैसों के लिये कह दूँ, यह कहकर प्रभुजी बोले श्रीमान ठाकुरसाहब पहले दवा के पैसे रख दो, सुबह के भी और अब के भी, तभी दवा मिलेगी।

ठाकुर को यह बात अखरी तो बहुत, किन्तु ''मरता क्या न करता'' वाली बात थी। उसने बच्चे का इलाज जो कराना था। अत: शान्तिपूर्वक बोला पैसे मैं अभी भेज रहा हूँ, जल्दी से दवा दे दो, बच्चे की हालत बहुत खराब है। प्रभुजी अपने भक्त ठाकुरदास को सम्बोधित करते हुये बोले अरे ठाकुरदास। इस बेचारे के पास पैसे नहीं है, चल इसे उधार ही दवा दे दे, अन्दर से चूहे की मींगन लाकर इसे दे दे। फिर वे ठाकुर से बोले ठाकुर साहब दवाई तो तुम ले जाओ, लेकिन पैसे सुबह तक पहुँच जाने चाहिये। बच्चे को पूरा फायदा तभी होगा जब दवा का मूल्य हमारे पास पहुँच जायेगा। कुल दो रुपये बनते हैं। भेज देना। ठाकुर दवाई लेकर चुपचाप वहाँ से चला गया। अगले दिन प्रात:काल ही उसने किसी आदमी को तीन रुपये देकर ठाकुरदास के यहाँ भेज दिया। वह आदमी आकर ठाकुरदास से बोला- साहब जी ने यह तीन रुपये भेजे हैं, दो रुपये तुम्हारे कल के हैं, एक रुपये की दवाई और दे दो।

श्री प्रभुजी ने उस व्यक्ति से हँसते हुए कहा- क्यों भाई! तुम्हारे साहब जी आज खुद नहीं आये क्या बात है? ठीक तो है न? बच्चे के लिये ले जा तू भी चूहे की मींगन और अपने साहब जी से कह देना कि- हमारे पैसे आ चुके इसलिये अब तेरा बच्चा बिल्कुल ठीक हो जायेगा। अब तुझे दवा के लिये कहीं आना-जाना नहीं पड़ेगा। यह कहकर उन्होंने चूहे की मींगन दिलवाकर उसे विदा कर दिया। तब वे गम्भीर होकर ठाकुरदास से बोले- ठाकुरदास! हम तुमसे बहुत खुश हैं। अत: तुम्हें आशीर्वाद देते हैं कि आज से इस घर में गरीबी का वास नहीं रहेगा, इस घर में वैद्यक का अच्छा काम चलेगा, तुम्हारे हाथ से दी हुई मिट्टी भी दवा का काम करेगी और तुम्हारा वंश वैद्यक के काम में खूब कमायेगा।

ठाकुरसाहब द्वारा भेजे हुए पैसों से कुछ दिन अपना काम लेना। तब तक तुम्हारा व्यापार अच्छा चलने लग जायेगा। कल से ही तेरे पास रोगी आने शुरू हो जायेंगे। हमें तो अब चलना चाहिये। हम रात्रि विश्राम के लिये यहाँ आये थे, किन्तु तुम्हारे प्रेम को देखकर हम दो दिन यहाँ रुक गये। अच्छा आशीर्वाद, ऐसा कहकर प्रभुजी अपना चिमटा और कमण्डलु उठाकर खड़े हो गये।

ठाकुरदास, उसकी पत्नी तथा बच्चों ने उनसे रुकने का बड़ा आग्रह किया किन्तु वे रुके नहीं और सवांई की ओर प्रस्थान कर गये। कल्याणधन श्री प्रभुजी की अहैतुकी कृपा से ठाकुरदास जो कि रोगों का नाम तक नहीं जानता था, उसी दिन से वैद्य बन गया और कुछ ही दिन बाद उसके घर में वैद्यगिरी का बहुत अच्छा काम चलने लग गया। जिस से उसकी सारी निर्धनता दूर हो गई। उसके बाद उसका पुत्र बाबूराम इलाके का प्रसिद्ध वैद्य बन गया और उसने इलाके में खूब नाम कमाया। यह श्री प्रभुजी की ''कर्तुमकर्तु-मन्यथा कर्तुम्'' की सामर्थ्य का ही परिणाम था।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

मनोजविता का दान

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सन् १९४२ में मैं इधर-उधर भ्रमण करता हुआ सवाँई गाँव में आ पहुँचा। यहाँ आने पर बहुत प्राचीन काल से श्री प्रभुजी की शरणापन्न होने वाले पुराने सत्संगी गुरु भाईयों के दर्शन हुये और इन लोगों से श्री आनन्दकन्द प्रभुजी के चरण शरण हो जाने के बाद जो विविध प्रकार की अनुभूतियाँ उन्हें होती रहीं एवं जो घटनायें घटित होती रहीं इनके वर्णन इन के मुख से सुनने को मिला। मन में बहुत ही आश्चर्य था कि जो सिद्धियों योगियों को बहुत ही कठिन तपश्चर्या के बाद उपलब्ध हो पाती हैं वे उसी प्रकार की सभी ताकतें गाँव में निवास करने वाले अनपढ़ साधारण वेशभूषा धारी कृषि से अपना पालन पोषण करने वाले व्यक्तियों को सहज में कैसे उपलब्ध हो गई। उनकी अद्‌भुत बातें सुन कर के मेरे मन में बड़ी भारी आश्चर्य होता रहा और जैसे जैसे प्रभु कृपा के रहस्यों को मैं इन से सुनता जाता था त्यों-त्यों मेरी उत्कण्ठा इस समाधान की ओर आगे बढ़ती जाती थी कि बिना योग साधना के कैसे यह भारी अलौकिक प्रभु कृपा के अधिकारी बन गये।

सवाँई गाँव में निवास करने वाले हमारे पुराने सत्संगी गुरु भाईयों के अन्दर एक क्षत्रिय परिवार पर श्री प्रभुजी की जो अलौकिक कृपायें हुयीं उनका संग्रह मैंने 'सवांई के चमत्कारिक चरित्र' नामक पुस्तक में करने का प्रयत्न किया है। किन्तु उन सभी का इस छोटी सी पुस्तिका में पूर्ण रूप से समावेशित नहीं कर पाया हूँ। आज अकस्मात् बैठे-बैठे एक सत्संगी भाई ठा. भगवान सिंह की एक अलौकिक घटना याद आ गई जो उन्होंने मुझे अपने मुख से उन्होंने सुनायी थी।

भगवान सिंह ने मुझे बतलाया कि उनको जो स्वाभाविक चलते फिरते योगानूभूतियें होती रहती हैं वे सब अनुभूतियें इस प्रकार की थीं जो अनुभूतियें सम्प्रज्ञात योग की पराकाष्ठा को पहुँचे हुये ज्ञानेन्द्रिय मन और बुद्धि का साक्षात्कार करने वाले निरन्तर स्वाध्यायशील व्यक्ति के अन्दर हुआ करती हैं। ठा. भगवान सिंह विशेष रूप से नियमानुवर्तिता के सिद्धान्तानुसार योगाभ्यासी एवं ध्यान योग परायण नहीं थे। किन्तु उनकी श्रद्धा का स्थान बहुत ही सराहनीय था। वे लोग श्री आनन्दकन्द प्रभुजी को साधारण दृष्टि से नहीं देखते थे। प्रत्युत उनकी अपनी भाषा के अन्दर उनको वे लोग परम पिता परमेश्वर ही जानते थे। ठा. भगवान सिंह ने मुझे बतलाया कि उनको खाते-पीते, उठते-बैठते, सोते जागते क्षण-क्षण में श्री प्रभुजी के दर्शन होते रहते हैं। उसके साथ ही कभी सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा के रूप में एवं पालन कर्त्ता विष्णु के रूप में एवं संहार कर्त्ता भगवान शिव के रूप में श्री प्रभुजी को देखते रहा करते थे। सृष्टि के सृजन पालन, पोषण एवं भगवान सदाशिव के रुद्ररूप से संहारण रूप को भी इन्होंने देखा। किन्तु इन सब में विशेषता की बात यह थी कि यह सब का सब इस प्रकार से ध्यानानुभव का होना उनके जीवन में स्वाभाविक था। अभ्यास करने की इनको आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी। और इस स्वाभाविक अभ्यास से उनका जीवन चमत्कृतियों से परिपूर्ण बना रहा। यह बात एक शास्त्रीय सिद्धान्त की भी है कि जिन लोगों को इस प्रकार की ध्यान स्थितियें प्राप्त हो जाती हैं और अन्तर्जगत में प्रवेश कर जाते हैं वे लोग चाहे अपने अभ्यास से इन स्थितियों का सम्पादन करें अथवा पूर्ण सद्‌गुरु की कृपा से इन सिद्धियों के दृष्टा बनें। श्री आनन्दकन्द प्रभुजी अपने मुखारविन्द से बतलाया करते थे कि अन्तर्जगत में प्रवेश करने वाला व्यक्ति सहज में ही कुछ शक्तियों को प्राप्त कर लेता है। ऐसा साधक—

'यं यं चिन्तयते- कामं
तं तं प्राप्यनोति निश्चितम्।'

ठा. भगवान सिंह के जीवन के अन्दर यह घटना स्वाभाविक रूप से घटित हुयी। एक बार उन्होंने मुझे बतलाया कि वे श्री आनन्दकन्द प्रभुजी के चरणारविन्द में विभोर हुये ध्यानाभ्यास में बैठे रहे। समय को भूल गये उनको किसी बहुत ही विशेष कार्य के लिये कहीं पर जाना था। जिस रेलवे स्टेशन पर पहुँच कर गाड़ी में सवार होना था वह स्टेशन वहीं से लगभग १० मील को दूरी पर था और जिस गाड़ी में सवार होना था उसे अपने समय के अनुसार छूटने में केवल मात्र ५ मिनट ही बाकी थे। कोई भी साधन ऐसा नहीं था जिससे गाड़ी को पकड़ा जा सके। भगवान सिंह ने सोच लिया यह काम तो अब बिगड़ ही गया। कोई ऐसा उपाय ही नहीं कि मैं उस नगर में ठीक समय पर पहुँच सकूँ। मन में बड़ा पश्चाताप हो रहा था किन्तु ध्यान का नशा सारे शरीर में छाया हुआ था। समय आया—

'यं यं चिन्तयते कामं
तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।'

की उक्ति चरितार्थ होती हुयी दिखलायी दी। भगवान सिंह की उन्मनी अवस्था तो थी ही श्री प्रभुजी सामने प्रकट हुये और कहा बेटा तू चिन्ता क्यों करता है तू चल तो सही। तुझे गाड़ी मिल जायेगी।

और तेरा काम भी सिद्ध हो जायेगा। भगवानसिंह ने मुझे बतलाया कि—

श्री प्रभुजी की आज्ञा को प्राप्त करते ही वे चल पड़े। बहुत ही आश्चर्य की बात यह थी कि भगवानसिंह जो कदम उठा कर आगे को रखते थे वह बिल्कुल साक्षात् देखते थे कि उनका वह कदम २ या ३ मील की दूरी पर पड़ा है। इस घटना को देखते हुये भगवानसिंह अपने लक्ष्यीभूत रेलवे स्टेशन पर पहुँच गये। वहाँ स्टेशन पर जाकर देखा कि जिस गाड़ी में उन्हें सवार होना था उस के आने में ज्यों के त्यों पांच मिनट अवशेष हैं। भगवान सिंह उस गाड़ी में सवार हो गये और जिस काम के लिये वह जा रहे थे वह कार्य भी उनका पूर्ण रूप से सिद्ध हो गया। शास्त्रीय सिद्धान्त के अनुसार जो व्यक्ति अस्मितानुगत योग का विद्यार्थी बन जाता है वह इस शक्ति का अधिकारी हुआ करता है। भगवान पतञ्जलिदेव अपने मुखारविन्द से बतलाते हैं कि सम्प्रज्ञात समाधि की पराकाष्ठा पर पहुँचने वाले व्यक्ति को इस प्रकार की शक्ति प्राप्त हुआ करती है। यथा—

ततो मनोजवित्वं विकरणभाव: प्रधान-जयश्च।

अर्थात ऐसा योगाभ्यासी योगी जब अपने अभ्यास को निरन्तर करता चला जाता है तब वह बिना इन्द्रियों के गोलकों के देखता व सुनता है एवं जहां जाना चाहता है वहाँ मन के वेग से जाता है और प्रकृति पर पूर्ण हुकूमत करता है। भगवानसिंह के जीवन के अन्दर यह घटना स्वत: घटित हुई। और—

'यं यं चिन्तयते कामं

तं तं प्राप्नोति निश्तिम्।'

की उक्ति को बिल्कुल चरितार्थ कर दिखलाया। यह सभी घटनायें जो 'योगेश्वर चरित्र माला' के रूप में बराबर प्रकाशित होती रहती हैं केवल मात्र इसलिये लिखी जाती हैं कि जिज्ञासु साधक इन सबको पढ़ कर अपने को योगानुगामी बना सकें।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

अमृतसर की कुछ यथार्थ घटनाएँ

श्री आनन्दकन्द प्रभुजी अमृतसर में भाई के कटरे में निवास करते थे। उस समय लोगों का वहाँ पर स्वाभाविक यातायात बना रहता था। सत्संग के अभिलाषी स्त्री, पुरुष स्वभाव से ही श्री आनन्दकन्द प्रभुजी की अनुपम कृपायें प्राप्त करने के लिए उनके चरणारविन्द के अनुरागी थे। अपने आत्मिक उत्कर्ष के लिए वे सभी लोग तन-मन धन से श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में समर्पित रहते थे। किन्तु क्रोधी अभिमानी एवं असहिष्णु व्यक्तियों को यह सब कुछ सहन नहीं होता था। मुण्डे-मुण्डे मतिर्भिन्ना के नियमानुसार इन सब बातों को प्रपंच एवं पाखण्ड की दृष्टि से देखा करते थे और यह चेष्टा करते-रहते थे कि किसी भी प्रकार हम लोग उनके सत्संग में बाधायें डाल सके। एवं श्री आनन्दकन्द प्रभुजी का यह योगिक प्रसार एवं प्रचार किसी प्रकार से बिल्कुल निर्मूल हो जावे। एक बार एक घटना इसी प्रकार घटित हुई। अमृतसर में दुर्ग्याना नामक एक तीर्थ स्थान है जहाँ भगवती दुर्गा अर्थात् शीतला का पुराना मन्दिर है और बिल्कुल उसके सामने ही एक बहुत बड़े विशाल तालाब में भगवान श्रीलक्ष्मीनारायण का मन्दिर भी बन चुका है। जिसका निर्माण सिक्खों के गुरुद्वारे जैसे स्वर्ण मन्दिर के समान ही दूसरा स्वर्ण मन्दिर बनाने के उद्देश्य से किया गया है मन्दिर बहुत ही सुन्दर एवं आकर्षक है। श्री लक्ष्मीनारायण जी के इस आकर्षक है। श्री लक्ष्मीनारायण जी के इस मन्दिर के सामने थोड़ी ही दूर पर एक मन्दिर श्री भैरवनाथ जी का है, जिसमें अधिकांश में श्री भैरवजी के उपासक साधु महात्मा समय-समय पर इकट्ठे होते रहते हैं। इन साधुओं में कई एक साधु अच्छी करनी वाले भी होते हैं जिन्होंने अपनी विशेष-विशेष तपश्चर्याओं के साथ अन्तर्जगत में प्रवेश पाकर के विशेष-विशेष प्रकार की सिद्धियें उपलब्ध की हुई होती हैं।

इसी समुदाय में वहाँ पर उसी श्री भैरवनाथ जी के मन्दिर में एक महात्मा इस प्रकार के आये जिन्होंने अपनी घोरतम तपश्चर्या के प्रभाव से श्री भैरवी की कृपाओं को उपलब्ध किया था। यह महात्मा प्रख्याति प्राप्त थे। सभी लोग इनको भैरव सिद्ध महात्मा मानते थे। इनके सामने जो भक्त समुदाय आता रहता था वह समय-समय पर अपनी मनोकामनाओं को प्राप्त कर कृतकृत्य हुआ करता था। इनकी ख्याती को सुन करके श्री आनन्दकन्द प्रभुजी के चरणारविन्द में ईर्ष्या रखने वाले लोग इन महात्मा के चरणों में उपस्थित हुए और इधर-उधर की बहुत सी बातें करने के बाद उन लोगों ने महात्मा से निवेदन किया कि यहाँ एक ब्राह्मण भाई के कटले के अन्तर्गत भाई की गली में निवास करते हैं और वह अपने आपको बहुत ही बड़ा योगेश्वर योगीराज मानते हैं। बल्कि उनके शिष्य लोग तो उनको परब्रह्मपरमात्मा ही कहते हैं। बहुत ही प्रपंची आदमी है किन्तु बड़े ही आश्चर्य की बात यह है कि वहाँ पर रात और दिन बे इन्तहा भीड़ लगी रहती है। पता नहीं वह कोई जादू जानते हैं या कोई जंत्र-मंत्र करते हैं किन्तु भीड़ का तांता उनके पास से कभी भी नहीं हटता। वैसे हम लोग सभी उनको जानते हैं यहीं वह जन्में हैं, हम लोगों के साथ खूब खेले कूदे हैं पले-पोषे हैं। बहुत ही साधारण घर में उनका जन्म हुआ है किन्तु इतना ठीक है कि कुछ समय के लिए यह इधर-उधर बंगाल आसाम आदि घूम आये हैं बस इतने दिन घूमने फिरने से ही पता नहीं उन्होंने क्या जादू सीख लिया है कि अमृतसर में लौटते ही वह परम पूर्ण योगेश्वर एवं साक्षात् परमात्मा ही दिखलाई दिए। किसी की बात ही नहीं सुनते बस केवल अपने चेले चेलियों से बात करते रहते हैं। हमारे शहर में इतना बड़ा प्रपंच है, यह बड़े अन्याय की वात है। हम लोगों में तो कोई सामर्थ्य है नहीं जो कुछ कह सके या कर सके किन्तु आप जैसे योगीराज ही इस पाखण्ड को हटा सकते हैं और इतने हजारों भूले-भटके जीवों का भला कर सकते हैं। यदि आप उनको नीचा दिखला दें तो उनके पास जाने वाले सभी स्त्री पुरुष आपकी शक्ति को जान जायेंगे एवं आपके चरणों के पुजारी हो जावेगे। उनका भी उसमें भला ही है कि वह कम से कम यह तो जान ही जायेंगे कि योग किसे कहते हैं एवं महात्माओं का क्या धर्म होता है। हम आप की इस अनोखी कृपा को पाकर सदा सर्वदा के लिए आपके आभारी रहेंगे ही रहेंगे। शहर के लोगों की इस प्रकार की बातों को सुन करके महात्मा के मन में जोश भर आया एवं लालच का समुद्र भी लहरें लेकर उमड़ने लगा। महात्मा जी अपनी चरण पादुकाओं को पहनकर के बड़े अहंकार एवं महाक्रोध के साथ बोल उठा कि चलो हम आज ही उस कलयुगी परमात्मा का भण्डाफोड़कर आयेंगे, आज वह जरूर जान जावेगा कि योग किसे कहते हैं। महात्मा आगे-आगे चलने लगे और उनके पीछे ईर्ष्यालु लोगों का जनसमुदाय भी बड़े उल्लास के साथ उमंग तरंगों में भरकर चलने लगा जिनमें से अधिक ब्राह्मण लोग थे। जो-जो श्री प्रभुजी से कोटुम्बिक सम्बन्ध रखने वाले थे धीरे-धीरे वे सभी लोग भाई के कटरे में जहाँ श्री आनन्दकन्द प्रभुजी एक ऊपर के चौबारे में ठहरे हुए

थे पहुँच गये। भैरव सिद्ध महात्मा ने श्रीप्रभुजी के सामने पहुँचते ही घोर अभिमान एवं अत्यन्त क्रोध भरे शब्दों में कहा कि क्यों रे ब्राह्मण! तूने यह क्या प्रपंच फैलाया है। इन हजारों नर-नारियों को क्यों बहका रखा है कुछ दिखला या देख। आज हम तेरी सिद्धाई को देखने आए हैं और यह भी दिखाने आए हैं कि हमारे जैसों के यहाँ रहते हुए तू यह प्रपंच नहीं फैला सकेगा। श्री आनन्दकन्द प्रभुजी ने इस महात्मा के घोर अभिमान एवं क्रोध भरे शब्दों को सुन कर के एक बड़ा ही अच्छा आसन बिछवाया एवं अत्यन्त सु मधुर शब्दों में कहा आइए महात्मन! आप बैठिए। महात्मा तो आप ही है हम तो एक साधारण ब्राह्मण हैं। हाँ कुछ सत्संग चलता है यह भी आप जैसे महात्माओं का फल है। श्री प्रभुजी के ऐसे विनम्र शब्दों को सुनकर भी उस महात्मा का अभिमान और क्रोध और अधिक सीमा पर पहुँच गया वह गाली गलौज पर उतारू हो गया। श्री प्रभुजी अपने मन के अन्दर यही विचार कर रहे थे कि जब कोई इसकी शक्ति यहाँ चलेगी ही नहीं तो यह उछल कूद कर यहाँ से अपने आप चला जावेगा। किन्तु उस समय हमारे आदरणीय भाई श्री गोपालानन्द जी ने अरे नीचे महात्मा तू अपनी जवान को क्यों बन्द नहीं करता है। श्री ब्र. गौपालनन्दजी के पास एक अष्ट वर्षीया छोटी सी बालिका बैठी हुई थीं, उसकी ओर हाथ का संकेत करके कहा अरे नीच तू बकता ही जा रहा है, उन सर्वशक्तिमान को तू क्या देखेगा और क्या दिखलायेगा। इस छोटी सी बालिका की ओर देख-यहीं तुझे सब कुछ दिखला देगी। श्री ब्रह्मचारी जी के जोश भरे इन शब्दों को सुनकर उस महात्मा ने उस कन्या की ओर देखा तो उसको वह कन्या स्वयं साक्षात् भगवती दुर्गा दिखलाई दी और श्री प्रभुजी की ओर दृष्टि डालकर देखा तो उनका तेज अखण्ड मण्डलाकार सर्वत्रव्याप्त देखा। भगवती दुर्गा की प्रभुजी की बायीं ओर एक दिव्य सिंहासन पर अपने अखण्ड तेज को धारण किये बैठी थी। एवं भगवती की गोद में उनका बच्चा भैरव जिसको उसे महात्मा ने बड़ी तपश्चर्या के साथ सिद्ध किया था आकर बैठ गया। भगवती ने भैरव को आज्ञा दी कि हे बेटा भैरव यह महात्मा बहुत ही दुष्ट है जो उन सर्वशक्तिमान का अपमान करने पर उतारू हुआ है इसलिए तू इसी समय इस महात्मा को और इसके अनुयायियों को धोर दण्ड दे दे और नीचा दिखा दे। जगदम्बा भगवती दुर्गा के इस प्रकार आदेश देने पर उसी महात्मा का सिद्ध किया हुआ भैरव उसी महात्मा का त्रिशूल लेकर के तत्काल ही उस पर घात करने के लिए उतारु हो गया किन्तु आनन्दकन्द श्री प्रभुजी ने हाथ का संकेत कर के भैरव को रोक दिया कि नहीं इसका धात मत करो किन्तु आज से तुम इसका साथ नहीं देना। श्री आनन्दकन्द प्रभुजी के शुभ संकेत पा भैरव ने महात्मा को प्राण दण्ड तो नहीं दिया किन्तु अपने आपको उससे दूर हटा लिया। जिससे वह महात्मा बहुत ही चिल्ला-चिल्ला के रोने लगा कि हाय रे मैं मारा गया इन पाखण्डी ब्राह्मणों ने मुझे बहका कर के श्री प्रभुजी के अपमान करने को उतारू किया मुझे नीच को इस बात का क्या ज्ञान था कि वह सर्वशक्तिमान काल पर हकूमत करने वाले यहाँ इस भेष में अपने को छुपाये बैठे हुए हैं। भैरों स्वामी ने मुझे छोड़ दिया-इनके पवित्र चरण कमलों में ही मेरा प्राण विमोक्ष हो जाता तो बिना किसी साधन के सहज में ही मुक्ती पा जाता। आदि बाते कहते हुए उस महात्मा ने श्री आनन्दकन्द प्रभुजी के चरण कमल पकड़ लिये और परम दीन आर्त स्वर में रो-रो करके कहने लगा सर्व शक्तिमान त्राहि माम्- त्राहि माम् दीनबन्धों मेरी रक्षा करो- मैं आपका दीन बालक हूँ। मैंने इन सांसारिक लोगों के बहकाने में आकर आपका अपमान किया है। हे दीनबन्धु मेरी रक्षा कीजिए। उस महात्मा की इस दीन प्रार्थना को सुनकर श्री प्रभुजी का हृदय द्रवित हो गया और कहने लगे बेटा तुम अब किसी के बहकावे में मत आना और इसी समय तुम अमृतसर को छोड़ करके कहीं अन्यत्र चले जाओ। यदि आज ही सूर्यास्त होने से पहले अमृतसर को छोड़कर कहीं अन्यत्र चले जाओगे तो भैरव तुम्हारा पूरा-पूरा साथ देगा। यदि तुम इस वचन की अवहेलना करोगे तो भैरव भी तुम्हारा साथ आज से ही छोड़ देगा, जिस का तुम्हारे मन को बहुत ही भारी आघात पहुँचेगा। श्री आनन्दकन्द श्री प्रभुजी की इस आज्ञा को पाकर वह महात्मा तत्काल ही वहाँ से चला गया एवं बहका करके लाने वाले उस ईर्ष्यालु समुदाय की ओर आँख उठा कर के भी नहीं देखा। वे सभी लोग यह सब दृश्य देख कर बड़े ही अपमानित से होकर चुप चाप अपने-अपने घरों को चले गए और अपने-अपने मनों में यह भली प्रकार से समझ गये कि श्री प्रभुजी साधारण ब्राह्मण ही नहीं प्रत्युत सर्व शक्तिमान एवं सर्व समर्थ युग-पुरुष हैं।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

पूज्यपाद श्री गुरुदेव जी द्वारा

प्रयाग कुम्भ

महन्त बालकृष्णदास वैरागी श्री आनन्दकन्द प्रभुजी की दिव्य कृपाओं को कृत-कृत्य हो करके श्री प्रभुजी की चरण सेवा में हर समय संलग्न रहने लगे। माघ का महीना था कुछ ही दिनों बाद प्रयाग में कुम्भ मेला होने वाला था। कुम्भ मेले के यात्रियों की भीड़ काफी संख्या में पहिले से ही चल रही थी। श्री प्रभुजी के चरणारविन्दों के अनुरागी सभी भाई-बहनों ने प्रार्थना की कि प्रभुजी कृपा करके आप हमें भी कुम्भ मेला दिखलाइए। उन सभी की इस दीन विनय को सुनकर श्री प्रभुजी ने प्रयाग कुम्भ में जाने की तैयारी कर दी। श्री प्रभुजी के चरणारविन्दों के साथ में जाने वाले गृहस्थ विरक्त काफी लोग थे उनमें से प्रमुख श्री योगीराज मुलखराज जी श्री योगिराज गोपालानन्द जी, महात्मा ऋषिदेवी जीं एवं बालकृष्ण दास वैरागी आदि महात्मा सभी थे। श्री आनन्दकन्द प्रभुजी अपने पूरे-पूरे समुदाय को लेकर प्रयाग पहुँच गये। और अपने कैम्प लगवाकर के माघ के महीने में वहीं निवास किया। श्री प्रभुजी के प्रयाग निवास काल में अनेकानेक महात्मा, सेठ, साहूकार व अन्य जिज्ञासु समुदाय बराबर दर्शनार्थ आने लगा। सत्सङ्ग का प्रचार खूब धूमधाम आने लगा। सत्सङ्ग का प्रचार खूब धूमधाम से बढ़ने लगा। कुम्भ का मेला था। दिव्य दृष्टिपात साधू-महात्मा, सन्यासी एवम् गृहस्थ समुदाय श्री प्रभुजी के अलौकिक तेज को देखकर सभी आश्चर्य चकित थे। इस प्रकार के अलौकिक तेज को धारण करने वाले सर्व समर्थ महात्मा उस मेले में कोई भी दिखलाई नहीं देते थे। अनुभूति और कृपा इन बातों को कोई भी समझ नहीं सकता। इस अनुपम दया का पात्र कौन और कब बनेगा। मेड़ नाम का एक मल्लाह प्रयाग निकटवर्ती एक गाँव झूसी में निवास करता था वह भजनानन्दी था साधू सेवी एवम् परम विनीत था। उसके मन में प्रतिक्षण ये भावना बनी रहती थी कि मैं किसी महापुरुष की कृपा प्राप्त करके अपने आपको कृतकृत्य बनाऊँ किन्तु इस समय तक वह इस अलभ लाभ को प्राप्त नहीं कर पाया। उसके मन में भावना बनी रहती थी और वह यह कि-

राम राम रटते रहो जब लग घट में प्रान।
कबहूँ तो दीन दयाल के भनक पड़ेगी कान।।

इसी दोहे को आधार बनाकर के मेडू का दिन-रात भजन में रत रहा करता था। मेडू का जन्म यद्यपि मल्लाह जाति में हुआ था, किन्तु उसके कर्म बहुत ही उत्कृष्ट थे। और वह निरन्तर सूक्ष्म आहार करके जप में लगा रहा करता था जो व्यक्ति इस प्रकार स्वाध्यायशील रहते हैं वह अपने मनोवांछित अलभ लाभ को अवश्य ही प्राप्त कर जिया करते हैं। हमारा शास्त्रीय सिद्धांत हैं :—

स्वाध्यायादिष्ट देवता सम्प्रयोगः।।

देवा, ऋषयः, सिद्धाश्च स्वाध्याशीलस्य दर्शनं गच्छन्ति कार्य्ये चास्य वर्तन्त इति।।

अर्थात् देवता लोग ऋषि मुनि और सिद्ध लोग स्वाध्यायशील व्यक्ति की आंखों के सामने जाया करते हैं और उन पर कृपा किया करते हैं ताकि वे लोग अपने मनोवांछित फल को पा जायें। मेडू के अनवरत स्वाध्यायशील रहने के फल को उसने भी प्राप्त किया। निरन्तर स्वाध्याशील रहने से कुछ-कुछ दिव्यानुभूतियें होना आरम्भ हो गयी। यह एक स्वाभादिक नियम है कि जो जितना तेजस्वी व्यक्ति होता है वह उस परमात्मा के नित्य शुद्ध तेज में अनवरत दिखाई दिया करता हैं। यह शास्त्री नियम है कि :—

ईशाद्या सकला देवाः तृष्यन्ते सरमात्मनि।

अर्थात् ईशादिक सकल देवता उस परमात्मा के अखण्ड व्यापक सत्त्व तेज में इस प्रकार से दिखलाई दिया करते हैं जैसे जल और जल की लहरें, सोना और सोने के आभूषण। ठीक इसी प्रकार से जो व्यक्ति ध्यानस्थ हो जाता है और अन्तरप्रकाश को पा लिया करता है उसको उस नित्य तेज में अवस्थित साधू महात्मा, तपस्वी सभी के अनवरत दर्शन होने लगते हैं मेडू ने भी कुछ कुछ इस स्थिति को प्राप्त कर लिया था वह जब भी अपने भजन और ध्यान में बैठता तब ही श्री आनन्दकन्द प्रभु जी के अखण्ड प्रकाश को देख लेता था और प्रभुजी के इन मानस भावों को भी वह समझ जाता था कि श्री प्रभुजी आज त्रिवेणी स्नान का विचार कर रहे हैं उस ध्यानावस्था में ही मेडू श्री प्रभुजी आज त्रिवेणी स्नान का विचार कर कर रहे हैं उस ध्यानावस्था में ही मेडू श्री प्रभुजी से यही प्रार्थना करता था कि वे कृपा कर उसकी नाव में ही बैठें। एक ओर दीनवत्सल श्री प्रभुजी ने त्रिवेणी स्नान करने के लिए उसकी नाव में ही बैठने का विचार परिपक्व कर लिया और सभी सत्सङ्गियों से कहने लगे चलो भाई आज त्रिवेणी स्नान करने अवश्य चलेंगे। श्री प्रभुजी के बार-बार इस प्रकार आग्रह पूर्वक कहने पर सभी लोगों को कुछ आश्चर्य हुआ कि इस प्रकार का आदेश तो श्री प्रभुजी कभी भी नहीं दिया करते थे। आज इतना हठ पूर्वक आदेश क्यों दे रहे हैं अवश्य कोई विशेष कारण होगा। अस्तु, गुरु आज्ञा ''अनुलङ्घनीया'' श्री गुरुदेव की आज्ञा का कभी भी उलङ्घन नहीं करना चाहिए, इस सिद्धांत को सामने

रखकर के सभी के सभी सत्सङ्गी श्री प्रभुजी के पदानुगामी बनकर उनके पीछे-पीछे त्रिवेणी स्नान करने के लिए चल पड़े। उनमें से कितने ही श्री प्रभु जी के दानी-मानी भक्त भी थे। सङ्गम स्थल पर पहुँचने पर बड़ी-बड़ी अच्छी नाव सामने आई और हर सत्सङ्गी ने बार बार हठ किया कि प्रभुजी नाव बहुत अच्छी है बड़ी भी है, इज्जतवाली भी है आप कृपा कर इसी नाव में बैठिए किन्तु बड़ा आश्चर्य था कि श्री प्रभुजी किसी की नाव में नहीं बैठे प्रत्युत् जहाँ टूटी सी नाव लिए हुए एक पैर से खड़ा हुआ मेडू मल्लाह प्रतीक्षा में था वहाँ जाकर रुक गये और कहा कि बस इसी की नाव में बैठेंगे। यही अच्छी है, निश्चय ही नाव अच्छी नहीं थी। बहुत पुरानी थी। टूटी सी थी और बहुत ही छोटी सी थी। सभी सत्सङ्गी उसमें आ भी नहीं सकते थे किन्तु श्री प्रभुजी की आज्ञा पाकर सभी सत्सङ्गी यथा-तथा करके उसी नाव में बैठ गये। मेडू ने नाव चलायी सभी को बड़ी सुविधापूर्वक त्रिवेणी स्नान करा दिया किन्तु एक बात का बड़ा ही आश्चर्य था कि श्री प्रभुजी मेडू को बार-बार आदेश करते थे कि नाव को इधर ले चल उधर ले चल इस प्रकार उसको सङ्गम के जल में कई घण्टे तक बराबर घुमाते ही रहे। ज्यों-ज्यों श्री प्रभुजी आज्ञाएँ देते थे त्यों-त्यों वह मल्लाह उत्तरोत्तर खुश ही खुश दिखाई देता था। घण्टों इसी प्रकार घूम लेने के बाद सभी सत्सङ्गियों को श्री प्रभुजी ने आज्ञा दी चलो अब इसकी नाव से उतर चलों पैसे देने की कोई जरूरत नहीं। पैसे हमने सब दे दिये। प्रभुजी की आज्ञा को सुनकर मल्लाह बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने बार-बार नमस्कार किया और सत्सङ्गी भी उसको कुछ भी दिये बिना ही उतरकर चले आये। किसी के मन में भी कोई दुविधा नहीं थी किन्तु ''जैसी हो होतव्यता तैसी उपजे बुद्धि'' इसी नियमानुसार महात्मा श्री बालकृष्ण दास वैरागी के मन में तरह तरह के अहंकृति पूर्ण विपरीत भाव आने लगे। वह अपने मन में सोचने लगा कि कैसे योगिराज हैं इन्होंने व्यर्थ में ही गरीब मार कर दी है इतनी देर तक इस वेचारे मल्लाह को घण्टों तक त्रिवेणी के जल में घुमाते भी रहे और चलते समय कोई भी पाई पैसा नहीं दिया। इन्हीं विचारों को बालकृष्ण दास वैरागी बार-बार अपने मन में घुमाते रहे। श्री प्रभुजी ने श्री बालकृष्ण दासजी से कई बार पूछा कि बालकृष्ण तुम क्या सोच रहे हो किन्तु श्री बालकृष्ण दास जी ने इन्कार कर दिया कि नहीं प्रभुजी मेरे मन में कोई ऐसी बात नहीं है मैं तो साधारण रूप से चुप हूँ ही। ये प्रकरण काफी देर तक चलता रहा किन्तु बालकृष्ण दास जी ने सत्य को स्वीकार नहीं किया और ना ही यह बताया कि वह क्यों उदास है। अन्ततः किसी और सत्संगी ने कहा कि प्रभो भाई बालकृष्ण दास जी शायद यही सोच रहे होंगे कि आप उस मल्लाह को उतराई क्यों नहीं देकर आये। इसके साथ ही श्री प्रभुजी ने बालकृष्ण दास जी को कहा कि अरे भाई यह बात तो ठीक ही है कि उस बेचारे मल्लाह को हम कुछ देकर के नहीं आए। श्री प्रभुजी के इतना कहने पर श्रीबालकृष्ण दास जी तत्काल बोल उठे कि बस प्रभुजी इतनी देर से मैं भी यही विचार कर रहा था। संकोच वश मैंने आप से नहीं कहा। श्री प्रभुजी थोड़े से मुस्कराये कि बेटा ये १० रुपये ले जाओ और उस मल्लाह को तुम दे आओ। भीड़ बहुत है क्या तुम उसको पहिचान लोगे। बालकृष्ण दास जी ने उत्तर दिया कि हां प्रभुजी मैं उसको अवश्य पहिचान लूँगा और ये रुपए उसी को देकर आऊँगा। श्री प्रभु जी ने प्रसन्नतापूर्वक आज्ञा दे दी। श्री बालकृष्ण दास जी काफी तलाश करने के बाद मेडू मल्लाह के पास पहुँचे। मेडू मल्लाह अपनी नाव में पूरी-पूरी प्रसन्नता के साथ खड़ा था। श्री बालकृष्ण दास जी के मन में बड़ी ही प्रसन्नता थी कि मल्लाह दास जी के मन में बड़ी ही प्रसन्नता थी कि मल्लाह मुझे देखकर के एवम् मेरे हाथ के १० रुपये के नोट को देखकर के बहुत हो प्रसन्न होगा किन्तु बात इसके विसरात रही। ज्योंही श्री बालकृष्ण दास मेडू मल्लाह के नाव की ओर बढ़े तो मल्लाह ने बालकृष्ण दास को पहिचान लिया और डाँट कर कहा महात्मा तुमको शर्म नहीं आई। तू मुझे १० रुपये देने आया है। देने वालों ने मुझे सब कुछ दे दिया है। अब तू मुझे १० रुपये क्यों दिखलाने आया है तू उन परब्रह्म नित्य शुद्ध चेतन सद्गुरुदेव की लीला में पाप देखता है क्यों न तुझे अभी कुष्ट हो जाये। बड़ा ही आश्चर्य था कि मल्लाह के मुख से शब्द निकलते ही श्री बालकृष्ण दास के शरीर में विशेषतः पेट पर तत्काल श्वेत कुष्ठ के निशान पड़ गये और खुजली इतनी बढ़ी कि उनको रास्ता तय करना कठिन हो गया। यथा-तथा श्री गुरुजी के चरणों में पहुँचे और पहुँचकर कुल हकीकत श्री प्रभुजी को निवेदन कर दी। श्री प्रभुजी ने उसके शरीर पर यकायक बढ़े हुये कुष्ठ रोग को देखकर कहा कि ये तो उसने ठीक नहीं किया। उसने कह दिया सो कह दिया। ये मिट्टी तू सारे शरीर पर लगा ले यह तीर्थ की मिट्टी है तेरा रोग अभी हठ जायेगा। श्री प्रभु जी की आज्ञानुसार वह रज शरीर पर लगाई उसके लगाते ही बालकृष्ण दास बिल्कुल ठीक हो गये। और कुम्भ मेले के बाद श्री प्रभुजी के चरणारविन्द के साथ अमृतसर लौट आये। उसके बाद बालकृष्ण दास पूरी जिन्दगी पूर्ण स्वस्थ रहे। किन्तु जब जब उनके मृत्यु-काल में एक या दो वर्ष शेष रह गये तो एक दिन वह ध्यान में बैठे तो ध्यानावस्था में श्री प्रभुजी ने कहा कि बालकृष्णदास मल्लाह वाला श्राप कठिन है वह तुम्हारा एक जन्म खराब कर देगा। अच्छा हो उस श्राप को तुम इसी जन्म में भीग लो। अब तुम्हारा जीवन भी लम्बा नहीं है उसके श्राप को १ वर्ष या ६ महीने अपने शरीर पर भोग लो। उसके बाद इससे अगला जन्म तुम्हारा उज्ज्वल हो जावेगा और उस उज्ज्वल जन्म में तुम अच्छी करनी की कमाई कर सकोगे। श्री प्रभुजी की इस प्रकार की आज्ञा प्राप्त हो जाने के बाद उस क्लिष्ट कर्म विपाक को स्वीकार कर लिया। श्री बालकृष्णदास जी ने मुझे जगन्नाथपुरी में बतलाया था कि ध्यान में श्री प्रभुजी की ऐसी आज्ञा हो जाने के बाद एवम् मेरे उस क्लिष्ट कर्म विपाक को स्वीकार कर लेने के बाद जब मैं ध्यान से उठा तो वही कुष्ठ ज्यों का त्यों जैसा इलाहाबाद में मल्लाह के कहने पर प्रकट हुआ था वह तत्काल प्रकट हो गया श्री बालकृष्ण दास जी को यह कुष्ठ रोग मृत्यु से लगभग १ वर्ष या ६ माह पहिले हुआ और इसको भोग लेने के पश्चात् सभी के सामने यह कहकर कि अब मेरा भोग पूरा हो गया है अब मैं जा रहा हूँ, उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

समाधिस्था योगिनी रामरती

योग योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

योगनी रामरती की चरित्र कथा एक बड़ी ही अद्‌भुत और समाज में बहुत ही आश्चर्य पैदा करने वाली कथा है। मेरे सद्‌गुरुदेव योग-योगेश्वर श्रीरामलालजी महाराज जिस समय बिहार प्रान्त में भ्रमण कर रहे थे। तब वे यहाँ के बड़े-बड़े नगरों में भ्रमण कर रहे थे। तब वे यहाँ के बड़े बड़े नगरों में होते हुए पटना नगर में जा पहुँचे, यहाँ से थोड़ी दूर पर पवित्रतम् गंगा नदी के किनारे जमुनिया घाट नामक एक स्थान है। इसी जमुनिया घाट के निकटवर्ती किसी गाँव में परम आदरणीय योगिनी रामरती ने क्षत्रिय कुल में जन्म लिया था। जब इसने बाल-अवस्था व्यतीत कर तरुणाई में प्रवेश किया जब कुसंग पाकर यह कुमार्ग-गामिनी बन गई और सुरापान करने वाले उदण्ड आमिषभोजी युवकों के जाल में फँस गई। रामरती नव-यौवन सम्पन्न परम रूपवती सुन्दर युवती तो थी ही, उसका मन सहज ही कुमार्गगामी युवकों के संग साथ में बह गया और शनैः-शनैः उसका जीवन एक भ्रष्ट जीवन हो गया। वह भी उन लोगों के सम्पर्क से सुरापान करने लगी और वेश्याओं की तरह से पूर्णरूपेण व्यभिचार के प्रवाह में बह गई। किन्तु प्रारब्धवश किसी प्राणी का उद्धार-काल जब संयोग से आ जाता है तब नीचे से नीचे प्रवृत्ति होने पर भी किसी महान पुण्य के उदय होने पर ऐसे लोग भी सत्संग या गुरुकृपा को पाकर बिलकुल बदल जाया करते हैं। भक्तों की कथाओं में बाल्मीक, गणिका, मीरा, सदन कसाई आदि इसी बात के प्रकृतिभूत उदाहरण हैं। इनका पहला जीवन सभी जानते-समझते हैं, सांसारिक था किन्तु सत्संग को पाकर इतने बदले कि उच्चकोटि के ख्यातिप्राप्त महात्मा हो गये एवं उन्होंने अपने जीवन को धन्य बना लिया।

रामरती का जीवन भी इन्हीं लोगों की तुलना में रखा जा सकता है। रामरती मदोन्मत हो करके स्पर्श सुख के रसभोग में निरंतर संलग्न रहती थी उसका मन इस बात को मान बैठा था कि इससे बढ़कर संसार में कोई अन्य सुख है ही नहीं। संयोग की बात कि अकस्मात् हमारे गुरुदेव योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज जमुनिया घाट के निकटवर्ती जंगलों से घूमते हुए निकल रहे थे तो उन्होंने एक अद्‌भुत दृश्य देखा। एक सूने से स्थान पर दो व्यक्ति हाथ में तलवार लिये खड़े हैं और एक-दूसरे से बातें कर रहे हैं। उनमें से एक काफी वृद्ध था और दूसरा नव-युवक दिखाई दे रहा था। युवक कह रहा था कि पिता जी! आप वृद्ध हैं, पूजा लायक हैं, इस कुल-कलंक दुश्चरित्रा बहन को मैं मार दूँगा, फिर इसके साथी मुझे मार देंगे। इसका परिणाम यह रहेगा कि हमारे कुल का कलंक घुल जायेगा।

वृद्ध कह रहा है कि नहीं बेटा! ऐसा उचित नहीं है। तुम नवयुवक हो, कुल की समृद्धि करोगे, मेरी जीवन-यात्रा पूरी-सी हो चुकी है, आज नहीं तो वर्ष दो वर्ष के अन्दर मेरा शरीर तो समाप्त हो ही जायेगा, अतः तुम मेरी बात को मान लो, तुम यहाँ से कहीं अन्यत्र जगह पर चले जाओ। इस लड़की का जन्म मैंने ही दिया है और मैं ही इसकी हत्या कर दूँगा, कुल का कलंक धुल जायेगा। इसके साथी मुझे मार देंगे, कोई बात नहीं। अपनी इस दुष्चरित्रा पुत्री के कारण मेरी मृत्यु हो जायगी यह भी ठीक ही है। तुम नवयुवक हो दुनिया में काम करना, यश प्राप्त करना और अपने कुल का संचालन करना।

श्री आनन्दकन्द प्रभुजी एक ओर छुपे हुए इन दोनों की बातें सुन रहे थे। इनको ये बातें सुनकर और इनके मन के गहरे आघात को विचार करके श्री प्रभु जी ने पूछा कि तुम कौन हो और तुम्हें यह दुःख क्यों हो रहा है? तुम पर यह आपत्ति क्यों है? हम साधु हैं स्पष्ट बताओ। श्री प्रभुजी के मुख से यह बात सुनकर नवयुवक ने उत्तेजना में कहा, तुम्हें हमारी बातों से क्या प्रयोजन है? तुम अपना रास्ता पकड़ो और चले जाओ। हमें जो कुछ करना है करते रहेंगे, तुम जाओ। किन्तु अपने पुत्र की इस अवहेलनापूर्ण बात को सुनकर उसके वृद्ध पिता ने कहा- नहीं बेटा! यह महात्मा है इनको बात बतला देना चाहिए। पता नहीं यहाँ सर्वशक्तिमान परम-पिता परमात्मा किसको निमित्त बनाकर क्या करा दें। युवक ने पिता की बात को मान लिया और श्री प्रभु जी के चरणार्विन्द में अपनी बहन रामरती के चरित्र को सब बातें बतला दीं और यह भी बतला दिया कि हम यहाँ उसकी तलाश में खड़े हैं। वह समीप के घर में बैठी शृंगार कर रही है एवं उसके पास शराब की बोतलें रखी हैं। वह अभी इसी रास्ते से अपने चरित्रहीन मित्रों से मिलने के लिये पास के गाँव में जायेगी। बस! ज्योंही वह हमारे नेत्रों के सामने आयेगी, उसकी जीवन-लीला हम समाप्त कर देंगे। यद्यपि उसके मित्रों को पता चलने पर वे सब हमें भी अवश्य मार देंगे। फिर जो कुछ होगा होता रहेगा, किन्तु रामरती को आज हम सदा के लिये सुला देंगे, वह अब किसी को जिन्दा दिखलाई नहीं देगी। श्री प्रभु जी ने उन दोनों को सांत्वना देते हुए कहा कि बेटा! आज तुम ऐसा मत करो। उस लड़की को आज तुम ऐसा मत करो। उस लड़की को आज हम देख लेते हैं कदाचित् वह हमारी बात मान गई तो उसका जीवन पूरी तरह बदल जायगा। उन दोनों ने प्रभुजी की बात पर विश्वास कर लिया और उसे कत्ल करने का इरादा छोड़ दिया। यह वार्तालाप हो ही रहा था कि उतनी देर में

नवयौवन मदमाती रामरती उन्मत्तों की तरह तेजी से चली आ रही थी उसको श्री प्रभुजी ने देखा और देखकर कहा कि रामरती, ऐसे कर्म करती हो? रामरती ने उत्तर दिया महाराज इससे बढ़कर और कोई आनन्द की वस्तु है ही नहीं। मैं सुख भोग और आनन्द के लिये ये सब करती हूँ। श्रीप्रभुजी ने उत्तर दिया यदि तुम्हें इससे अधिक आनंद मिले तो तुम्हें वह चाहिये या यह चाहिये। रामरती ने उत्तर में कहा प्रभु इससे बढ़कर कोई आनन्द तो होता ही नहीं। और अधिक आनन्द कोई क्या देगा ये बातें मिथ्या हैं। साधू महात्मा समझाने के लिये सभी बातें किया करते हैं वस्तुतत: आनन्द तो यही है कि प्रभुजी ने फिर कहा- नहीं रामरती तुम विश्वास करो यह आनन्द नहीं है। आनन्द तो कुछ और ही वस्तु है यदि उस आनन्द को तुम पा गयीं तो उस घोर दु:ख को जिसे तुम आनन्द समझ बैठी हो मलमूत्र की तरह त्याग कर दूर हो जाओगी। श्री प्रभुजी के वचनों को सुनकर रामरती ने फिर कहा कि यदि यह बात सत्य है और इससे बढ़कर कोई आनन्द होता है तो आप साधू महात्मा दिखलाई दे रहे हो आपके गले में जो यज्ञोपतीत है उसको पकड़कर कसम खाओ कि आप मुझे इससे बढ़कर कोई आनन्द प्राप्त करायेंगे। तब मैं आपके पास आ सकती हूँ अन्यथा मुझे तो हर समय भय है। चारों ओर मेरे दुश्मन हैं मैं आपके निकट नहीं आऊँगी। श्री प्रभुजी को रामरती का उद्धार करना था उसे विश्वास दिलाने के लिये अपना यज्ञोपवीत पकड़ कर कसम खाकर कहा अवश्य हम तुम्हें इससे बढ़कर आनन्द देंगे जिसको पाकर तुम साँसारिक चक्रों में फिर नहीं पड़ोगी। श्री प्रभुजी के इन वचनों को सुनकर रामरती उनके चरण कमलों आकर बैठ गई श्री प्रभुजी ने शरणापन्न उस नारी पर गहरा शक्तिपात किया। उसी समय से वह समाधिस्थ हो गई। रामरती की इस हालत को देखकर श्री प्रभुजी ने उसके पिता ओर भाई को बताया कि अब यह रामरती पुरानी रामरती नहीं है इसका जीवन बदल गया है और यह सच्ची योगिनी बन गई हैं, जो इसकी सेवा करेगा वरदान पायेगा। श्री आनन्द कन्द प्रभुजी की अपार कृपा को प्राप्त कर दुश्चरित्रा रामरती एक पूर्ण सच्चारित्रा देवी बन गई और वही पर समाधि लगाकर बैठी रही उसकी उस समाधीय स्थिति के अन्दर जिन लोगों ने उसकी सेवायें कीं उन लोगों ने वरदान प्राप्त किये। रामरती की कृपा पूर्वक अतुलित वरदान धन दौलत प्राप्त करके लोग धनीमानी बन गए और रामरती के निकट कइयों ने धर्मशालाएँ और शिवालय बनवा दिये। किन्तु रामरती को अपने तन मन की कोई सुध नहीं थी उसके मुख से जो निकलता था वह होता था किन्तु मुख से कब क्या निकलता है और कौन निकलवाता है इनका ज्ञान रामरती को बिल्कुल नहीं हो पाता था। बारह वर्ष तक रामरती उसी स्थान पर समाधि लगाकर बैठी रही। श्री प्रभुजी रामरती को वहाँ बैठाकर नेपाल हिमालय को चले गए थे और आने-जाने वाले सत्सङ्गियों को बता गये थे कि जो इसे दूध पिलायेगा वही इष्ट वरदान पायेगा। उदीयावस्था को प्राप्त रामरती की अचेतावस्था में लोग उसको दुग्धपान कराते रहे। बारह वर्ष तक रामरती वहां समाधिस्थ रही। उसके बाद नैपाल हिमालय से श्री प्रभुजी अपने पतित बालकों के उद्धार के लिये जब लौट रहे थे तो ध्यानावस्था में ही रामरती को यह पता चल गया कि हमारे जीवन बनाने वाले सर्वसमर्थ सर्वशक्तिमान श्री प्रभुजी नेपाल हिमालय से लौट आए हैं और पटना होकर किसी गाड़ी से जा रहे हैं। रामरती ने अपने पास बैठे सत्संगियों को आज्ञा दी कि हमारे सर्वसमर्थ गुरुदेव इस गाड़ी से पटना से निकल रहे हैं तुम सब रेल्वे स्टेशन जाओ। उन लोगों में स्टेशन मास्टर भी बैठा था वह भी स्टेशन जा पहुँचा उसने देखा रामरती ने जो गाड़ी बताई थी उसी में श्री प्रभुजी आ रहे हैं। स्टेशन मास्टर ने प्रभुजी से विनम्र प्रार्थना कर उन्हें गाड़ी से उतार लिया और बतलाया कि आप योगिनी रामरती के गुरुदेव हैं और उन्हीं की आज्ञा से हम आपको लिबाने आये हैं। श्री प्रभुजी उन लोगों के आग्रह करने पर रामरती के स्थान पर चले गये। सत्सङ्गी श्री प्रभुजी को अपने कंधों पर बैठाकर ले जा रहे थे तो श्री प्रभुजी ने उन सबको आज्ञा दी कि तुम लोग हमें अब नीचे उतार दो तुम्हारी वह योगिनी रामरती भागी आ रही है, हमारे चरण पकड़ेगी। कदराचित उसको चरण नहीं मिल सके तो ही सकता है कि भावोद्वेग में वह अपना शरीर छोड़ दे। अत: हमें जल्दी ही नीचे उतार दो। श्री प्रभुजी की आज्ञा पाकर लोगों ने उन्हें नीचे उतार दिया। कुछ ही देर में देखा कि रामरती बिल्कुल उन्मत्तों की तरह से भागी आ रही है और तीव्रतम् उद्वेग में उसने प्रभुजी के चरण पकड़ लिये तथा कई घण्टों के लिए बेहोश हो गई। श्री प्रभुजी ने उसके सत्सङ्गियों को आज्ञा दी कि अब तुम इसको उठाकर ले चलो। इसकी ये बेहोशी कई घण्टों के बाद खुल पायेगी। ऐसी ही हुआ। जिस समय रामरती को चेतना आई तो प्रभुजी हँसे और बोले, रामरती! हम तो तुम्हें जंगल में बैठा गये थे तुमने ये क्यों धर्मशालाएँ आदि बनवाली हैं। रामरती ने उत्तर दिया हे दीनबंधु आप क्या कह रहे हैं मुझे नहीं पता ये मकान धर्मशाला और शिवालय किसने बना दिये हैं मैंने तो केवल मात्र उन्हीं को देखा है जिन्हें आप दे गये थे या मेरी आँखों ने आज आपके दर्शन प्राप्त किये हैं। रामरती को भगवान श्रीकृष्ण का साक्षात्कार समाधि में बराबर बना रहता था, जो प्रभुजी की कृपा से ही सम्भव हुआ था।

यह वार्तालाप समाप्त होने पर श्री प्रभु जी ने रामरती को आज्ञा दी कि अब तुम यहाँ से सुदूर वन-खण्डों को चली जाओ। रामरती श्री प्रभुजी की आज्ञा को प्राप्त कर नैपाल हिमालय की ओर चली गई।

इस अङ्ग में जो चित्र दिया गया है वह रामरती पर श्रीप्रभु जी ने किस प्रकार शक्तिपात किया इसका परिचायक है। जमुनिया घाट से आगे के स्थानों में हमारा योग-प्रचार कार्यक्रम पर्याप्त मात्रा में बढ़ चुका है। बेतिया में हमारे अनेक सत्संगी बच्चे हैं, जिनमें मास्टर शंकरलाल जी और उनके अन्य साथी भी हैं, वे हमें बताया करते हैं कि जहाँ रामरती को श्री प्रभु जी ने समाधि दीक्षा प्रदान की थी वहाँ पर रामरती के चले जाने के बाद स्थानीय लोगों ने रामरती की एक मिट्टी की प्रतिमा बनाली थी जो आज भी मौजूद हैं। उसके भक्त उस पर अब भी दूध चढ़ाया करते हैं। चालीस दिन तक लगातार मिट्टी की उस प्रतिमा पर दूध चढ़ाकर जो उस योगिनी को स्मरण करते हैं, उनकी तीव्रतम तपश्चर्या के बाद आकाश में एक बहुत ही नव-यौवन सम्पन्ना देवी के दर्शन उन्हें होते हैं। वह आशीर्वाद देती है और कहती है कि मैं रामरती हूँ! जाओ तुम्हारी मनो कामना पूर्ण हुई। इस प्रकार लोगों को तब से लेकर अब तक भी वरदान प्राप्त होते रहते हैं। ही सकता है कि रामरती अपने योग-शरीर से उन पर कृपा करने आती हो और हिमालय में भूतजयी होकर कहीं तपस्यारत रहती हो।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

योगी अमरनाथ जी

श्री अमरनाथ जी आनन्दकन्द श्री प्रभु जी के शरणागत होने वाले आदर्श जिज्ञासु भाइयों में से एक थे। इनका जन्म पवित्र ब्राह्मण कुल में पंजाब प्रान्तार्न्गत गाँव में हुआ था। ये जन्म से ही बहुत पवित्र एवं आदर्शशील स्वभाव के थे। मन में भग्रवद्दर्शन की पवित्र अभिलाषा बाल्यकाल से ही बनी रहती थी। परन्तु उस मार्ग के प्रदर्शक किसी परिपूर्ण गुरुदेव के दर्शन न पाने के कारण मन में बराबर अशान्ति रहती थी। प्रतिक्षण उनके मन में यह अभिलाषा तीव्रतर होती जाती थी- पूर्ण साक्षात्कार कराने वाले कोई गुरुदेव मिल जायँ, तो उनके चरण-कमलों पर अपने को न्यौछावर करके धन्य कर लूँ।

श्री अमरनाथ जी का विद्याध्ययन बहुत साधारण था। इनके कई भाई अमृतसर में लक्ष्मणसर पर होटल की दुकान करते थे। भाई अमरनाथ जी भी किसी साधारण व्यवसाय के लिये अमृतसर में ही निवास किया करते थे। सत्संग की प्रवृत्ति तो बराबर बनी ही रहती थी। इसी बीच में इन्होंने आनन्दकन्द श्री प्रभुजी की महिमा किसी व्यक्ति के मुख से सुनी और इन्होंने नित्य सत्संग में आना आरम्भ कर दिया। फलस्वरूप शनैः-शनैः श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में इनकी निष्ठा परिपक्व होने लगी। समय आने पर इन्होंने पवित्र योग-मार्ग में उनसे योग दीक्षा प्राप्त की। दीक्षित होने पर इनकी ध्यान-स्थिति अनवरत बढ़ने लगी और इनका अभ्यास क्रमानुसार बढ़ता गया। ध्यान-स्थिति के परिपक्व होने पर इन्होंने ध्यान-योग से ईश्वर के ऐश्वर्य का बहुत अवलोकन किया। योगदर्शन के विभूतिपाद में भगवान पतंजलि जी महाराज ने एक सूत्र लिखा है- ''भुवन ज्ञान सूर्यसंयमात्'' अर्थात् योगी को चाहिए कि अपने संयम के आधार पर चौदह भुवनों को देख डाले और ईश्वर के दिव्य ऐश्वर्य का खूब अवलोकन करें। सूर्य में संयम करने से यह संभव होता है।

इस शास्त्रीय नियमानुसार हमारे सद्गुरुदेव योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज का भी यह नियम था कि वह स्थिति प्राप्त साधक को दिव्य-लोकों का दर्शन पहले से ही करा दिया करते थे, जिससे उनके वैराग्य में कोई विक्षेप उत्पन्न न हो एवं उसकी साधना निर्विघ्न उत्तरोत्तर बढ़ती चली जाय। उपर्युक्त सिद्धान्तानुसार श्री प्रभु जी ने भाई अमरनाथ जी को अतल, वितल, रसातल, तलातल पाताल आदि नीचे के एवं भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्य आदि ऊपर के लोकों का पूर्णरूपेण साक्षात्कार कराया था। भाई श्री अमरनाथ जी ईश्वर के ऐश्वर्य का खूब अवलोकन कर चुके थे, अतः उनके मन में तीव्रता से पूर्व वैराग्य भाव का उदय हुआ। जिसके फलस्वरूप उन्होंने अपने जीवन को पूर्णरूपेण तपोमय बना डाला। उनकी दिनचर्या में उनके अपने दो ही कार्य प्रमुख थे— एक तो आनन्दकन्द श्री प्रभुजी के दर्शन प्राप्त करना तथा दूसरा कार्य था- अधिकाधिक मन लगाकर योगाभ्यास करना।

योग-दर्शन का सिद्धान्त है—

यत्र मनो लीयते, तत्र प्राणो लीयते।

यत्र प्राणो लीयते, तत्र मनो लीयते।।

अर्थात् जहाँ पर मन का लय होता है वहाँ पर प्राण भी स्वयं लय हो जाया करता है एवं जहाँ प्राण लय होता है वहाँ स्वतः ही मन भी लय हो जाया करता है।

इस सिद्धान्तानुसार भाई श्री अमरनाथ जी का भी अभ्यास चला। उनका मन काल के अधिकार से आगे ब्रह्माण्ड में लय रहा करता था। जिस समय वह अपना अभ्यास करना आरम्भ करते थे, उनके पांचों प्राण— प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान— योगयुक्त हो जाया करते थे। शक्ति-चालिनी मुद्रा करते समय उनको भस्त्रिका प्राणायाम तीव्रता से चला करता था। शनैः-शनैः उनका यह प्राणायाम कुम्भक के रूप में बढ़ता चला गया और उनका आसन भूमि से ऊपर उठना प्रारंभ हो गया। मुझे वह दिन याद है जबकि योग-साधन आश्रम ऋषिकेश में भाई अमरनाथजी का आसन भूमि से ऊपर उठा और उनके उत्थित आसन के नीचे श्री प्रभुजी ने अपना हाथ घुमाकर दिखलाया था। इस दृश्य को देखने वाले जो जो वीसियों व्यक्ति उस समय आश्रम में उपस्थित थे, कदाचित उनमें से पांच-दस अब भी इस संसार में होंगे। इस प्रकार पृथ्वी से ऊपर अधर में स्थित उनका आसन देखकर सबको बड़ा भारी आश्चर्य होता था।

भाई अमरनाथ जी का निवास प्रायः अमृतसर में ही रहता था। अपने मन से ही उन्होंने इस अभ्यास को उत्तरोत्तर बढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। उनकी तीव्र अभिलाषा होने लगी कि कुछ समय बाद वे जंगलों में निकल जायेंगे और तीव्रतम वैराग्य धारण करके योगाभ्यास करेंगे। किन्तु होनहार कुछ और ही थी। कदाचित् श्री प्रभुजी को ऐसा अभी स्वीकार नहीं था, क्योंकि भाई अमरनाथ जी का कुछ प्रारब्ध भोग शेष था। उनके तीव्र वैराग्यमय भावों को देखकर उनके कुटुम्बी जनों ने उन्हें गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट होने को बाध्य कर दिया, तीव्र अनिच्छा

होने पर भी अमरनाथ जी को अपने परिवार वालों का आग्रह मानकर इस आश्रम में प्रवेश करना पड़ा। लाहौर में जिस समय भाई अमरनाथ जी ने पत्नी का पाणिग्रहण किया, उसी समय बड़े सरल एवं स्पष्ट शब्दों में अपने श्वसुर से कहा- अच्छा! यदि होनहार ऐसी ही थी, वह तो हो ही गई। अब हम केवल एक साल के मेहमान हैं। एक साल के बाद आप अपनी इस लड़की को श्री प्रभुजी के चरण कमलों में दीक्षित करा दीजिये और योगाभ्यास कराया कीजियेगा।

श्री अमरनाथ जी के श्वसुर उनसे या श्री प्रभुजी से पूर्व परिचित तो थे नहीं। अत: उनके मुख से निकली बात का मर्म न समझ सके। वास्तविकता न समझकर अनभिज्ञ से प्रेमपूर्वक पूछने लगे- बेटा! तुम क्या कह रहे हो? बीच में ही उनके भाई लक्ष्मणदास जी बोले उठे- कुछ नहीं पण्डित जी, वह केवल यही कह रहे हैं कि जैसे हम योगाभ्यास करते हैं, उसी प्रकार इसको भी कराया करेंगे। यह सुनकर उनके श्वसुर हँस पड़े और कहने लगे- हाँ, हाँ बेटा, क्यों नहीं? अब तो यह तुम्हारी हो गई, चाहे कुछ भी कराना। पाणिग्रहण सत्कार का कार्य समाप्त हुआ, परन्तु अमरनाथ जी के जीवन में परिवर्तन का प्रारम्भ न हुआ। अब वे हर समय काफी विचारमग्न से रहने लगे। स्वयं अकेले बैठे-बैठे कभी हँस पड़ते थे और कभी मुख से यह वचन निकलते थे— क्या था और क्या हो गया? हम तो साधु थे, परन्तु बैकुण्डवासी बना दिये गये। क्या सोचते थे ओर क्या होगा? श्री अमरनाथ जी अपने भाई लक्ष्मणदास जी से भी बार-बार यही कहा करते थे— भाई, तुमने यह अच्छा नहीं किया। एक साधु को तुमने बैकुण्डवासी बना दिया है। लक्ष्मणदास जी बार-बार आग्रहपूर्वक पूछते- भाई, मैंने तुम्हें कैसे बैकुण्डवासी बना दिया? यह तुम क्या कहा करते हो? इस पर अमरनाथ जी हँस पड़ते और कहते- अभी क्या बता दें। एक वर्ष का समय है, इसको निकाल दें, तब इकट्ठा ही बता देंगे।

शनै:-शनै: वर्षावधि भी समाप्त होने का आ गई। भाई अमरनाथ जी के ध्यानाभ्यास में गृहस्थ हो जाने पर भी किसी प्रकार की कोई कमी नहीं आने पाई थी। पूर्ववत् उनकी साधना का क्रम चलता ही रहा था। उनका मुख-मण्डल पूर्णरूपेण दैदीप्यमान रहा करता था। बीच-बीच में बारम्बार अपने मुख से उन्हीं शब्दों का उच्चारण करते रहते थे— क्या था, क्या हो गया? अन्त में पूरा वर्ष समाप्त होकर वह दिन भी आ गया, जिसकी उन्हें प्रतीक्षा थी। उस दिन श्री अमरनाथ जी ने प्रात:काल ही स्नान किया। अन्य दिनों की अपेक्षा आज वह अधिक उल्लसित थे किसी प्रकार के रोग, शोक या चिन्ता का चिह्न उनके शरीर पर नहीं था। उस दिन प्रात:काल से ही उन्होंने कहना प्रारम्भ किया- अच्छा, आज यात्रा का दिन आ ही गया। आज मुसाफिर चला जायगा। उनके मित्र, भाई आदि बड़े आश्चर्य से पूछने लगे- कौन मुसाफिर है? वह आज कहाँ जा रहा है? तब उन्होंने स्पष्ट कह दिया- भाई, और दूसरा कौन, हम ही तो वह मुसाफिर हैं। दो-चार घण्टे और प्रतीक्षा करो। स्वयं पता चल जायगा कि कहाँ जा रहे हैं? उस दिन श्री अमरनाथ जी को भस्त्रिका प्राणायाम बार-बार जारी होता था। उन्होंने बड़ी प्रसन्नता से अपने बड़े भाई लक्ष्मणदास जी को बुलवाकर कहा- भाई, आज एक वर्ष की अवधि पूरी हा गई है। मेरी यात्रा का दिन आज आ गया है। श्री अमरनाथजी ने उनको लौकिक व्यवहार शुद्ध रखने की काफी शिक्षा दी और बारम्बार उनको समझाया। इस कलिकाल के घोर अन्धकारपूर्ण समय में पूर्ण सद्गुरु का प्राप्त होना बहुत ही कठिन है। बड़े सौभाग्य की बात है कि आजकल आनन्दकन्द योग योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज जो परिपूर्ण सद्गुरुतत्व के अवतार हैं, इस पृथ्वी पर विराजमान हैं। उन्हीं करुणार्णव श्री प्रभु जी के चरण-कमलों में तुम सब लोगों को अपना-अपना मन लगा कर इस जीवन को कृतकृत्य कर लेना चाहिए, मनुष्य-योनी और परिपूर्ण सिद्धों के महासिद्ध योग योगेश्वर जी के चरण-कमलों की प्राप्ति, ऐसा मणि-कांचन संयोग फिर हाथ आये या न आये। ऐसा स्वर्ण अवसर बार-बार नहीं मिला करता। यह उपदेश करने के पश्चात् श्री अमरनाथ जी सब लोगों से कहने लगे— अच्छा, अब समय बिल्कुल निकट आ गया है। दो घण्टे का मेरा एक संस्कार है, उसका भी भुगतान कर लूँ।

उनके भाई लक्ष्मणदास जी उनकी बातें सुनते थे, पर अर्थ नहीं समझ पाते थे। जो थोड़ा अर्थ समझते भी थे, उस पर सहसा विश्वास न कर सके। वह नहीं समझ सके कि श्री अमरनाथ जी दो घण्टे बाद ही महायात्रा करने वाले हैं। देखते-देखते अमरनाथ जी को तीव्र ज्वर हो गया। आश्चर्य की बात यह थी कि इस तीव्र-ज्वर की वेदना में भी उनका भस्त्रिका प्राणायाम पूर्ववत् निरन्तर चलता रहा और ध्यान-मग्न ही रहे। दो घण्टे की तीव्र-ज्वर वेदना के बाद वह सिद्धासन लगा कर ध्यान में लीन हो गये। ध्यान में बैठने से पूर्व उनके मुख से निकला- अच्छा भाई, मुसाफिर जा रहा है। तत्पश्चात् वह पूर्णरूपेण तद्गत हो गये और भस्त्रिका प्राणायाम निरन्तर चलता रहा। लोगों के देखते-देखते उनकी दृष्टि भ्रूमध्य हो गई और वह एक शांत योगी की तरह निश्चल हो गये। यह उनकी वह समाधि थी, जिसकी प्रतीक्षा वह बड़ी ही व्यग्रता से प्रिय अतिथि के समान कर रहे थे। अन्तत: भाई अमरनाथ जी इस पार्थिव शरीर को त्यागकर अपनी उस अनन्त यात्रा पर चल दिये, जिसकी चर्चा वे प्रात:काल से कर रहे थे। पास बैठा कोई भी व्यक्ति यह न समझ सका मि परमार्थ मार्ग के सच्चे पथिक ने आज अपनी यात्रा को पूर्ण कर अपने लक्ष्य को पा लिया है। उनका शरीर गिर जाने पर भी उनके भाई लक्ष्मणदास जी ने यही समझा- यह भी कदाचित प्राणायाम की ही कोई गति है, जिससे बैठे-बैठे अकस्मात् इनका शरीर गिर गया है, परन्तु कुछ समय बाद सभी लोगों को उनके देहावसान की चटना पर विश्वास करना ही पड़ा।

भाई अमरनाथ जी ने देह-त्याग अपने ग्राम में ही किया था। फलस्वरूप विद्युत की भांति इस समाचार ने सारे गाँव फैलकर सभी को आश्चर्यचकित कर दिया। सहसा सुनकर किसी को विश्वास नहीं होता था कि सचमुच ऐसा हो गया होगा। झुण्ड के झुण्ड घटना की

सत्यता जानने उस स्थान पर पहुँचने लगे। भाई अमरनाथ जी स्वभाव से ही सबको प्रिय थे। मृदुभाषी थे। इसके अतिरिक्त स्वयं कष्ट उठाकर भी सदैव परोपकार के लिए तत्पर रहते थे। उनके हृदय में लोक-हित की बड़ी भावनाएँ रहा करती थीं। अत: स्वाभाविक ही सभी को उनकी इस आकस्मिक मृत्यु का बहुत दु:ख था। उस दिवंगत महान् आत्मा के लिए सभी का हृदय शोकाकुल था एवं उनके महान् गुणों का स्मरण सबको हो रहा था। इसके साथ ही साथ एक और विचारधारा भी लोगों के मन में उठ रही थी, वे लोग मन में सोचते थे- ये इतने बड़े योगिराज के शिष्य थे। इन्होंने देह-त्याग तो अपने संकल्प से किया है, किन्तु कोई विशेष चमत्कार दिखाई नहीं दिया और न ही इनका कपाल-भेदन हुआ है।

क्रमश: अन्तिम संस्कार के लिए उनकी शव यात्रा की तैयारी की गई और उनके मृत शरीर को दाह-संस्कार के हेतु श्मशान-भूमि में ले जाया गया। चिता निर्माण हो जाने पर उनका शव चिता में रख दिया गया। ज्योंही अग्नि संस्कार प्रारम्भ हुआ, सभी एकत्रित ग्रामवासियों ने बड़ा भारी आश्चर्य देखा, उनकी चिता पर सहसा अनेकों प्रकार के वाद्य-यन्त्र बजने लगे। घण्टे, घड़ियाल, शंख, मृदंग आदि सभी बाजों की ध्वनियाँ चिता पर गूँज उठीं। परन्तु बजाने वाला कौन है? इसकी चेष्टा करने पर भी ज्ञात नहीं होता था, ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई वैदिक-मन्त्रों का गायन कर रहा हो। दिव्य आरती उतारी जा रही हो। चिता पर बजने वाले वाद्य-यन्त्रों की ध्वनि धीरे-धीरे ऊपर उठती गई और शनै:-शनै: अन्तरिक्ष में विलीन हो गई।

जो योगाभ्यासी वहाँ उपस्थित थे, जिनको अन्तदृष्टि प्राप्त थी, उन सभी ने खुली आँखें देखा कि भाई अमरनाथ जी एक दैदीप्यमान श्वेत वर्ण के दिव्य विमान में विराजमान हैं एवं उनका स्वरूप चतुर्भुजी विष्णु भगवान जैसा है। उनके विमान के आस-पास बहुत से दिव्य वाद्य-यंत्र बज रहे हैं। विमान पर दिव्य पुष्पों की वृष्टि हो रही है। श्री अमरनाथ जी ने चिताभूमि पर उपस्थित समुदाय को एक बार देखा और कहा- ''मैं अपने परम कृपा निधि सद्गुरुदेव जी की परम कृपा से बैकुण्ठ वासी हो रहा हूँ।'' केवलमात्र ध्यानाभ्यासी ही इस अलौकिक दृश्य को देख सके एवं अमरनाथ जी के उपर्युक्त शब्द सुन सके। देखते-देखते अमरनाथ जी का विमान ऊपर उठते-उठते अन्तरिक्ष में विलीन हो गया। यह सब दृश्य देखकर आश्चर्यचकित हुए ग्रामवासी अपने-अपने घरों को लौटने लगे एवं गद्गद्-कण्ठ होकर ''योग-योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी की जय'' इस प्रकार की जय-जयकार की ध्वनि बारम्बार मुख से उच्चारण करने लगे। इस घटना को जानने वाले ग्राम निवासी अब भी उस ग्राम में उपस्थित हैं।

पूर्व प्रकाशित से आगे-

योगेश्वर चरित्र-माला

योगी श्री कृष्णानन्द जी

पूज्यपाद श्री गुरुदेव जी द्वारा

हरिद्वार एवं ऋषिकेश जैसी पावन-स्थलों की यात्रा करने वाले प्राय: सभी तीर्थ-यात्री स्वर्गाश्रम गीता भवन एवं परमार्थ-निकेतन जैसे प्रेरणाप्रद स्थलों से परिचित हैं। ऐसे महानुभावों को कदाचित् ध्यान होगा कि परमार्थ-निकेतन एवं गीता भवन के मध्य एक छोटा सा आश्रम स्थित है। उस आश्रम के संस्थापक एक संन्यासी महात्मा हैं, उन्हीं का चरित्र मैं यहाँ लिखने जा रहा हूँ। वे महात्मा ही योगी कृष्णानन्दजी हैं। अब तो वे संन्यासी हो गये हैं। इस आश्रम को ग्रहण करने से पूर्व इन्होंने योग-दीक्षा उन्हीं योग-योगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज से प्राप्त की, जो मेरे श्री सद्गुरु महाराज हैं। इस संबन्धानुसार यह मेरे गुरु-भाई होते हैं, अत: इनके विषय की कई अद्भुत घटनाओं का मुझे प्रत्यक्ष अनुभव है।

भाई कृष्णानन्द जी का पूर्व नाम श्री रतनलाल था। इनका जन्म पवित्र अग्रवाल घराने में, मुजफ्फरनगर नामक नगर में हुआ था। रतनलाल जी घरेलू झगड़ों से विरक्त होकर भ्रमणार्थ ऋषिकेष आये थे। इनके घर में कथा-कीर्तन, सत्संग, महात्माओं के सदुपदेश समय समय पर हुआ करते थे। कुछ पूर्व संस्कार इस प्रकार के थे कि इनके मन में तीव्र वैराग्य उत्पन्न हो गया और इन्हें घरेलू झंझटों का सदा के लिए त्याग ही उचित लगा। ऐसा निश्चय कर उत्तराखंड की यात्रा करने के लिए चले गये। संसार छोड़कर चले थे, अत: जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त करने का मार्ग दिखाने वाले किसी पूरिपूर्ण योगाचार्य की आवश्यकता अनुभव करने लगे।

उत्तराखण्ड की यात्रा से विचरते-विचरते रतनलाल जी फिर ऋषिकेष आ पहुँचे। अब इनके मन में यह तीव्र लगन लग गई थी कि उनको किसी परिपूर्ण सद्गुरुदेव जी के दर्शन प्राप्त हों। इसी प्रकार के योगाचार्यों की खोज में इनका यत्र-तत्र भ्रमण चलता रहा। बड़े-बड़े मण्डलेश्वरों एवं मठाधीशों के दर्शन भी इनके मन को शान्ति-लाभ न करा सके। उपदेष्टा तो सभी थे, किन्तु किसी ऐसे योगेश्वर्य सम्पन्न सद्गुरुदेव के दर्शन नहीं मिले, जो— ''दिव्यं ददामि ते चक्षु: पश्य मे योगेश्वर्यम्''— को प्रतिज्ञापूर्वक कहता हुआ अनुभूति-मार्ग में प्रविष्ट करा सकता। इतना घूमने पर भी जब इन्हें मनोनुकूल योगिराज के दर्शन प्राप्त नहीं हो सके, तो इन्हें स्वाभाविक ही निराशा होने लगी। अब उनका यह विचार बनने लगा था— ऋषिकेश में उनको कोई पथ-प्रदर्शक नहीं मिलेगा। अत: अब घर ही क्यों नहीं लौट चलें? व्यर्थ भगवा-वस्त्र पहिने साधु बन भिक्षाटन करने से क्या लाभ? इससे तो घर पर व्यापार आदि सांसारिक कार्य करते हुए ही जीवन व्यतीत कर लेंगे।

एक दिन इसी विचार में निमग्न, निराश हुए रतनलाल जी रेल्वे स्टेशन की ओर जा रहे। अनन्त: घर लौट जाने का ही निश्चय उन्होंने कर लिया था। मार्ग में अचानक उनके नेत्रों ने एक स्थान पर लिखा देखा— श्री योग साधन आश्रम। चलते-चलते पैर रुक गये, मानो हठात् किसी ने रोक लिया हो। वह जगदात्मा भी बिल्कुल निराश करके ही शायद प्राणी केा अभीष्ट प्राप्त कराता है। योग-साधन को अभीष्ट प्राप्त कराता है। योग-साधन आश्रम शब्द पढ़ते ही इनको लगा मानो जो खोज हे थे, वह मिल गया। आश्रम के भीतर प्रवेश करके सब कुछ ज्ञात करने की तीव्र इच्छा इनके मन में जाग उठी। उन्हें पूर्ण विश्वास सा हो रहा था कि अवश्य ही कोई परिपूर्ण योगिराज इस आश्रम में निवास करते हैं। ऐसा विचार करके भाई रतनलाल जी ने आश्रम में धीरे-धीरे प्रवेश किया। सामने ही आराम कुर्सी पर विराजमान श्री प्रभुजी के दर्शन कर इनको लगा- जिसकी खोज थी, वह मिल गये हैं। अन्य आश्रमों से भिन्न इस प्रकार के पवित्र वातावरण वाले आश्रम में प्रवेश करने का रतनलाल जी का यह प्रथम अवसर था। सायं काल लगभग पाँच बजे का समय था, यह आश्रम का सत्संग का सयम रहा करता था। इस कारण श्री प्रभुजी के आस-पास बैठे सत्सगी भाई बहिन ध्यानादि की कुछ चर्चायें कर रहे थे। दूसरी ओर एक भाई श्री प्रभुजी के चरण कमलों में बैठकर दूर नगरों में रहने वाले सत्संगियों के आये पत्रों को पढ़कर सुना रहे थे। उन पत्रों में बड़े-बड़े ध्यानानुभव लिखे थे। यह सब देख सुनकर रतनलाल जी का हृदय श्री प्रभु जी के पावन चरण-कमलों की ओर और भी अधिक आकर्षित हुआ, उन्होंने अत्यन्त विनम्र भाव से श्री प्रभुजी से प्रार्थना की- प्रभुजी! आप करुणासागर हैं। कृपा करके मुझे भी शरण में ले लीजिये।

भाई रतनलाल जी की होनहार अच्छी थी। इनकी इस विनम्र प्रार्थना पर श्रीप्रभु जी मुस्करा पड़े और मुखारविन्द से स्वीकृत सूचक ''अच्छा'' शब्द निकल गया। दूसरे दिन साधारण पत्र-पुष्प स्वीकार कर अनन्त शक्ति सम्पन्न भी प्रभुजी ने भाई रतनलाल को शक्तिपात-दीक्षा दी। जिसके फलस्वरूप उनमें बड़ी तीव्रगति से शक्ति संचरित हुई। श्री प्रभुजी ने उन्हें कुण्डलिनी-योग का उपदेश देकर मूलाधार कमल में श्री गणपति जी का ध्यान करने का आदेश दिया। अब भाई

रतनलाल जी श्री प्रभुजी के आदेश के अनुसार अपना ध्यानाभ्यास करने लग गये और उत्तरोत्तर प्रगति करने लगे। जैसे-जैसे ध्यानाभ्यास परिपक्व होता गया, वैसे-वैसे ही सूलाधार कमल के प्रत्यक्ष दर्शन उनको बने रहने लगे। कुछ ही समय में भाई रतनलाल जी का आश्चर्यजनक रूप से काया-कल्प ही हो गया। वह हर समय ध्यानस्थ रहने लगे। पान खाने और बीड़ी पीने का इनका विशेष व्यसन भी ध्यान की उच्चतम् स्थिति में स्वत: ही छूट गया। उन्हें कण कण में मूलाधार कमल के दर्शन निरन्तर बने रहने लगे। सारांश यह कि संसार भूल गया, केवल ध्यान में दीखने वाले की स्मृति रहने लगी। भाई रतनलाल जी की ऐसी उच्च-स्थिति इतनी शीघ्र बन गई कि सारे आश्रमवासी आश्चर्य करने लगे। उनके मुख-मण्डल पर हर समय एक विशेष तेज विराजमान रहने लगा। ध्यान की उच्चतम स्थिति में उनको हिमालय के अनेक सिद्धों के दर्शन एवं कई प्रकार के वरदान प्राप्त हुए। यह बड़े ही आश्चर्य का विषय था कि दो मास पूर्व का एक साधारण गृहस्थ व्यक्ति, इतने अल्प समय में ही अत्यन्त उच्चकोटि का सन्त बन गया था। आश्रमवासी प्राय: देखा करते थे- ध्यानस्थ रतनलाल जी के शरीर पर से निस्संकोच बिच्छू व सर्प गुजर जाते हैं, परन्तु उनको किसी प्रकार की भी चेतना नहीं हो रही है।

चक्कू की तलाश

लीलाप्रिय आनन्दकन्द श्री प्रभुजी यदा-कदा अपने बालकों का मान बढ़ाने के लिए खेल किया करते थे। खेल-खेल में हीं सर्व साधारण के समक्ष अपने बालकों की अद्‌भुत शक्तियों का प्रदर्शन कर दिया करते थे। फलस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति जान लेता था कि इन बालकों के भीतर किसी महती शक्ति का प्रवेश है। एक बार श्री प्रभुजी ने एक ऐसा ही खिलवाड़ किया।

श्री प्रभुजी मध्याह्न-काल में भोजन करके उठे थे। भाई रतनलाल जी ध्यान से उठकर दीवार के एक कोने को पकड़े, इस आशा में खड़े थे कि श्री प्रभुजी के आने पर चरणारविन्दों में नमस्कार करूँगा। वह उसी द्वार मार्ग में खड़े थे, जिससे प्रभुजी अन्दर जाया करते थे। आज श्री प्रभुजी को खिलवाड़ करते थे। आज श्री प्रभुजी को खिलवाड़ सूझा- अत: नित्य वाले द्वार से न जाकर दूसरे ही द्वार से धीरे से अन्दर जाकर अपने सिंहासन पर बैठ गये। श्री प्रभुजी ने ऐसा इसलिये किया था कि जिससे रतनलाल जी उनको देख न पाएँ और यही समझते रहें कि अभी श्री प्रभुजी भोजन ही कर रहे होंगे। किन्तु ऐसा नहीं हो सका, जैसे ही श्री प्रभुजी सिंहासन पर विराजमान हुए त्योंही अकस्मात् रतनलाल जी दीवार से हटकर श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में पड़े दिखाई दिए। वहाँ पर बैठे सभी सत्संगी भाइयों ने इस आश्चर्य को देखा कि किसी अव्यक्त शक्ति ने उनके मन को घुमाकर श्री प्रभुजी के चरणार्विन्दो की ओर आकर्षित कर था। सभी आश्चर्य में पड़ गये और अत्यन्त विनयपूर्वक श्री प्रभु जी के चरण-कमलों में जिज्ञासा प्रकट करने लगे- प्रभु जी! रतनलाल जी को यह बोध किस प्रकार हुआ?

श्री प्रभुजी ने कहा- रतनलाल में यह सामर्थ्य है कि वह इस प्रकार की सब बातों को जान सके। श्री प्रभुजी के मुखारविन्द से यह वचन निकलने पर उन सभी के मन में यह लालसा उत्पन्न हुई कि वे कोई ऐसी विलक्षण घटना देखें जिससे इस कथन की पुष्टि होती हो।

अन्तर्यामी श्री प्रभुजी उन लोगों के मन के भाव समझ गये और एक ऐसा ही अवसर उपस्थित हो गया। आश्रम का एक चाकू खो गया था। कई घण्टे से उसकी तलाश की जा रही थी, परन्तु मिल ही नहीं रहा था। सहसा उन सभी आश्रमवासियों के मन में यह अभिलाषा हुई कि रतनलाल जी अपनी ध्यान दृष्टि से उस चाकू के स्थान की तलाश करें। उन सबके मानस-अभिप्राय को समझकर श्री प्रभुजी थोड़ा हँसे और भाई रतनलाल जी से कहने लगे- अरे रतन! जब इन सबकी यही इच्छा है, तो तू उस चाकू की तलाश कर ही दे। श्री प्रभुजी की आज्ञा पाते ही रतनलाल जी उठे। नेत्र बन्द किये हुए ही उस स्थान पर पहुँच जहाँ पर वह चाकू पड़ा हुआ था। आँखें बन्द ही किये उन्होंने वह चाकू उठाकर सबको दिखा दिया। इस घटना से वे अचरज में पड़े उन सभी लोगों ने यह जान लिया कि भाई रतनलालजी में कितनी बड़ी शक्ति है।

अस्तु, इस प्रकार के अभ्यास की घटनायें भी घटती रही हैं। अपने अन्दर इस प्रकार के दिव्य प्रकाश को देखकर भाई रतनलाल का अभ्यास और वैराग्य उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। अपने ध्यानाभ्यास में उन्होंने कई प्रकार के दिव्य-मन्त्र, गुप्त क्रियायें और दिव्य औषधियों को सिद्धों के द्वारा प्राप्त किया था। उनकी निर्विचार समाधि की निर्मलता में उत्तरोत्तर वृद्धि होने लगी। साधक की प्रारम्भ से जो अनुभव होते हैं उनमें यत्किंचित् अपने मन का भी समावेश रहा करता है। अत: उस काल के अनुभव पूर्णत: सत्य नहीं हुआ करते हैं। उत्तरोत्तर अभ्यास के पश्चात् ही अनुभवों में पूर्ण सत्यता आ जाती है।

निजानुभूति की एक अद्‌भुत घटना

उन दिनों आनन्दकन्द श्री प्रभुजी ने भाई रतनलाल जी को और मुझे ऋषिकेश आश्रम में रहने का आदेश दिया था। इसी काल में श्री प्रभुजी ने मुझे खेचरी-मुद्रा का अभ्यास कराना आरम्भ किया। इस मुद्रा का अभ्यास कराना आरम्भ किया। इस मुद्रा का अभ्यास करने के लिये आवश्यक तीन प्रकार की शिक्षाएँ श्री प्रभुजी ने मुझे दीं-दोहन, चालन और छेदन। सर्वप्रथम मैंने काफी दिनों तक जिह्वा के दोहन का अभ्यास किया था, तत्पश्चात् चालन-क्रिया का भी अभ्यान पर्याप्त समय तक चला। दोहन और चालन का अभ्यास यथावत् हो चुकने पर श्री प्रभुजी ने मेरी जिह्वा के अधोभाग के तन्तु का छेदन बांस की ताड़ी से कर दिया और निरन्तर इसका अभ्यास करने का आदेश दे दिया। श्री प्रभुजी के आदेशानुसार मैं शनै:-शनै: जिह्वा छेदन उसी प्रकार बांस की ताड़ी से करता रहा, उसके फलस्वरूप मेरी जिह्वा बढ़ती गई।

कुछ दिन बाद श्री प्रभुजी कुछ काल को एकान्तवास के उद्देश्य से कनखल चले गये और वहाँ जाकर छोटे अखाड़े के बगीचे में ठहरे। भाई रतनलाल जी और मैं श्री प्रभुजी के आदेशानुसार योग साधन-आश्रम ऋषिकेश में ही रहकर नियमित ध्यानाभ्यास किया करते थे। यद्यपि श्री प्रभुजी की उपस्थिति में ही मेरा खेचरी-मुद्रा का अभ्यास काफी बढ़ गया था, तथापि खेचरी-मुद्रा हठयोग की एक कठिन क्रिया है एवं छेदन-काल में कुछ कष्ट भी होता रहता है। अत: मैं ध्यानाभ्यास में इतनी देर नहीं बैठ पाता, जितना कि भाई रतनलाल जी बैठ जाया करते थे। फिर भी थोड़ी-बहुत नियमित दिनचर्या चलती ही थी। एक दिन अभ्यास में बैठने पर मुझे खेचरी-मुद्रा के विलक्षण गुणों का अनुभव हुआ एवं खेचरी सिद्धि कर लेने वाले सिद्धों के दर्शन भी हुए। वे सभी सिद्धगण आकाश-गमन करते हुए दीखते थे, उनका स्वरूप बड़ा ही दिव्य एवं तेजस्वी था। उनमें से कुछ सिद्ध जल की सतह पर इस प्रकार चल रहे थे, मानो उनके चरणों का स्पर्श जल से हो ही न रहा हो। यह सभी महापुरुष चिरंजीवी प्रतीत होते थे, क्योंकि उनके शरीर हजारों वर्ष पूर्व के प्रतीत होते थे। इन सिद्धजनों के दर्शन करते-करते आकाश-वाणी के समान मुझे एक आवाज सुनाई दी— देखो, यह सब महापुरुष खेचर-पुरुष हैं अर्थात् खेचरी-मुद्रा की सिद्धि के प्रभाव से सिद्ध हो गये हैं। श्री प्रभुजी के कनखल चले जाने के पश्चात् मेरा खेचरी अभ्यास कुछ कम हो गया था। अत: इन सब सिद्धों के दर्शन करते हुए ही मुझे आनन्दकन्द श्री प्रभुजी की वाणी सुनाई दी। मानो वे कह रहे हैं— तुमने खेचरी का अभ्यास छोड़ दिया, अन्यथा तुम भी इसी श्रेणी के व्यक्ति बन गये होते। श्री प्रभुजी के ऐसे वचन सुनकर मुझे मन ही मन स्वयं पर बड़ा रोष आया और विचार करने लगा— मैंने यह कितनी भारी भूल की है। यदि श्री प्रभुजी के आदेश का अक्षरश: पालन किया होता, तो अवश्य ही अब तक खेचरी सिद्ध हो जानी चाहिए थी। यह तो बड़ी भारी भूल हो गई। मन की इस प्रकार की क्लेशित-स्थिति में ही जिह्वा का छेदन करना प्रारम्भ किया। बांस की ताड़ी से यह छेदन बहुत धीरे-धीरे बनता है। अत: अकस्मात् मेरे मन में विचार आया— बांस की ताड़ी से तो छेदन विशेष बन नहीं रहा है, बड़ी धीरे-धीरे छेदन हो पायेगा। हजामत बनाने के ब्लेड से छेदन क्यों न कर लिया जाय, उससे छेदन एकदम हो जायेगा। ऐसा विचार आने पर मैंने शीघ्रही उने कार्यान्वित करने का विचार कर लिया और एक ब्लेड लेकर बड़े साहस के साथ अपनी जिह्वा के नीचे का तन्तु काफी वेग से काट दिया। वेदना तो हुई, परन्तु शीघ्र ही खेचरी सिद्ध कर लेने की धुन में मैं फिर दुबारा ब्लेड चलाने का विचार कर ही रहा था कि अकस्मात् अनुभव हुआ कि श्री प्रभुजी बड़ी रोष-मुद्रा में ताड़नात्मक दृष्टि से मुझे देख रहे हैं और एकदम ब्लेड छीनकर चले गये।

मैं अपने इस विचित्र अनुभव पर विचार कर ही रहा था कि श्री प्रभुजी के रुष्ट होने का क्या कारण हो सकता है कि सामने से भागते हुए भाई रतनलाल जी आते दीखे, मैं और भी अधिक आश्चर्य में पड़ गया। भाई रतनलाल जी अपनी समाधि से जल्दी ही उठ कर भागे आये थे और आते ही एकदम मुझसे कहने लगे– अरे भाई जी! आपने यह क्या कर लिया है? परम कृपानिधि श्री प्रभुजी ने अभी मुझे आदेश दिया है— जाओ, चन्द्रमोहन को देखो। वह यह क्या कर रहा है? अन्यथा लोग कहा करेंगे कि योगियों के बच्चे गूँगे हुआ करते हैं। जिस समय भाई रतनलाल जी मेरे पास पहुँचे थे, उस समय मेरे मुख से पर्याप्त रक्त बह रहा था और मैं बोल सकने में सर्वथा असमर्थ था। वह भी सहसा निश्चय न कर सके कि ऐसी स्थिति में किया क्या जाये। फलस्वरूप ही इन्हीं विचारों में मग्न भाई रतनलाल जी ध्यानस्थ हो गये। ध्यान में ही आनन्दकन्द श्री प्रभुजी ने उन्हें एक स्थान दिखलाया, जहाँ पर एक जड़ी लगी हुई थी। उस जड़ी की ओर संकेत करते हुए श्रीप्रभुजी ने उन्हें आज्ञा दी— तुम इस स्थान पर आकर यह जड़ी उखाड़ कर ले जाओ। इस जड़ी को घोंटकर इसके जल के गरारे कराओ, रक्त बहना शीघ्र ही रुक जायेगा। भाई रतनलाल जी ने श्री प्रभुजी की इस आज्ञा का पूर्णत: पालन किया। वैसा करने से मेरी जिह्वा का घाव बहुत शीघ्र ठीक हो गया। इस घटना के बाद जिस समय मैं श्री प्रभुजी के दर्शनार्थ कनखल गया तब उन्होंने आज्ञा दी— तू अब जिह्वा का छेदन करके कभी भी खेचरी नहीं करना।

पूर्व प्रकाशित से आगे—

योगेश्वर चरित्र माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

वन तीर्थ यात्रा

हमारे चरित्रनायक श्री प्रभुजी हरिद्वार आदि के भ्रमण के बाद अपने पूर्व परिचित विद्यार्थी जयराम को साथ लेकर मुरादाबाद पहुँचे। कुछ दिन मुरादाबाद में निवास करते रहे और कई स्थानों पर धर्मोपदेश करते रहे। एक दिन श्री प्रभुजी राम गङ्गा नदी के तट पर विद्यार्थी जयराम को कुछ योगोपदेश कर रहे थे। उस उपदेश के योग में अष्टविध ऐश्वर्य का कुछ वर्णन आया, तो उसमें श्री प्रभुजी ने विद्यार्थी जयराम को समझाया कि— भाई देखो! यह अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व, वशित्व, यत्रकामावशायित्व, ये सब योगियों की निधि हैं। योगी इनको पा करके निहाल और कृतार्थ हुआ करते। इन ऐश्वर्यो को पा करके योगी 'कर्तुम कर्तुम् एवं अन्यथाकर्तुम्' की ताकत वाला बन जाया करता है। वस्तुत: योग ही योगी की अमरनिधि है, इस विद्या को प्राप्त किये बिना मनुष्य का जीवन निरर्थक है। वही मनुष्य धन्य है, जिसने जन्म धारण करके योग-विद्या में प्रवेश पा लिया। श्री प्रभुजी ने अपने इस योगोपदेश के प्रकरण के अन्दर कुछ कर्तुम-कर्तुमन्यथा कर्तुम् की शक्ति वाले महापुरुषों का जिकर कर रहे थे। इस प्रकरण को सुनकर नगरवासी किसी सत्संगी ने हाथ जोड़कर श्री प्रभुजी से प्रार्थना की कि महाराज! यहाँ से थोड़ी दूर पर जिला नैनीताल में काशीपुर नामक एक स्थान है, वहाँ से कुछ ही दूरी पर 'वनतीर्थ' नाम का एक स्थान है। जिसमें एक योगिराज महात्मा निवास करते हैं, वह अपने पास कुछ गायों को रखा करते हैं। प्रात:काल होते ही वे अपनी गायों को चराने के लिए जंगल की ओर भिजवा दिया करते हैं। उन महात्माजी का प्रभाव इतना विलक्षण है कि वे गायें सारे जंगल में सब दिन घास और पानी ग्रहण करके अपने आप ही शाम को महात्मा जी के स्थान पर आ जाया करती हैं। सबसे बड़ी आश्चर्य की बात यह है कि इस जंगल में शेर व चीते आदि रहते हैं, किन्तु योगिराज महात्मा जी के प्रभाव से उन गायों को कोई कुछ नहीं बिगड़ता। कभी-कभी तो यहाँ तक हो जाता है कि शाम को गायें जिस समय पर लौटती हैं, तो उनके साथ-साथ शेर की बकरियों की तरह चला आया करता है। यह सब उन महात्मा जी की योग-शक्ति का प्रभाव है। महात्मा जी के आश्रम में अष्ट-सिद्धि नव-निद्धि का वास हर समय रहा करता है। उनके अलौकिक कार्य बिना किसी प्रयास के अपने आप ही सिद्ध होते रहते हैं। आश्रम में सब प्रकार से सुख और शान्तिका वास रहता है। वनतीर्थ की इस प्रकार की महिमा उस नगर-निवासी सत्संगी से सुनकर श्री प्रभुजी ने वनतीर्थ जाने का विचार किया और कुछ ही दिनों में इधर-उधर घूमते हुए काशीपुर के पास वनतीर्थ नामक जंगल में जा पहुँचे। वहाँ जाकर क्या देखा कि जिन महात्मा जी की बड़ाई सुनी थी, वे तो वहाँ नहीं हैं, किन्तु उनके स्थान पर लक्ष्मणदास नामक एक वैरागी महात्मा कृत्रिम अभिनय से अपने आपको पुजवा रहा है। लक्ष्मणदास को श्री प्रभुजी भली प्रकार जानते थे। श्री प्रभुजी ने लक्ष्मणदास को पहचानकर कहा कि अरे लक्ष्मणदास! तुमने यह क्या प्रपंच फैला रखा है? तुम तो एक अति साधारण व्यक्ति हो, तुम्हें साधारण ही रहना चाहिए था। इतना-लम्बा-चौड़ा प्रपंच फैलाना तुम्हारे लिए उचित नहीं। क्या तुम्हें इस बात का ज्ञान नहीं कि अमुक योगिराज महात्मा जी ने जयपुर में अपने शरीर को छोड़ दिया था और तुमने ही उनके शव को नदी में बहा दिया था। अब तुम स्वयं ही उनके नाम पर योगिराज बन बठे हो। क्या जन-समाज के साथ यह धोखा नहीं है? लक्ष्मणदस वैरागी ने जब श्री प्रभुजी के मुख से ये बातें सुनी, तो वह तत्काल पहचान गया कि यह कोई पूर्ण योगिराज हैं, अब इनके सामने मेरा पापजाल और दम्भ नहीं चलेगा। यह विचारकर वह तत्क्षण चरणों में गिर गया और प्रार्थना की कि हे प्रभो! आप अन्तर्यामी हैं, आपसे क्या छिपा है? जो कुछ आपने बतलाया वह सब बिल्कुल सत्य घटना है। श्री महाराज जी ने गङ्गा-किनारे ही शरीर को छोड़ दिया था और उनकी अन्त: क्रिया करके मैंने ही उनके शरीर को नदी में प्रवाहित कर दिया था। मैंने यह प्रपंच उनके भक्तों के हित के लिए किया था। अब आप मुझे अपने चरणों में शरण दे दें और पवित्र योग-मार्ग का उपतेश करें, जिससे मेरा कल्याण हो। श्री प्रभुजी ने उसकी विनम्र प्रार्थना को सुनकर योग का उपदेश दिया और यम-नियमों के पालन का आदेश देकर श्री प्रभुजी जयपुर की ओर चले गये। लक्ष्मणदास वैरागी श्री प्रभु जी की चरण-सेवा में जयपुर तक साथ गया एवं वहाँ से आशीर्वाद प्राप्त करके वनतीर्थ को लौट आया और वहाँ आकर श्री प्रभुजी के आदेशानुसार योग की अपनी कठोरतम् साधना में लग गया है। योग-दर्शन के भाष्यकार भगवान व्यासदेव जी लिखते हैं- ''स तु सदैव मुक्त: सदैव ईश्वर: इति।'' अर्थात् वह पुरुष हमेशा ही मुक्त है, हमेशा ही ईश्वर है, उनका बंधन कभी हुआ ही नहीं। अर्थात् जीव-भाव को वह कभी भी प्राप्त नहीं हुए।

इस प्रकार योग-दर्शन एवं सांख्या-दर्शन दो रूपों में होते हुए भी एक ही हैं, जो इनके सिद्धान्तों के अनुसार साधना करते हैं, अवश्य ही प्रकृति-पुरुष के भेद को जानकर अपने स्वरूप में स्थित हो जाते हैं। ऐसे जन ही संसार में सराहनीय एवं वन्दनीय हैं।

पूर्व प्रकाशित से आगे—

योगेश्वर चरित्र माला

योगयोगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

योग योगेश्वर सद्गुरुदेव महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज ने अपने सवांई ग्राम निवास काल में किन-किन महान योगैश्वर्यों को प्रकट किया, उनका कितना महान योगैश्वय था, इस बात को प्रत्येक साधक अपने मन में समझकर परम श्रेयानुगामी बने इसके लिए हम सवांई ग्राम में उनके द्वारा प्रकट की गई। महान यौगिक लीलाओं को तुम सबको समझा देना चाहते हैं, जो कि 'सिद्धयोग' के आगामी ३-४ अङ्कों में क्रमश: प्रकाशित होतीं रहेगी जिनसे सबका भला होगा।

सवांई ग्राम के चमत्कारिक चरित्र

सद्गुरुदेव योग योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज की अनुकम्पा से मुझे सवांई ग्राम में निवास करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यह छोटा सा गांव कितना बड़ा भाग्यशाली है इसका वर्णन करना लेखनी के बाहर है। सवांई बहुत छोटा सा गाँव है। इसकी जनसंख्या दो या तीन हजार से अधिक नहीं किन्तु फिर भी इसमें बड़े-बड़े आदमियों का निवास है। इस गांव के वाशिंदे अच्छे ऊँचे ऊँचे कर्मचारी हैं। पोस्ट आफिस, टेलीफोन व बिजली का सुप्रबन्ध है। सबसे बड़ी सौभाग्य की बात यह है कि इस गांव की पवित्र भूमि में नैपाल हिमालय से लौट कर योग योगेश्वर सद्गुरुदेव प्रभु श्री रामलाल जी महाराज ने कुछ समय निवास किया था। मन को बड़ा आश्चर्य होता है, कि कहां सिद्धों से सेवित हिमालय जिसमें हजारों वर्षों की उम्र वाले तत्व विजयी सिद्ध योगिराज लोग निवास करते हैं और कहां यह एक साधारण सा गांव, जहां श्री प्रभुजी ने आकर निवास किया था। यद्यपि श्री प्रभुजी की समस्त जीवन कथाओं का संग्रह करना साधारण कार्य नहीं। उन्होंने एक ही समय में अनेक स्थानों पर कितने ही अद्भुत चरित्र किये। अपनी करुणा-कृपा से सैकड़ों को पूर्णरूपेण कृतार्थ कर हिमालय की कन्दराओं में बैठा दिया। लाखों दु:खी प्राणियों को संकल्प मात्र संग्रह असम्भव नहीं तो दुस्साध्य अवश्य है किन्तु फिर भी इस छोटे से गाँव में आकर के लोकानुग्रह के लिए जो अद्भुत चरित्र किये, उनका यावतसाध्य संग्रह कर सर्वसाधारण के हितार्थ प्रकाशित कर देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। श्री प्रभुजी का जन्म पूर्वी पंजाब अमृतसर में पं. गंडाराम जी ज्योतिषी के घर में हुआ था। महामना पं. गंडाराम जी ज्योतिष के बड़े प्रकाण्ड पण्डित थे। उन्होंने अपने ज्योषित विद्या के प्रभाव से छोटे बड़े सभी व्यक्तियों में ऊँचा सम्मान प्राप्त किया था। श्री प्रभुजी के जन्म काल में ही उनके जन्म कालीन ग्रहों को देखकर के पंडित गंडाराम जी ने अपने मन में यह निश्चय कर लिया था कि यह बालक कोई परिपूर्ण जन्म-सिद्ध योगिराज है, और कुछ समय के बाद यह हमारे पास नहीं रह सकेगा। ऐसा ही हुआ भी। श्री प्रभुजी के बाल्यकाल में अनेक अद्भुत घटनायें घटीं। कई एक सिद्ध महात्मा भ्रमण करते थे। अवसर पाकर पं. गंडाराम जी के घर पर भी श्री प्रभुजी के दर्शनार्थ जाया करते थे। श्री प्रभुजी बाल-लीला करते हुए अपने मुखारविन्द से जो भी शब्द निकालते थे वह पूर्ण सत्य होता था। अपनी बाल्य-लीला में श्री प्रभुजी कितनी ही भविष्य की बातें कह देते थे। उन सब बातों का वर्णन कर देना इस छोटे से लेख का प्रस्तुत विषय नहीं। पं. गंडाराम जी ने श्री प्रभुजी को अद्भुतकर्मी बालक जान कर अपने घर रखने के लिए ही अनेक प्रयत्न किये किन्तु किसी में भी वे सफल नहीं हो सके। अवसर पाते ही पंचदस वर्षीय अपनी छोटी सी आयु में ही श्री प्रभुजी अपने घर से निकल पड़े व कुरुक्षेत्र में आकर के विद्याध्ययन करते रहे। श्री पं. गंडाराम जी को भी कर्ण परम्परा से इनके विद्याध्ययन के लिए कुरुक्षेत्र जाने का ज्ञान हो गया। उन्होंने अपने भाइयों को भेज करके कुरुक्षेत्र से श्री प्रभुजी को अमृतसर लौटाने का प्रयत्न किया, किन्तु निष्फल रहे। अपने पिता जी की इस प्रकार की भावनाओं को देखकर श्री प्रभुजी कुरुक्षेत्र से हरिद्वार चले गये। हरिद्वार से कनखल पहुँच करके कुछ समय वहां अध्ययन करते रहे किन्तु वहाँ का भेद भी पं. गंडाराम जी ने तीर्थ यात्रा करने वालों द्वारा पा लिया। फिर उन्होंने श्री प्रभुजी को घर लौटाने का प्रयत्न किया। पं. तीर्थराम जी आदि श्री प्रभुजी के सहोदर भाइयों को भेजा, किन्तु इनमें से कोई भी श्री प्रभुजी के विचारों को न बदल सका और सब असफल होकर लौट आये। अपने लक्ष्य साधन में श्री प्रभुजी ने इस सब बाधाओं को जानकर कनखल विद्यालय को भी छोड़ दिया। पूर्ण विरक्त भाव से इतस्तत: वनों में विचरने लगे। वनों और तीर्थों की काफी समय तक यात्रायें कीं। श्री प्रभुजी के हृदय में तीव्र लगन थी कि वह हिमालय जाकर के उसकी कन्दराओं में रहने वाले योगियों की खोज करें व पूर्ण सद्गुरु को पाकर के योग-विद्या में परिपूर्णता को प्राप्त कर सकें।

बरहन ग्राम व ठाकुरदास पर कृपा

इसी भ्रमण काल में घूमते हुए श्री प्रभुजी हाथरस आये और हाथरस से छोटे-छोटे गांवों में विचरते हुए बरहन गांव में पहुँचे। बरहन में ठाकुरदास नामके एक तपस्वी भक्त निवास करते थे। ये जन्म काल से ही साधु महात्माओं के सेवक थे। पूर्ण विनयी और आदर्श भक्त थे। अकस्मात् श्री प्रभुजी के दर्शन पाकर कृतकृत्य हो गये। कुछ दिनों श्री प्रभुजी ने बरहन में निवास किया। अनेक प्राणियों का भला किया। बरहन के निवास काल में श्री प्रभुजी ने भक्त ठाकुरदास को

अनेक आयुर्वेदिक अनुभूति योग बतलाये; उनकी आशीर्वाद दिया कि तुम दु:खी लोगों की निष्काम चिकित्सा करो। इससे तुम्हारा बहुत पुण्य होगा और लोगों का सब प्रकार से कल्याण होगा। ये चिकित्सा कार्य तुम्हारे घर में भली प्रकार चलता रहेगा। श्री प्रभुजी के कृपामय आशीर्वाद से भक्त ठाकुरदास सब तरह से कृतकृत्य हो गये। उनका घर उसी दिन से धनधान्य पूर्ण हो गया। बरहन में आजकल भी उनके सुपुत्र सब प्रकार से सुयोग्य चिकित्सक हैं।

गांव सवांई में आगमन व लाला प्यारेलाल पटवारी को दर्शन

कुछ दिन बरहन में निवास करने के बाद श्री प्रभुजी विचरते-विचरते सवांई गांव में आये। सवांई गाँव एक छोटा सा गाँव है। इस गाँव में लाला प्यारेलाला नाम के पवित्र पुण्यात्मा पटवारी निवास करते थे। आप जाति के कुलश्रेष्ठ कायस्थ थे। आप जन्म से ही पुण्यशील थे और ईश्वर के परम भक्त थे। ईश्वर भक्तों से ब्राह्मणों से आपका स्वाभविक प्रेम था। जहाँ पर कोई भी सत्संग की कैसी भी चर्चा चलती या ईश्वर का गुणानुवाद होता वहाँ आप स्वभाव से ही उपस्थित रहते थे। महात्माओं के दर्शन व उनकी सेवा लाभ करने में आप अपना अहोभाग्य समझते थे। मन में हर समय सन्तों के दर्शन करने की दृढ़ लगन लगी रहती थी। इसी लगन में लाला प्यारेलाल गांव से बाहर विचर रहे थे तो अकस्मात् सब प्रकार से कल्याण निधि श्री प्रभुजी के दर्शन प्राप्त हुए। लाला प्यारेलाल ने विनीत भाव से श्री प्रभुजी के चरणारविन्द में प्रणाम किया व प्रार्थना करके अपने साथ लिवा लाये व अपने स्थान पर ठहरा लिया। भक्तिभाव से श्री प्रभुजी की सेवा करने लगे सत्संग का प्रभाव शनै:-शनै: बढ़ने लगा। हर समय स्त्री पुरुषों की बालक बालिकाओं की भीड़ निरन्तर बनी रहने लगी। जो जिस कामना को लेकर आता था, वह पूर्ण होती थी। काफी समय तक लाला प्यारेलाल ने श्री प्रभुजी को भक्तिभाव से अपने यहाँ ठहराये रखा। उस समय श्री प्रभुजी रात्रि के समय एक विशेष औषधि का निर्माण किया करते थे और रात्रि में ही कई सौ पुडियां बनाकर रख लेते थे। प्रात:काल होते ही असंख्य मरीज द्वार को घर कर बैठ जाया करते थे। प्रात:काल होते ही श्री प्रभुजी उन पुड़ियाओं को सब प्रकार के मरीजों में बँटवा दिया करते थे। बड़े भारी आश्चर्य कीं बात तो यह थी कि जो प्राणी जिस तकलीफ को लेकर आता था, उन्हीं पुड़ियों से सभी व्यक्तियों को पूरा-पूरा लाभ होता था। औषधियों का तो केवल मात्र बहाना था, वस्तुत: उनकी कृपा ही प्राणिमात्र के कल्याण का कारण थी।

गुफा का निर्माण

कुछ दिन ला. प्यारेलाल के यहां निवास करने के बाद श्री प्रभुजी के मन में एकान्तवास की भाववनायें अधिकाधिक जाग्रत होने लगीं। जिस दिन से ला. प्यारेलाल के स्थान पर श्री प्रभुजी ने निवास किया, उसी दिन से ला. प्यारेलाल के घर में सकल सम्पत्तियाँ वास करने लगीं। घर धन-धान्य से पूर्ण हो गया। सकल व्याधियाँ दूर हो गयीं। विघ्न, बाधाओं का सर्वथा अभाव हो गया। दिन दूना रात चौगुना सम्मान बढ़ने लगा। उन्हीं दिनों ला. प्यारेलाल के घर में उनके पौत्र का जन्म हुआ जिससे ला. प्यारेलाल के मन में खुशी का पारावार न रहा और उन्होंने श्री प्रभुजी के चरण-कमलों में प्रार्थना की कि प्रभो! आप कृपा करके कोई सेवा बतलाइये जिसको करके मैं अपना जीवन सफल बना सकूँ। श्री प्रभुजी ने प्रसन्नता में आकर आज्ञा दी कि हम एकान्तवास करना चाहते हैं। इसलिए तुम एक गुफा तैयार कराओ जिसमें हर प्रकार के जनसमुदाय से हम अलग रह सकें। उसके साथ एक तालाब और बनवाओ जिसमें हम स्नान कर सकें। ला. प्यारेलाल ने श्री प्रभुजी की पवित्र आज्ञा को सुनकर के अपने बाग में मजदूरों को लगा करके व गांव के अन्य प्रेमियों को साथ लेकर के एक तालाब खुदवाया जिमसें श्री प्रभुजी स्नान किया करते थे। तालाब के निकट ही कदम के नीचे गांव के सब लोगों ने मिलकर एक गुफा बनाई।

जिस समय लोग गुफा का निर्माण कर रहे थे, श्री प्रभुजी ने कहा कि यहाँ गुफा नहीं बन सकती किन्तु गांव के लोगों ने उनकी आज्ञा नहीं मानी और प्रेम-विभोर होकर के वहां ही गुफा का निर्माण करने लगे। बहुत प्रयत्नों के साथ गुफा बनकर तैयार हुई। किन्तु जिस समय वे लोग गुफा बनाकर बाहर बैठे तो यकायक गुफा गिर गई। लोगों को बड़ा भारी आश्चर्य हुआ। लोगों के विचार में आया कि गुफा की छत कुछ पतली रह गई होगी, जो काफी मोटी चाहिए थी। इसी विचार से उन्होंने वहीं दुबारा गुफा बनान आरम्भ किया। श्री प्रभुजी ने फिर भी बार-बार मना किया कि यहाँ गुफा नहीं बनेगी किन्तु लोगों को अपने बुद्धिबल पर बड़ा विश्वास था कि हम यहाँ गुफा बनाकर ही रहेंगे। इसी आधार पर लोगों ने बड़े प्रयत्न के साथ उसी स्थान पर दूसरी गुफा और तैयार की किन्तु वह भी कायम न रह सकी और थोड़ी देर बाद गिर गई। लोग मन में विचार करने लगे कि हम बड़ा भारी प्रयत्न करते हैं किन्तु प्रयत्न करने पर भी बराबर विफल होते जा रहे हैं। मालूम पड़ता है कि इस गुफा के बनाने में श्री प्रभुजी का संकल्प नहीं है। इसलिए अबकी बार इनसे पूछ कर ही इनके बताये हुए स्थान पर ही गुफा का निर्माण करें। यह विचार कर श्री प्रभुजी से प्रार्थना की कि हे प्रभो! हमने काफी प्रयत्न कर लिया है किन्तु सफलता नहीं मिल रही है। अब आप कृपा करके जिस स्थान की आज्ञा देंगे उसी स्थान पर हम गुफा का निर्माण करेंगे। लोगों के पवित्र विचारों को जान करके श्री प्रभुजी ने प्रसन्नतापूर्वक बाग के दक्षिणी भाग में नीमों के नीचे कंकरीली जमीन में गुफा बनाने की आज्ञा प्रदान की। लोगों ने बड़े उत्साह के साथ कई दिन लगा करके वहाँ गुफा का निर्माण किया, जो आजकल भी श्री सिद्धगुफा के नाम से प्रख्यात है। इस गुफा में श्री प्रभु जी ने काफी दिन निवास किया। गुफा से लगभग ४० कदम की दूरी पर ला. प्यारेलाल ने एक छोटा सा तालाब तैयार करवा दिया जिसमें श्री प्रभुजी नित्य स्नान किया करते थे। श्री प्रभुजी ने इस तालाब का नाम अमृतकुण्ड रखा।

।। ॐ श्री विश्वेश्वराय नमः।। ॐ श्री रामलाल प्रभवे नमः।। ॐ श्री चन्द्रमोहन सद्गुरुवे नमः

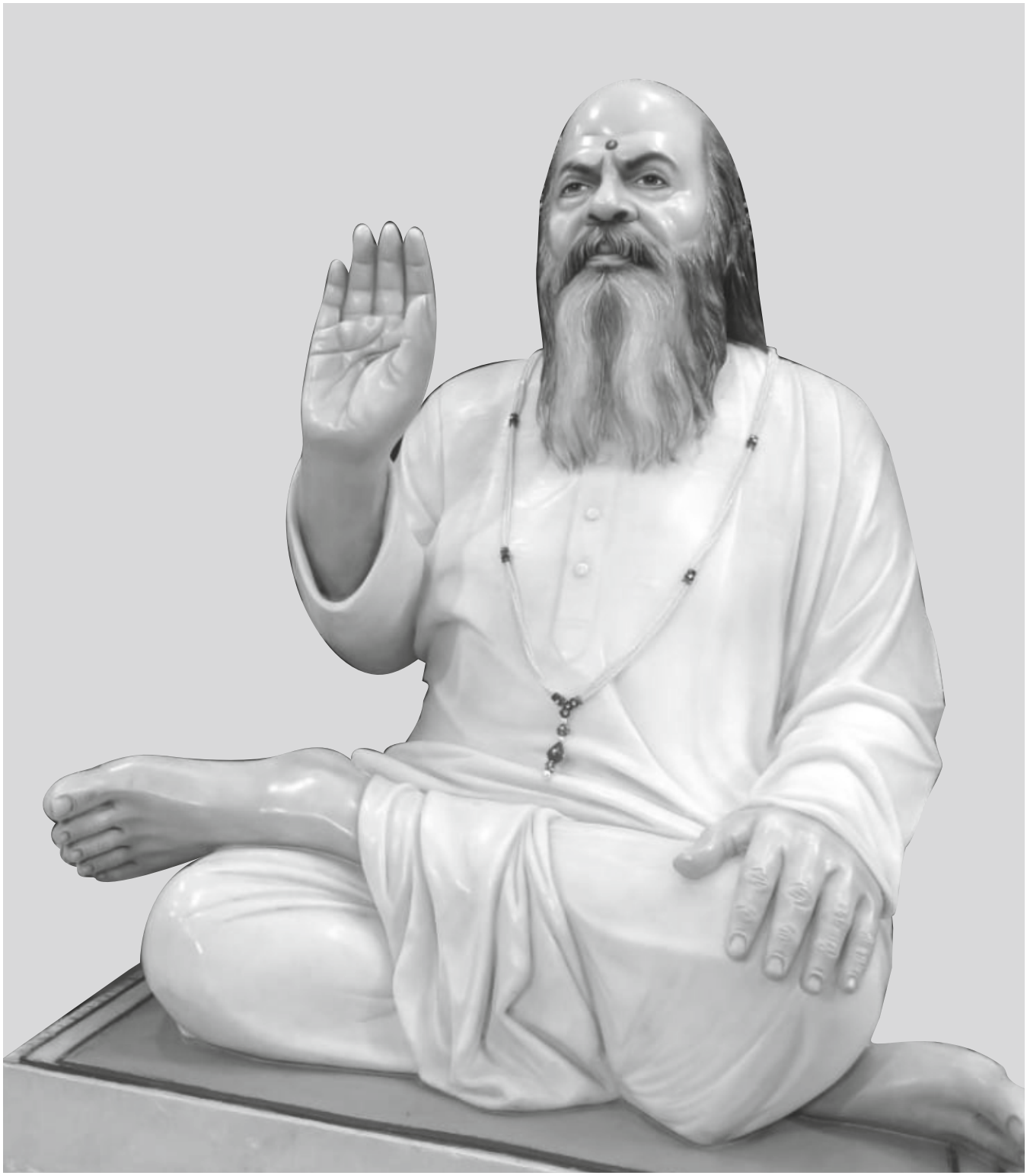

सद्गुरुदेव

इति

योगयोगेश्वर अनन्तविभूषित सद्गुरुदेव
योगीराज श्री चन्द्रमोहनजी महाराज के
स्वहस्त लिखित विशेषलेख
यौगिक प्रश्नोत्तरी एवं योगेश्वर चरित्रमाला